हिंदी साहित्य के इतिहासों का इतिहास

डॉ. किशोरी लाल गुप्त

हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास

डा० किशोरीलाल गुप्त हिन्दी साहित्य के इतिहास के अधिकारी विद्वान हैं। 'शिव सिंह सरोज' (सम्पादन), 'सरोज-सर्वेक्षण' (शोध) एवं 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास (ग्रियर्सन के 'द मार्डन वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' का स-टिप्पण अनुवाद) आपकी एतद्विषयक कृती कृतियाँ हैं । इसी क्रम में प्रस्तुत ग्रंथ हैं। इसमें 'हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास' तो है ही, 'हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की समस्यायें एवं उनका समाधान भी है, जो आगे आने वाले इतिहास-लेखकों का मार्ग-दर्शन करने में निश्चित रूप से सक्षम है ।

प्रस्तुत ग्रंथ में गार्सां द तासी के 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' का प्रथम बार पूर्ण एवं विस्तृत विश्लेषण, सरोज के प्रेरक एवं सहायक काव्यसंग्रह, मातादीन मिश्र कृत 'कवित्त रत्नाकर' तथा महेश दत्त शुक्ल कृत 'भाषा काव्य संग्रह' में दिये गये प्रायः सौ वर्षों से अलभ्य कवि परिचयों का संशोधनात्मक टिप्पणियों सहित उद्धरण, हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रमुख सूत्र, शिवसिंह सरोज का सार मंथन, ग्रियर्सन कृत हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहास का सम्यक् आलोड़न, सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास की योजना एवं इसके छठें भाग का स्थालीपुलक न्याय से विस्तृत समीक्षा, हिन्दी साहित्य के विधी, काव्य क्षेत्र, विभाषा आदि की दृष्टि से लिखित विविध प्रकार के इतिहासों की दृष्टि-विशेषण, हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास के पुर्लेखन की एक नई योजना का प्रस्तुतीकरण है ।

डा० गुप्त का यह ग्रंथ अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं निश्चय ही संग्रहणीय है ।

हि

ड

हास के

(सम्पा

साहित्य

वर्नाक्यू

अनुवाद

क्रम में

इतिहा

इतिहा

भी है,

मार्ग-द

प्र

के प्रमु

सन कृ

सम्यक्

साहित्य

छठें भ

हिन्दी

की दृ

की दृ

के पुलों

ब

निश्चय

हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास

वि.भू. प्रकाशन

साहिबाबाद-२०१००५

रामस्वरूप आर्य

हिन्दी साहित्य
के
इतिहासों का इतिहास

डॉ० किशोरीलाल गुप्त

प्रकाशक : वि.भू. प्रकाशन, ज्ञानी बार्डर,
साहिबाबाद-201005

संस्करण : प्रथम, 1978 ई०

मुद्रक : संजय प्रिंटिंग एजेंसी द्वारा
राजीव प्रेस, मौजपुर, दिल्ली-53

मूल्य : ७५.००

हिन्दी में हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहास ग्रंथ

'मिश्रबंधु-विनोद'

के

प्रणेता

दिवंगत मिश्रबंधुओं को

सादर

अनुक्रमणिका

पुरोवाक्

मेरा डी० लिट्० का शोध प्रबन्ध था—'हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रमुख सूत्रों का विश्लेषण : भक्तमाल (सं० 1649 वि०) से लेकर ग्रियर्सन (सं० 1945 वि०) तक'। यह पर्याप्त बड़ा हो गया था। प्रकाशन की सुविधा से मैंने इसके तीन खंड कर दिए—(1) हिन्दी के प्राचीन कवियों का परिचय देनेवाले ग्रंथों का विश्लेषण, (2) हिन्दी के प्राचीन काव्य संग्रहों का हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन में योग-दान, (3) हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास। प्रस्तुत ग्रंथ के रूप में उक्त तृतीय खंड यहाँ प्रस्तुत है। इसमें मेरे मूल शोध प्रबंध के सातवें और आठवें अध्याय प्रथम दोनों अध्यायों के रूप में स्वीकृत हैं शेष पाँच अध्याय विभिन्न समयों पर लिखे गए हैं और इस ग्रन्थ के अनुकूल होने से इसमें सम्मिलित कर लिए गए हैं।

इस ग्रन्थ का प्रथम अध्याय है—'तासीकृत हिन्दुई साहित्य का इतिहास।' गार्सां द तासी ने फ्रांसीसी भाषा में 'हिन्दुई और हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास' प्रस्तुत किया था। इसका पहला संस्करण दो भागों में प्रकाशित हुआ था। पहले भाग में कवि परिचय था, दूसरे भाग में काव्य-संकलन का फ्रांसीसी अनुवाद। पहला भाग 1837 ई० में एवं दूसरा 1847 ई० में प्रकाशित हुआ था। इसका दूसरा संस्करण तीन भागों में 1870-71 ई० में प्रकाशित हुआ। डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने इस ग्रंथ के हिन्दुई से सम्बन्धित अंश का हिन्दी अनुवाद 1953 ई० में 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' नाम से हिन्दुस्तानी अकेडमी इलाहाबाद से प्रकाशित कराया। इस अध्याय का आधार डा० वार्ष्णेय का उक्त अनुवाद है। विश्लेषण के द्वारा मैंने दिखाया है कि इस ग्रंथ के 358 कवियों में से 47 अन्य भाषाओं—संस्कृत, बँगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी, उर्दू के हैं; 14 तासी की मिथ्या-सृष्टि हैं; 77 विशुद्ध साहित्य को छोड़ विविध वाङ्मय—पाठ्य ग्रन्थ, धार्मिक खंडन-मंडन, ज्योतिष और वैद्यक ग्रंथों के लेखक, साधारण अनुवादक, पत्र-सम्पादक एवं प्रकाशक हैं। शुद्ध साहित्य के रचने वाले 220 हैं, जिनमें 160 तो प्रसिद्ध साहित्यकार हैं, 60 नगण्य कोटि के हैं। आगे इन 160 प्रसिद्ध साहित्यकारों के आधार पर हिन्दी साहित्य के इतिहास की एक रूप-रेखा दी गई है। तासी की रचना स्वयं इतिहास नहीं है, यद्यपि उसने अपने ग्रन्थ को अत्यंत महत्वाकांक्षापूर्ण इतिहास शब्द से अभिहित किया है। तासी की रचना काल-क्रमानुसार न होकर लेखकों के नामों के वर्णानुक्रम से है और इतिहास के लिए काल-क्रमानुसारिता पहली शर्त है। वर्णानुक्रम का अनुसरण ग्रंथ को कवि-कोष बना देता है

और इतिहास के पद से उसे वंचित कर देता है। इस अध्याय की सारी सामग्री यद्यपि डा० वार्ष्णेय के अनुवाद पर आधृत है, पर उसकी संयोजना एवं उसका मूल्यांकन पूर्णरूपेण मौलिक है। तासी तथा उसकी रचनाओं का परिचय इस अध्याय के द्वारा हिन्दी जगत् को पहली बार दिया जा रहा है।

दूसरा अध्याय है—'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास'। 1888 ई० में डा० सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी की पत्रिका के एक विशेषांक में 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटलेचर ऑफ हिन्दुस्तान' प्रकाशित किया, जो दूसरे ही वर्ष 1889 ई० में स्वतन्त्र पुस्तक के रूप में पुनर्मुदित हुआ। यही हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास है। मैंने इस ग्रंथ का हिन्दी रूपान्तर 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' नाम से नवम्बर 1857 में प्रकाशित कराया था। प्रत्येक कवि के विवरण के पश्चात् इसमें अनुवादक की ओर से संशोधनात्मक टिप्पणियाँ लगी हुई हैं। इस ग्रंथ को हिन्दी संसार ने अपनाया और इसके दो संस्करण हो चुके हैं। इस अनुवाद में अनुवादक की ओर से जो भूमिका लगी हुई है, वही इस अध्याय के रूप में पुनः यहाँ प्रस्तुत है।

हिन्दी के प्रथम इतिहास के सम्बन्ध में लोगों की बड़ी भ्रांत धारणा है। बिना मूल ग्रंथों को देखे लोग फतवा देते हैं। बड़े-बड़े दिग्गज लोग शिवसिंह सरोज को हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास समझते हैं। तासी के 'हिन्दुई साहित्य के इतिहास' में तो 'इतिहास' शब्द लगा भी है, उसे यदि मूल ग्रंथ या उसके अनुवाद से अपरिचित लोग केवल उसके नाम के आधार पर प्रथम इतिहास कह दें, तो किसी हद तक क्षम्य हैं। जब मेरा 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' छप रहा था, तब मेरे काशीवासी मित्रों ने इस नाम पर घोर आपत्ति की और इसे एक 'स्टंट' कहा, पर जब उन्हें मैंने भली-भाँति समझा दिया, तब भी लोग अपनी-अपनी डफली बजाते रहे। ग्रंथ के प्रकाशित होने पर एक आलोचक मित्र ने समीक्षा करते हुए लिखा कि हिन्दी का प्रथम इतिहास तो रामचन्द्र शुक्ल का है—उधर से हारे तो इधर से वार किया। मिश्रबंधु विनोद, एडविन ग्रीव्ज़ और केई के अंगरेजी में लिखे गए इतिहासों की ओर से भी आँखें मूँद ली गईं। एक और मित्र ने तासी से भी पहले की एक उर्दू रचना को हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास घोषित किया। वह भी इतिहास नहीं है। वह हिन्दी-उर्दू कवियों का एक तज़किरा मात्र है जिसका नाम 'तबकातुश्शुअरा' है जिसे दिल्ली के करीमुद्दीन ने लिखा और जो दिल्ली से ही 1848 ई० में प्रकाशित भी हुआ। इस ग्रंथ के सम्बन्ध में तासी ने अपने ग्रंथ की भूमिका में जो कुछ लिखा है उसका हिन्दी रूपांतर यह है :

> "तबक़ातुश्शुअरा—करीमुद्दीन कृत। 1848 में दिल्ली से प्रकाशित इस तज़किरा को जिसे 'तज़किरा-शुअरा-इ-हिन्दी' भी कहा जाता है, मेरे 'इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ऐं ऐंदुस्तानी' के प्रथम संस्करण से अनूदित कहा गया है, किन्तु यह एक बिलकुल भिन्न रचना है। मेरा जो कुछ दिया गया है, वह

आजकल बिहार शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर श्री एफ० फालन द्वारा लिखित रूप में मुसलमान विद्वान को दिया गया है ।"

—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, भूमिका, पृष्ठ 98-99

यह तज़किरा मेरे देखने में नहीं आया । गोरखपुर विश्वविद्यालय के डा० रामचन्द्र तिवारी ने इसके हिन्दी अंश का अनुवाद किया है जो अभी तक अप्रकाशित है । हाँ, उन्होंने इस पर परिचयात्मक लेख 'नागरी पत्रिका' में अवश्य प्रकाशित करा दिया है । इसमें भी कवियों का विवरण वर्णानुक्रम से है, अतः यह भी इतिहास नहीं है । इस तज़किरे में नंददास की रचनाओं की सूची भी दी गई है । तासी ने नंददास की रचनाओं की सूची यहीं से लेकर अपने ग्रंथ के द्वितीय संस्करण में जोड़ी है ।

इस ग्रन्थ का तीसरा अध्याय है—'हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास', जिसे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के डा० त्रिभुवन सिंह ने प्रेरित करके मुझसे लिखवा लिया । यह उनके द्वारा संपादित विशाल निबन्ध संग्रह 'साहित्यक निबन्ध' का पहला निबन्ध है । उक्त 'साहित्यिक निबन्ध' हिन्दी प्रचारक संस्थान वाराणसी से प्रकाशित हुआ है । मैंने इस अध्याय में ग्रियर्सन से लेकर आचार्य शुक्ल के इतिहास तक की यात्रा की है । इसके आगे का प्रकरण छोड़ दिया गया है । इसी अध्याय के नाम पर समस्त ग्रंथ का नामकरण कर दिया गया है, जो असंगत नहीं कहा जा सकता ।

चौथा अध्याय है—'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास : योजना और षष्ठ भाग की समीक्षा ।' यह हरिऔध कला भवन आजमगढ़ के शोध त्रैमासिक 'हरिऔध' के जुलाई 1959 के अंक में निकला था । इस पत्रिका का संपादक मैं था और मेरा उक्त लेख 'ग्रंथ कीट' के छद्म नाम से छपा था । इस लेख के कारण साहित्य-जगत में पर्याप्त हलचल हुई । मुझे इससे लाभ भी हुआ और घाटा भी । लाभ तो यश का हुआ और घाटा हुआ एक वर्ष का । मेरे डी० लिट्० के एक परीक्षक ने ऐसी लंगी मारी कि चौथा परीक्षक नियुक्त करना पड़ा और परीक्षाफल एक वर्ष बाद निकल सका । जैसे हँडिया के एक चावल से सारे चावलों की जाँच हो जाती है, उसी प्रकार से हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास के समस्त खंडों का मूल्यांकन कर लिया जा सकता है ।

जब आचार्य पं० चंद्रबली पाण्डे जीवित थे, तभी नागरी प्रचारिणी सभा ने एक योजना बनाई थी कि आचार्य शुक्ल के सुप्रसिद्ध इतिहास पर संशोधनात्मक एवं पूरक टिप्पणियाँ जोड़ दी जायं । आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने मौखिक रूप से मुझसे इसकी चर्चा की थी और इस ग्रन्थ पर टिप्पणियाँ लिखने की प्रेरणा दी थी । यह बात 1959-60 ई० की है । मैंने उसी समय टिप्पणियाँ प्रस्तुत कर दी थीं, जो बहुत दिनों बाद 'हिन्दुस्तानी' भाग 32, अंक 4 में 'आचार्य शुक्ल का हिन्दी साहित्य का इतिहास : कुछ आवश्यक टिप्पणियाँ' शीर्षक से लेख रूप में प्रकाशित हुईं । 'हिन्दुस्तानी' में प्रकाशित यही लेख प्रस्तुत ग्रंथ का पाँचवाँ अध्याय है ।

छठा अध्याय है—'हिन्दी साहित्य के इतिहास-निर्माण में बाबू श्यामसुन्दर दास का योगदान।' यह सम्मेलन पत्रिका के 'श्यामसुन्दरदास स्मृति अंक' में प्रकाशित है।

सातवाँ अध्याय है—'हिन्दी साहित्य के विविध प्रकार के इतिहास'। हिन्दी में साहित्य के अनेक प्रकार के इतिहास हैं, जैसे सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का इतिहास, विभिन्न कालखंडों के इतिहास, क्षेत्र विशेष के इतिहास, विधा-विशेष के इतिहास, विभाषा-विशेष के साहित्य के इतिहास। इस अध्याय में इनकी अलग अलग सूचियाँ सी प्रस्तुत कर दी गई हैं, जो अनुसंधित्सुओं एवं अध्येताओं के लिए सहायक सिद्ध हो सकती हैं। भय है कि ये सूचियाँ असंपूर्ण हैं।

आठवाँ अध्याय है—'हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की समस्याएँ और उनका समाधान।' यह लेख 'आचार्य पंडित विश्वनाथ मिश्र अभिनन्दन ग्रंथ' में संकलित है और उसी के लिए डा० रामजी मिश्र, दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रेरणा से विशेष रूप से लिखा गया था और प्रस्तुत ग्रन्थ का उपसंहार-सा है।

इधर मेरे देखने में एक ग्रन्थ आया है—'हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों का आलोचनात्मक अध्ययन।' यह जोधपुर विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबंध है। इसके प्रस्तुतकर्ता हैं डा० रूपचंद पारीक। इसका प्रकाशन सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा से 1972 ई० में हुआ है। अक्टूबर 1972 के अन्तिम सप्ताह में मैंने डा० रूपचंद पारीक के इस ग्रंथ को अत्यंत मनोयोगपूर्वक पढ़ा। इस शोध प्रबन्ध का विषय वही है, जो मेरे इस ग्रन्थ का है। इसलिए मैं आगे इसका परिचय पर्याप्त विस्तार से दे रहा हूँ, जिससे आसानी से इस ग्रंथ की तुलना मेरे ग्रंथ से की जा सके। मैं पिष्टपेषण से बचना चाहता हूँ, इसीलिए डा० पारीक के ग्रंथ में जो कुछ है, उसीको दुहराना नहीं चाहता और डा० पारीक के शोध प्रबन्ध के अध्याय 5-10 की समस्त सामग्री को मैंने केवल एक अध्याय—छठे—में मात्र सूची रूप में दे दिया है। डा०पारीक ने मेरा काम हलका कर दिया है, एतदर्थ वे साधुवाद के पात्र हैं।

डा० पारीक के 'हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों का आलोचनात्मक अध्ययन' में कुल ग्यारह अध्याय हैं। इसका विवरण यों हैं :

1. इतिहास शब्द का अर्थ और प्रयोग।
2. इतिहास ग्रन्थों की पूर्व पीठिका—इसमें चंद, जायसी, सूर, तुलसी, केशव, सेनापति आदि कवियों के सम्बन्ध में उनकी रचनाओं से अन्तःसाक्ष्य सम्बन्धी उद्धरण हैं। इसी प्रकार बहिःसाक्ष्य के लिए भक्तमाल एवं वार्ता साहित्य से विभिन्न भक्त कवियों के सम्बन्ध में उद्धरण हैं।
3. कवि वृत्त संग्रह—इसमें निम्नांकित काव्य संग्रहों का संक्षिप्त विवरण है :
   1. कविमाला, 2. कालिदास हजारा, 3-4. अलंकार रत्नाकर और सार संग्रह, 5. सत्कविगिराविलास, 6. विद्वन्मोदतरंगिणी, 7. राग कल्पद्रुम, 8. शृंगार संग्रह, 9. रस चंद्रोदय, 10. दिग्विजय भूषण, 11. कवित्त रत्नाकर, 12. विचित्रोपदेश।

इनके अतिरिक्त इसमें महेशदत्त कृत भाषा काव्य संग्रह का विवेचन विस्तार-पूर्वक हुआ है।

4. इतिहास लेखन के प्रारंभिक अथवा क्षीण प्रयत्न—इसे पूर्व-शुक्ल-युग कहा गया है। इसमें निम्नांकित ग्रंथों का विवेचन है :
   1. तासी कृत हिन्दुई साहित्य का इतिहास, 1837 ई०, 1870-71 ई०।
   2. शिवसिंह सरोज, 1878 ई०।
   3. द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान—1888 ई०।
   4. मिश्रबंधु विनोद—1813 ई०।
   5. ए स्केच ऑफ हिन्दी लिटरेचर—एडविन ग्रीब्ज़—1918 ई०।
   6. ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिटरेचर—एफ० ई० केई—1920 ई०।
   7. हिन्दी—बदरीनाथ भट्ट—1922 ई०।
5. शुक्ल युग—इस अध्याय में निम्नांकित इतिहास ग्रंथों का विवेचन हुआ है :
   1. हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचंद्र शुक्ल, जनवरी 1929।
   2. हिन्दी साहित्य—बाबू श्यामसुन्दर दास, 1930 ई०।
   3. हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल', 1931 ई०।
   4. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास—डा० सूर्यकान्त शास्त्री, 1932 ई०।
   5. हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास—पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', 1934 ई०।
   6. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास—कृष्ण शंकर शुक्ल, 1934 ई०।
   7. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डा० रामकुमार वर्मा, 1938 ई०।
   8. खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास—ब्रजरत्नदास, 1941 ई०।
   9. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—आचार्य चतुरसेन शास्त्री।
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—इस अध्याय में द्विवेदीजी के निम्नांकित दो ग्रंथों का विवेचन है :
   1. हिन्दी साहित्य की भूमिका—1940 ई०।
   2. हिन्दी साहित्य—1955 ई०।
7. खंड विशेष के इतिहास—इस अध्याय में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डाक्टरेट के लिए स्वीकृत निम्नांकित चार शोध प्रबन्धों का विवेचन हुआ है :
   1. आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका (1757-1857 ई०)—डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय।
   2. आधुनिक हिन्दी साहित्य (1850-1900 ई०)—डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय।
   3. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास (1900-1925 ई०)—श्रीकृष्ण लाल।
   4. हिन्दी साहित्य (1926-1946 ई०)—डा० भोलानाथ।

8. हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास—काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने 10 जिल्दों में हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास की योजना बनाई है। इस योजना के अनुसार निम्नांकित ग्रंथ शोध प्रबन्ध लिखने के समय तक प्रकाशित हो गए थे, उनका विवेचन इसमें हुआ है :

 1. प्रथम भाग—हिन्दी साहित्य की पीठिका।
 2. द्वितीय भाग—हिन्दी भाषा का विकास।
 3. चतुर्थ भाग—भक्तिकाल, निर्गुण भक्ति।
 4. पष्ठ भाग—रीतिकाल. रीतिबद्ध काव्य।
 5. त्रयोदश भाग (1920-40 ई०)—समालोचना, निबन्ध, पत्रकारिता।
 6. षोडश भाग—हिन्दी का लोक साहित्य।

9. मझोले आकार का इतिहास—भारतीय हिन्दी परिषद् इलाहाबाद ने निम्नांकित तीन खंडों में हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत किया है :

 1. हिन्दी भाषा और साहित्य की भूमिका—हिन्दी प्रदेश का सामाजिक, सांस्कृतिक इतिहास।
 2. प्रारम्भ से 1850 तक के हिन्दी साहित्य का इतिहास।
 3. 1850 ई० के बाद का हिन्दी साहित्य।

 इस इतिहास के द्वितीय खंड का विवेचन इस अध्याय में हुआ है।

10. विभिन्न साहित्यिक विधाओं के इतिहास।

(क) आलोचना
 1. हिन्दी आलोचना : उद्भव और विकास—डा० भगवत स्वरूप मिश्र, 1954 ई०।
 2. हिन्दी आलोचना का इतिहास—डा० रामदरश मिश्र, 1960 ई०।
 3. आधुनिक हिन्दी साहित्य में समालोचना का विकास—डा० वेंकट शर्मा, 1962 ई०।

तीनों क्रमश: आगरा, वाराणसी एवं राजस्थान विश्वविद्यालयों के शोध प्रबंध हैं।

(ख) नाटक
 1. हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास—डा० सोमनाथ गुप्त।
 2. हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास—डा० दशरथ ओझा।
 3. हमारी नाट्य परम्परा—श्री कृष्ण दास।

(ग) एकांकी नाटक
 1. हिन्दी एकांकी—डा० सत्येन्द्र।
 2. हिन्दी एकांकी : उद्भव और विकास—डा० रामचरण महेन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय का शोध-प्रबंध।

(घ) कविता
 1. आधुनिक काव्य धारा—डा० केशरी नारायण शुक्ल।
 2. हिन्दी कविता में युगांतर—डा० सुधीन्द्र।

(ङ) **उपन्यास** 1. हिन्दी उपन्यास—डा० शिवनारायण लाल श्रीवास्तव ।
2. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन—डा० गणेशन ।

(च) **कहानी** 1. हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास—डा० लक्ष्मीनारायण लाल ।

(छ) **काव्य शास्त्र** 1. हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास—डा० भगीरथ मिश्र ।

(ज) **वाद** 1. हिन्दी साहित्य के विविध वाद—डा० प्रेमनारायण शुक्ल ।

11. उपसंहार—इस अध्याय में निम्नांकित बातों का विचार किया गया है :

(क) हिन्दी साहित्य की सतत् प्रवहमान धाराएँ—धार्मिकता, भौतिकता, मानवतावाद, यथार्थवाद ।

(ख) हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की उपलब्धियाँ—1. रचनाकारों का जीवन वृत्त । 2. रचनाओं की प्रामाणिकता । 3. काल विभाजन । 4. रचनाकारों के रचना-सामर्थ्य का उद्‌घाटन । 5. इतिहास की जातीय प्रणाली । 6. कालखंड का अध्ययन । 7. वृहत् इतिहास । 8. भाषा का स्वरूप । 9. परिस्थितियों का चित्रण ।

(ग) प्रभाव—1. विवरणात्मकता का प्राधान्य, प्रवृत्ति निरूपण का अभाव । 2. शुद्ध पाठ का अभाव । 3. इतिहास-लेखन के दृष्टिकोण का ह्रास । 4. राजस्थानी साहित्य पर विचार नहीं । 5. युग की साहित्यिक अभिरुचि की चर्चा नहीं ।

(घ) नए इतिहास लेखन के संकेत—1. प्रवृत्तियों का निरूपण । 2. समय-समय पर परिवर्तित होती रहने वाली भाषा पर ध्यान । 3. युगीन धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों का साहित्य के साथ अंतः सम्बन्ध स्थापन । 4. अनूदित साहित्य का उल्लेख ।

(ङ) निष्कर्ष ।

ग्रन्थांत में परिशिष्ट रूप में वास्तविक संदर्भ ग्रंथ सूची दी गई है । ग्रंथ अच्छा है, पर इसकी निम्नांकित त्रुटियाँ है—

1. ग्रंथ के विस्तार देने के लिए प्रारम्भ के तीन अध्याय अनावश्यक रूप से जोड़े गए हैं । चौथे अध्याय का भी तासी एवं सरोज वाला अंश अनावश्यक है ।

2. शुक्ल जी के इतिहास पर एक अलग अध्याय होना चाहिए था ।

3. केवल शोध प्रबंधों की आलोचना तक अपने को न सीमित रखना चाहिये था । शोध-प्रबंधों की सीमा से बाहर भी अच्छा काम हुआ है, जैसे ब्रजरत्नदास कृत हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास, हिन्दी उपन्यास साहित्य का इतिहास, उर्दू साहित्य का इतिहास, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी का हिन्दी साहित्य का आदिकाल और नाथ-सम्प्रदाय, डा० शान्ति प्रसाद चंदोला का नाथ-पंथ, आचार्य पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का हिन्दी साहित्य का अतीत (दो भाग) आदि ।

4. क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य एवं हिन्दी की विभाषाओं के इतिहासों पर भी एक-एक अध्याय होना चाहिए था ।

5. प्राय: एक दर्जन इतिहास-ग्रंथों की पूरे-पूरे पृष्ठों तक लम्बी विषय-सूचियाँ उद्धृत कर दी गई हैं, जो एक ओर ग्रंथ की नीरसता बढ़ाती हैं दूसरी ओर लेखक की असमर्थता भी व्यक्त करती हैं।

6. भिन्न-भिन्न इतिहासों से भी लम्बे-लम्बे उद्धरण दिये गए हैं। उद्धरणों के दृश्यों को लेखक अपनी शब्दावली में अच्छी तरह व्यक्त कर सकता था।

7. दूसरे अध्याय का शीर्षक है—कवि वृत्त संग्रह। इसमें 13 काव्य संग्रहों का विवेचन है। इनमें से केवल दो में कवि-वृत्त भी दिया गया है। ये हैं—मातादीन मिश्र कृत कवित्त रत्नाकर एवं महेश दत्त शुक्ल कृत भाषा काव्य संग्रह। कवि वृत्त संग्रह वाले अध्याय में इन्हीं दोनों का विवरण होना चाहिये था। इनके अतिरिक्त चौथे अध्याय के तासी एवं सरोज के विवरण इसी अध्याय में दिये जाने चाहिए थे।

8. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर एक स्वतंत्र अध्याय है। इसे व्यक्ति-पूजा समझा जाय या संभावित परीक्षक के तुष्टीकरण के लिए पेशबंदी ?

हिन्दी साहित्य के इतिहास प्रस्तुत करने वालों में अभी तो तीन ही नाम उभर रहे हैं—ग्रियर्सन, मिश्रबंधु, आचार्य पं० रामचंद्र शुक्ल। एक और सशक्त नाम आना चाहिये, जो समस्त प्राप्त सामग्री का सदुपयोग करके हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास को नवीन रूप-रंग दे सके, जिसमें प्रवृत्तियों का निरूपण तो हो ही, कवि वृत्त भी हो। इतिहास-लेखन के लिए मैं आचार्य शुक्ल के इतिहास को ही आदर्श मानता हूँ। केवल प्रवृत्तियों का निरूपण उतना उपयोगी नहीं। कवियों को खंड-खंड करके तीरघाट मीरघाट कर देना भी उपयुक्त नहीं। प्रकरण एवं प्रसंग के अनुकूल उनका उल्लेख चाहे जहाँ किया जाय, पर कोई ऐसा स्थल तो होना ही चाहिए, जहाँ उनके ऐतिह्य एवं साहित्य समग्र रूप में आलेखन एवं आकलन हो। बिना ऐतिह्य के इतिहास क्या ? इस भूमिका में कौन कृती उतरता है ?—देखना है। उसे उतरना ही चाहिए, निरंकुश साझेदारी से काम नहीं चलने का।

प्रस्तुत ग्रंथ कार्तिक कृष्णा एकादशी सं० 2029 (1 नवम्बर 1972 ई०) को ही वर्तमान रूप में प्रस्तुत हो गया था। वि. भू. प्रकाशन के स्वामी की पारखी दृष्टि से इसके प्रकाशन को अब सुयोग मिल रहा है, अन्यथा यह न जाने और कितने समय तक अभी अप्रकाश में पड़ा रहता। एतदर्थ लेखक डा० विद्याभूषण भारद्वाज का कृतज्ञ है, जिनसे एक दिन हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के सत्यनारायण कुटीर में अनायास ही भेंट हो गई थी और इस ग्रंथ के सम्बन्ध में चर्चा चल गई थी। अस्तु, सज्जनों से भेंट निष्फल नहीं होती।

किशोरी लाल गुप्त
एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०

सुधवै, वाराणसी
श्रीकृष्णाष्टमी, संवत् 2034 वि०
(अगस्त 1978 ई०)

1

तासीकृत हिन्दुई साहित्य का इतिहास : 1870-71 ई०

तासी का जीवन-परिचय

गार्सां द तासी फ्रांस के प्रसिद्ध बंदरगाह मारसेल में सन् 1794 ई० में पैदा हुआ था। 84 वर्ष की उम्र में सन् 1878 ई० में इसका देहान्त हुआ। सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के अनंतर यह पेरिस आया। यहाँ उसने अरबी और तुर्की भाषाओं का अध्ययन प्रारम्भ किया। जिस तरह प्रोफेसर ब्राउन ने तुर्की पढ़ते-पढ़ते फारसी की ओर ध्यान दिया था, क्योंकि बिना फारसी की जानकारी के तुर्की का अध्ययन पूर्ण नहीं हो सकता, उसी तरह गार्सां द तासी ने भी अरबी और तुर्की के साथ फारसी का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। प्राच्य विद्या की रुचि ने ही उसे उर्दू की ओर आकृष्ट किया और उर्दू में उसने कुछ ऐसी दक्षता प्राप्त कर ली कि पेरिस के प्राच्य महाविद्यालय में हिन्दुस्तानी जबान के एक प्रोफेसर के स्थान की व्यवस्था की गई और उक्त स्थान पर गार्सां द तासी की नियुक्ति हुई। तासी फ्रांसीसी इंस्टीट्यूट के, पेरिस, लंदन, कलकत्ता, मद्रास और बम्बई की एशियाटिक सोसाइटियों के, सेंट पीटर्स वर्ग की इंपीरियल एकेडेमी आफ साइंसेज के, म्यूनिक, लिस्बन, ट्यूरिन की रायल एकेडेमियों के, नार्वे, उरूसल और कोपेनहेगन की रायल सोसाइटियों के, अमेरिका के ओरियंटल, लाहौर के अंजुमन तथा अलीगढ़ इंस्टीट्यूट के सदस्य थे। तासी ने 'नाइट ऑफ द लीजियन ऑफ आनर' (फ्रांस) और 'स्टार ऑफ द साउथ पोल' आदि उपाधियाँ प्राप्त की थीं और संभवतः वह युद्ध क्षेत्र से भी परिचित था।

तासी की कृतियाँ

उर्दू के प्रोफेसर की हैसियत से गार्सां द तासी ने बड़ा काम किया और उर्दू के प्रचार-प्रसार एवं संरक्षण में उसने उसकी जो सेवाएँ की हैं, उसका उर्दू साहित्य के इतिहास में बड़े आदर के साथ स्मरण किया जाएगा। उसने अनेक उर्दू ग्रंथों का

फ्रांसीसी भाषा में अनुवाद किया और उर्दू व्याकरण, साहित्य तथा इतिहास से सम्बन्धित कई पुस्तकें रची एवं कुछ किताबों का सुन्दर संपादन करके प्रकाशित भी कराया।

तासी द्वारा रचित ग्रंथों की सूची नीचे दी जा रही है :

(क) अनुवाद

(1) मीर की मसनवी अजदरनामा
(2) तहसीनुद्दीन की मसनवी कामरूप
(3) गुल बकावली का खुलासा (सारांश)
(4) मिसकीन का मरसिया
(5) सर सैयद की आसारूलसनादीद
(6) इक्तबासात अखवानुलसफा (अज्ञात पुण्य-चरित लोगों के वचन)
(7) निहालचन्द की ताजुलमलूक व बकावली
(8) मीर अमन कृत बागो-बहार (गद्य)

(ख) मौलिक ग्रन्थ

(1) उर्दू जबान के फवायद (लाभ)
(2) हिन्दुस्तानी अदब (साहित्य) की तारीख (इतिहास) (इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ए ऐंदुस्तानी)
(3) खुतबात सालाना (वार्षिक व्याख्यान) (ल लांग ऐ ल लितरेत्यूर ऐंदुस्तानी द 1850 अ 1869 ई०)।
(4) हिन्दुस्तानी शायर औरतें
(5) हिन्दुस्तानी मुसन्निफीन (लेखक) और उनकी तसानीफ (रचनाएँ) (ले औत्यूर ऐंदुस्तानी ऐ ल्यूर उवरज, 1868 ई०, पेरिस, द्वि० सं०)
(6) हिन्दुस्तानी-फ्रांसीसी और फ्रांसीसी-हिन्दुस्तानी लुगात (शब्द कोष) की निगरानी व इमदाद (देखभाल और सहायता)
(7) हिन्दुस्तानी की प्रारम्भिक गति पर भाषण, 1874 ई० पेरिस, द्वितीय संस्करण (दिस्कुर द उवरल्यूर दु कुर द ऐंदुस्तानी)
(8) हिन्दुस्तानी भाषा और साहित्य वार्षिक समीक्षा 1870-76 1871 और 1873-76 में पेरिस से प्रकाशित (ल लांग ऐ ल लितरेत्यूर ऐंदुस्तानी रेव्यू ऐन्युऐल 1870-76)
(9) हिंदुई भाषा के प्रारम्भिक सिद्धान्त (रूदीमां द ल लांग ऐंदुई)
(10) हिन्दुस्तानी भाषा के प्राथमिक सिद्धान्त (रूदीमां द ल लांग ऐंदुस्तानी)
(11) भारत में मुसलमानों के धर्म का विवरण (मेम्वार सूर ल रेलीजिओ मुसलमान दा लिंद)
(12) फारस निवासियों का दार्शनिक और धार्मिक काव्य (ल पोएजी फिलोसोफीक ऐ रेलीज्यूस शे लै पैर्सां)

(13) मुसलमान जातियों का काव्यशास्त्र (रहतोरीक दै नैसिस्रो मुसलमान)

(ग) संपादन

(1) कुल्लियात वली (वली की सम्पूर्ण रचनाओं का संग्रह)
(2) मसनवी कामरूप (एडवेंचर्स डी कामरूप)
(3) महाभारत

यों तो इसकी सभी साहित्यिक सेवाएँ आदर के साथ स्मरण करने योग्य हैं, पर उसकी तीन कृतियाँ विशेष महत्व रखती हैं—एक तो कुल्लियात वली का संपादन, दूसरे हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास और तीसरे वार्षिक व्याख्यान कुल्लियात वली की विभिन्न हस्तलिखित प्रतियाँ विभिन्न स्थानों से प्राप्त करके एवं एक-दूसरे से तुलना करके तासी ने ठीक-ठीक पाठ निर्धारण किया। यह ग्रंथ 1834 ईस्वी में प्रकाशित हुआ।

हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास इनकी और भी महत्वपूर्ण कृति है। इसके लिए तासी ने बड़ी सामग्री एकत्र की थी। उस युग में, और वह भी पेरिस में बैठकर, हस्तलिखित ग्रंथों एवं तजकिरों का इकट्ठा करना और इतनी अभिज्ञता प्राप्त करना अत्यन्त आश्चर्यजनक है। इस ग्रंथ के सम्बन्ध में आगे विशेष रूप से विचार किया गया है।

खुतबाते तासी

प्रोफेसर की हैसियत से तासी का यह नियम था कि वह प्रत्येक वर्ष के अन्त में एक व्याख्यान दिया करता था, जिसमें उस वर्ष के हिन्दी और उर्दू साहित्य का सिंहावलोकन प्रस्तुत किया करता था। उस वर्ष कौन-कौन-सी पुस्तकें प्रकाशित हुईं, कौन-कौन से नए समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ प्रारम्भ हुईं, साहित्य क्षेत्र में कौन-कौन नए लेखक प्रविष्ट हुए, इन सबका विवरण वह अपने इन वर्षांत व्याख्यानों में दिया करता था। इन सबकी अभिज्ञता वह विभिन्न सूत्रों से विशेषकर भारतीय अधिकारियों से पत्राचार के द्वारा प्राप्त किया करता था। उसकी सूचनाएँ परिगणना मात्र नहीं हैं, उनमें विवरणों की जाँच-पड़ताल भी है। नाम देने के साथ-साथ वह प्रत्येक ग्रंथ, पत्रिका एवं समाचार पत्र की वास्तविकता पर प्रकाश डालता जाता है, उनका मूल्यांकन करता जाता है, लेखकों का परिचय देता जाता है और प्रकाशन सम्बन्धी सूचनाएँ भी प्रस्तुत करता जाता है, कभी-कभी वह राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं पर भी अपने विशेष ढंग से कुछ कह जाता है। उनमें कुछ ऐसी बातें पाई जाती हैं, जो तत्कालीन अन्य ग्रंथों एवं इतिहासों में नहीं हैं। हिन्दुस्तानी साहित्य के इतिहास की भाँति इन वार्षिक व्याख्यानों में भी यत्र-तत्र आश्चर्यजनक भ्रांतियाँ हैं, पर इन त्रुटियों से इन ग्रंथों के महत्व में कोई कमी नहीं आती।

इन व्याख्यानों के अध्ययन से तीन बातें साफ होती हैं :

(1) तासी को 'उर्दू जवान' से दिली लगाव है। वह इसे हिन्दुस्तान की

तरक्की पजीर और आम जबान खयाल करता है और हर मौके पर हिन्दी के मुकाबले में इसकी हिमायत करता है और उसके फरोग और तरक्की का दिल से ख्वाहां है।

(2) तासी पक्का ईसाई है।

(3) तासी साफ-साफ कहता है कि 'हिन्दुस्तान में अंग्रेजी हुकूमत वाइस बरकत व खैर है।'

ये व्याख्यान 3 दिसम्बर 1850 ई० से प्रारम्भ हुए थे और 6 दिसम्बर 1869 ई० तक, सन् 1858 ई० को छोड़कर, जिसे 1857 के विप्लव का परिणाम समझना चाहिए, बराबर दिए जाते रहे। इनमें 19 वर्षों के उर्दू साहित्य की पूरी झलक मिलती है। हिन्दी के सम्बन्ध में भी इन व्याख्यानों में बराबर उल्लेख होते गए हैं, अतः इनका महत्व हिन्दी की दृष्टि से भी है।

इन वार्षिक व्याख्यानों का उर्दू अनुवाद 'खुतबात-इ-तासी' नाम से हुआ है। इनका अच्छा नाम 'हिन्दुस्तानी अदब 1850 ता 1869' होता। हैदराबाद के सर सैयद रास मसऊद (नवाब मसऊद जंग बहादुर) इंगलैण्ड गए थे। इंडिया आफिस के पुस्तकालय में संयोग से यह ग्रंथ (ल लांग ए ल लितरेत्यूर ऐंदुस्तानी द 1850 ता 1869) उनकी निगाह में पड़ गया। उक्त मसऊद साहब तासी के नाम से बहुत पहले से परिचित थे, क्योंकि तासी इनके बाप सैयद महमूद के दोस्तों में से था और उसने महमूद साहब की 'आसारुलसनादीद' नामक पुस्तक का फ्रांसीसी भाषा में अनुवाद किया था। इस पुस्तक को देख कर मसऊद साहब के मन में इसके उर्दू अनुवाद करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई और उन्होंने हैदराबाद लौटकर इसके प्रथम 6 व्याख्यानों का अनुवाद किया भी पर कार्याधिक्य के कारण वह इसे पूरा न कर सके, तब यह कार्य अब्दुल बासित बी० ए० को सौंपा गया। उन्होंने इसके सातवें-आठवें और नवें व्याख्यानों का अनुवाद प्रस्तुत किया। उक्त बासित साहिब उस समय बम्बई के दैनिक समाचार पत्र 'बांबे क्रानिकिल' में काम करते थे। शेष व्याख्यानों का अनुवाद डाक्टर यूसूफ हुसैन खाँ डी० लिट्० (पेरिस), रीडर, उसमानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद ने किया। पाँचवें व्याख्यान को कुछ परिवर्द्धित करके तासी ने हिन्दुस्तानी लेखक और उनकी कृतियाँ (ले ओत्यूर ऐंदुस्तानी ऐ ल्यूर उवरज) नाम से स्वतन्त्र पुस्तक रूप में प्रकाशित कर दिया था। इसका दूसरा संस्करण 1868 ई० में पेरिस से हुआ था। 'खुतबाते तासी' में पाँचवें व्याख्यान के स्थान पर उक्त ग्रंथ ही दे दिया गया है। इस ग्रंथ का अनुवाद मिसेज पकथाल ने किया था।

मौलवी अब्दुल हक की देखरेख में उक्त अनुवाद हुआ और उन्हीं ने उस ग्रंथ का 'मुकदमा' (भूमिका) लिखा, जिससे ऊपर दी हुई सारी सामग्री ली गई है। भूमिका की तिथि है 28 अगस्त 1935 ई०। यह ग्रंथ अंजुमन तरक्किए उर्दू औरंगाबाद दकन की ओर से 1935 ई० में प्रकाशित हुआ। यह 813 बड़े पृष्ठों का बड़ा ग्रंथ है।

हिन्दुई साहित्य का इतिहास

तासी ने 'इस्त्वार दल लितरेत्यूर ऐंदुई ए ऐंदुस्तानी' नाम से हिंदुई और हिन्दुस्तानी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत किया था। इसका पहला संस्करण दो भागों में प्रकाशित हुआ था, पहला भाग 1839 ई० में, दूसरा 1847 ई० में। पहले भाग में कवि-परिचय था, दूसरे भाग में उनकी रचनाओं के फ्रांसीसी-अनुवाद। दोनों भाग भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के जन्म (1850 ई०) के वर्षों पहले प्रकाशित हो चुके थे, जबकि हिन्दी साहित्य में पुरातनता का ही अधिवास था। उक्त संस्करण ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की ओरियंटल ट्रांसलेशन कमिटी की ओर से प्रकाशित हुआ था। उक्त संस्था की स्थापना 1828 ई० में इंग्लैण्ड के तत्कालीन बादशाह विलियम चतुर्थ के संरक्षण में लंदन में हुई थी। उक्त ग्रंथ फ्रांस के राजकीय मुद्रणालय में छपा था और लंदन तथा पेरिस दोनों नगरों में विक्रयार्थ रखा गया था।

तासी का हिंदुई से अभिप्राय हिन्दुओं में बोली जाने वाली हिन्दी से है और हिन्दुस्तानी से मुसलमानों में बोली जाने वाली हिन्दी से, जिसका आधार अरबी-फारसी है। हिन्दुस्तानी के दो रूप हैं—उत्तरी हिन्दुस्तान के मुसलमानों द्वारा व्यवहृत हिन्दुस्तानी, जो उर्दू कहलाती है, और दक्षिणी भारत के मुसलमानों द्वारा बोली जाने वाली हिन्दुस्तानी, जिसको दक्खिनी कहते हैं। उर्दू के प्रोफेसर होने के नाते तासी ने उक्त ग्रंथ में उर्दू के कवियों को अत्यधिक स्थान दिया है; हिन्दी के कवियों को कम। उक्त ग्रंथ के प्रथम भाग में कुल 738 कवि और लेखक हैं। इस बड़ी संख्या में हिन्दी से सम्बधित कवि और लेखक केवल 72 हैं।

उक्त ग्रंथ का द्वितीय संस्करण तीन भागों में हुआ। प्रथम एवं द्वितीय भाग स० 1870 ई० में एवं तृतीय भाग 1871 ई० में पेरिस से प्रकाशित हुए। प्रथम भाग में अत्यन्त विस्तृत भूमिका एवं 1223 कवियों और लेखकों का विवरण है। द्वितीय में भूमिका नहीं है, 1200 कवि और लेखक हैं। तीसरी जिल्द में एक छोटी-सी विज्ञप्ति है, तदनंतर 801 कवियों और लेखकों का विवरण, फिर ग्रंथों एवं लेखकों सम्बन्धी दो परिशिष्ट और दो ही अनुक्रमणिकाएँ हैं। तीनों भागों में कुल मिलाकर 1918 बड़े पृष्ठ और 3224 कवि तथा लेखक हैं। पहले संस्करण के द्वितीय भाग में जो सामग्री थी, उसका अधिकांश दूसरे संस्करण में सम्बधित कवियों के विवरणों के पश्चात् संलग्न कर दिया गया है, शेष सामग्री छोड़ दी गई है।

प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्राध्यापक डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने उक्त ग्रंथ में आए हुए हिन्दी के कवियों एवं लेखकों सम्बन्धी विवरणों का हिन्दी अनुवाद 'हिंदुई साहित्य का इतिहास' नाम से किया है, जो सन् 1953 ई० में हिन्दुस्तानी अकेडमी, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ है। इस ग्रंथ में कुल 358 कवि और लेखक आए हैं, जिनमें से अनेक उर्दू, संस्कृत एवं मराठी के हैं। तासी के अनुसार इस सम्पूर्ण ग्रंथ में 3000 भारतीय लेखकों का विवरण है, जिनमें से 2200 मुसलमान हैं और 800 हिन्दू। इन 800 हिन्दुओं में से भी केवल 250 ने हिंदुई में लिखा है,

शेष उर्दू के लेखक हैं। जिन 250 या 358 हिन्दू कवियों एवं लेखकों का विवरण तासी के इस ग्रंथ में है, उनमें वस्तुतः आधे से अधिक ऐसे हैं जो या तो पाठशालाओं के लिए पाठ्य-ग्रंथ लिख रहे थे या जिन्होंने ऐसे विषयों पर रचना की है, जो विशुद्ध साहित्य के भीतर नहीं आते। ऐसी स्थिति में लगभग 125 ही नाम ऐसे होंगे जिन्हें हिन्दी साहित्यकारों के किसी इतिवृत संग्रह में स्थान दिया जा सके।

हिंदुई साहित्य के इतिहास के प्रारम्भ में डा० वार्ष्णेय ने 'अनुवादक की ओर से' शीर्षक के अन्तर्गत 14 पृष्ठों (क से ढ तक) में अपनी बात कही है। तदनंतर 'विषयानुक्रम' के अन्तर्गत कवि सूची दी गई है। तासी ने कवियों का विवरण रोमन वर्षानुक्रम से दिया है, डा० वार्ष्णेय ने नागरी वर्णानुक्रम से। अनुवाद में प्रथम संस्करण की दोनों जिल्दों की भूमिकाएँ दी गई हैं, फिर दूसरे संस्करण की भी। दूसरे संस्करण के प्रथम खण्ड में प्रथम संस्करण की ये दोनों भूमिकाएँ मिला दी गई हैं, साथ ही नवीन सामग्री भी जोड़ दी गई है। प्रथम संस्करण की कोई बात छूटने नहीं पाई है। प्रथम संस्करण की भूमिकाएँ 49 पृष्ठ तक हैं, द्वितीय संस्करण की 50 से 128 तक, कुल 89 पृष्ठों में। इनके पश्चात् कवियों के विवरण हैं—पृष्ठ 1 से 331 तक। फिर 7 परिशिष्ट हैं पृष्ठ 333-399 तदनंतर अनुक्रमणिका पृष्ठ 401 से 420 तक।

तासी की भूमिका का विश्लेषण

तासी के इतिहास का भूमिका-भाग अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हिन्दी से सम्बन्धित अंशों का विश्लेषण आगे विभिन्न शीर्षकों में प्रस्तुत किया जा रहा है। ये शीर्षक मेरे लगाए हुए हैं, स्वयं तासी के नहीं। यह विश्लेषण एक प्रकार से भूमिका का संक्षेप ही है और इसमें डा० वार्ष्णेय द्वारा अनूदित पदावली का ही प्रायः उपयोग कर लिया गया है।

भाषा विचार

जब भारत में संस्कृत का चलन हुआ, तब देश-भाषाओं का व्यवहार बन्द नहीं हो गया था। यह तथ्य संस्कृत नाटकों से स्पष्ट है जहाँ उच्च श्रेणी के व्यक्ति संस्कृत बोलते हैं और स्त्रियाँ तथा साधारण व्यक्ति प्राकृत। उत्तर और उत्तर-पश्चिम प्रांत में जिस भाषा का विकास हुआ, वह 'भाषा' या 'भाखा' या 'हिंदुई' (हिन्दुओं की भाषा) या 'हिन्दी' (भारतीय भाषा) के विशेष नाम से प्रचलित है। फारसी और अरबी शब्दों के मिश्रण बिना हिन्दी 'ठेठ' या 'खड़ी बोली' (शुद्ध भाषा) कही जाती है. ब्रज प्रदेश की विशेष बोली ब्रजभाषा कही जाती है, जो आधुनिक बोलियों में प्राचीन हिंदुई के सबसे अधिक निकट है। दिल्ली के पूर्व (वस्तुतः पूर्वी उत्तरप्रदेश एवं बिहार) में पूर्वी बोली जाती है जिसे भोजपुरी कहते हैं।

मुसलमानों के सम्पर्क के साथ-साथ लगभग 1000 ई० से नगरों में भारतीय

भाषा में परिवर्तन उपस्थित हुआ। 1500 ई० के आसपास हिन्दी में अरबी से भरी हुई फारसी का प्रभाव बढ़ने लगा। सेना का बाजार नगरों में स्थापित हुआ। उसे तातारी भाषा के शब्द 'उर्दू' की संज्ञा प्राप्त हुई। उर्दू का अर्थ है 'फौज' और 'शिविर'। हिन्दी और फारसी की नई बोली यहीं उर्दू में बोली जाती थी, इसीलिए इसे 'उर्दू की भाषा' या संक्षेप में 'उर्दू' कहा गया। जिस समय उत्तर में उर्दू का विकास हो रहा था, उसी समय हैदराबाद दकन में हिन्दू-मुसलमानों की सम्मिलित भाषा 'दक्खिनी' नाम से विकसित हो रही थी। साथ ही ठेठ हिन्दी का प्रयोग भी उत्तर के और उत्तर-पश्चिम के प्रांतों के हिन्दुओं में होता रहा।

यद्यपि शब्दों के चुनाव में हिन्दी और उर्दू एक-दूसरे से भिन्न हैं, पर वास्तव में अपनी-अपनी वाक्य रचना पद्धति के अन्तर्गत आंशिक दृष्टि से विभिन्न तत्वों से निर्मित एक ही भाषा है।

मुसलमानी शासनकाल में यद्यपि राजभाषा फारसी रही, पर फारसी लिपि में लिखित उर्दू समस्त भारत में स्वीकार कर ली गई थी। 1831 ई० में अंग्रेजों ने फारसी को राजभाषा पद से हटाया और प्रांतीय भाषाओं को उनका वह उचित पद दिया और स्वाभावतः उर्दू उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम प्रांतों के लिए अपना ली गई। यह सुन्दर कार्य सबको पसन्द आया और अगले 30 सालों में इस व्यवस्था को पूर्ण सफलता मिली तथा कोई शिकायत सुनने में नहीं आई। किन्तु अब मुसलमानों के अधीन न होने के कारण हिन्दुओं में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न हो गई है। वे अपने हाथ में राजशक्ति तो ले न सके, अब वे कम-से-कम मुसलमानों की दासता के समय की अरुचिकर बातें दूर कर देना चाहते हैं, जिनमें उर्दू, विशेषकर फारसी लिपि, प्रधान है। अपनी इस प्रतिक्रियावादी अजीब बात के पक्ष में वे जो तर्क प्रस्तुत करते हैं, वे बिल्कुल स्वीकार करने योग्य नहीं है। राष्ट्रीयता की संकीर्ण भावना से वे उस हिन्दी को पुनरुज्जीवित करना चाहते हैं, जो साहित्यिक दृष्टि से अब लगभग लिखी ही नहीं जाती और बोल-चाल की दृष्टि से हर एक गाँव में बदलती जाती है, जबकि उर्दू का काव्यात्मक रचनाओं के द्वारा एक सुन्दर रूप स्थिर हो चुका है। हिन्दू कहते हैं कि देश की भाषा हिन्दी है न कि उर्दू। उन्हें 'फारसी' अक्षरों के सम्बन्ध में आपत्ति है और वे नागरी पसन्द करते हैं। पर वास्तविकता यह है कि शिकस्ता के मुकाबले में घसीट नागरी पढ़ना अधिक कठिन है।

मुसलमानों ने साहसपूर्वक यह आक्रमण सहा है और अपने विरोधियों को सफलतापूर्वक सख्त उत्तर दिया है। स्पष्टतः यह जातिगत और धर्मगत विरोध है। यह बहुदेववाद का एकेश्वरवाद के विरुद्ध, वेदों का बाइबिल (जिसके अन्तर्गत मुसलमान आ जाते हैं) के विरुद्ध संघर्ष है। मैं नहीं जानता कि अंग्रेज सरकार हिन्दुओं के सामने झुक जाएगी अथवा जिन मुसलमानों के शासन की वह उत्तराधिकारिणी है उनकी बोली को सुरक्षित रखेगी। रोमन लिपि लादते समय यदि वह यह समस्या हल करने का निश्चय नहीं करती, तो साहित्यिक दृष्टिकोण से यह अत्यन्त दुःखद बात होगी।

तासी के इन विचारों के सम्बन्ध में अपना मंतव्य व्यक्त करना यहाँ अनावश्यक एवं अप्रासंगिक है।

साहित्य विचार

हिन्दी की बोलियों का एक साहित्य है जो अत्यधिक रोचक एवं विशेषता सम्पन्न है। यह रोचकता केवल काव्यगत ही नहीं, ऐतिहासिक और दार्शनिक भी है। हिन्दुई में मध्ययुगीन भारत से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण पद्यात्मक विवरण हैं। उनके महत्व का अनुमान बारहवीं शताब्दी में लिखित चंद के काव्य (पृथ्वीराज रासो) और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बाल कवि लिखित बुंदेलों का इतिहास (छत्र प्रकाश) से लगाया जा सकता है। इस प्रकार की अनेकानेक रचनाएँ राजपूताने में भरी पड़ी हैं।

हिन्दुई में जीवनी सम्बन्धी कुछ रोचक रचनाएँ भी मिलती हैं। इनमें 16 वीं शताब्दी के अंत में लिखित 'भक्तमाल' प्रधान है।

जहाँ तक दार्शनिक महत्व से सम्बन्ध है, यह हिन्दुई की विशेषता है। यह भारतवर्ष के धार्मिक सुधारों की भाषा है। कबीर, नानक, दादू, बीरभान, बख्तावर आदि ने सिद्धांतों के प्रचार के लिए इस भाषा का प्रयोग किया और उसके अनुयायी भी इसी भाषा में रचित भजन गाते हैं।

हिन्दुई में केवल पद्यात्मक रचनाएँ हैं। हिन्दी रचनाएँ चार भागों में विभाजित की जा सकती हैं—(1) आख्यान, (2) आदिकाव्य, (3) इतिहास, (4) काव्य। आख्यान में लोकप्रिय कहानियाँ आती हैं। आदिकाव्य से अभिप्राय 'रामायण' का है और इतिहास से 'महाभारत' का। काव्य में छोटी-छोटी कविताएँ स्वीकृत की गई हैं।'

साहित्य रूप विचार

(1) अभंग (मराठी में प्रयुक्त), (2) आल्हा, (3) कड़खा, (4) कवित्त, (5) कहरवा, (6) कीर्तन, (7) कुन्डलिया, (8) गान, (9) गाली, (10) गीत, (11) गूजरी, (12) चतुरंग (खियाल, तराना, सरगम और लिखत। इन चार प्रकारों से गाई जाने वाली चार भागों की एक कविता)। (13) चरण, (14) चरणाकुल छंद, (15) चुटकुला, (16) चौपाई, (17) छंद, (18) छप्पय, (19) जगत वर्णन, (20) जत, (21) जयकरी छंद, (22) झूलना, (23) टप्पा, (24) ठुमरी, (25) डोमरा, (26) तुक, (27) दादरा, (28) दीपचंदी, (29) दोहा या दोहरा, (30) धम्माल, (31) ध्रुपद, (32) पखान, (33) पद, (34) पहेली, (35) पालना, (36) प्रबंध, (37) प्रभाती, (38) बधावा, (39) बरवा, (40) बसंत, (41) भक्तमार्ग, (42) भठ्याल, (43) भुजंग, (44) मंगल, (45) मलार, (46) मुकरी, (47) रमैनी, (48) रसादिक, (49) राग, (50) रामसागर और रागमाला, (51) रामपद, (52) रास, (53) रेख्ता, (54) रोला छंद,

(55) विष्णु पद, (56) शब्द या शब्दी, (57) संगीत, (58) साखी, (59) समय, (60) साप्रा, (61) सोरठ, (62) सोहला, (63) स्तुति, (64) हिंडोल, (65) होरी— इन 65 की व्याख्या की गई है, पर अनेक व्याख्याएँ भ्रष्ट हैं।

अनुवाद विचार

हिन्दुस्तानी साहित्य का बहुत बड़ा भाग फारसी, संस्कृत और अरबी से अनूदित है। ये अनुवाद प्रायः महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि वे मूल के कठिन और संदिग्ध अंशों की व्याख्या करने के साधन सिद्ध हो सकते हैं। प्रसिद्ध हिन्दू लेखक कुलपति ने इन शब्दों में अपने विचार प्रकट किए हैं—"यदि संस्कृत काव्य हिन्दी में रूपांतरित कर दिया जाता तो वास्तविक अर्थ और भी अच्छी तरह से समझ में आ सकता था।" कभी-कभी ये अनुवाद ही हैं जो दुर्भाग्यवश खोई हुई मूल रचनाओं के स्थान पर काम आते हैं, उदाहरण के लिए 'बैताल पचीसी।'

आचार ग्रंथ

तासी ने 66 आधार ग्रंथों की सूची भूमिका में दी है। इनमें से निम्नांकित 11 हिन्दी से संबन्धित हैं :

1. कवि वचन सुधा—बाबू हरिश्चन्द्र द्वारा कलकत्ते से मासिक रूप में प्रकाशित हिन्दी संग्रह।

2. कवि चरित्र—जनार्दन द्वारा मराठी में लिखित। किन्तु इसमें हिन्दी कवियों से सम्बन्धित सूचनाएँ भी हैं।

3. कविप्रकाश (काव्य प्रकाश)—शीर्षक के अनुसार हिन्दी का तजकीरा होना चाहिए।

4. काव्यसंग्रह—हिन्दी अथवा व्रजभाषा कविताओं का संग्रह, बंबई के हीराचंद द्वारा।

5. दूल्हाराम ने अपनी साधुता के लिए प्रसिद्ध व्यक्तियों की प्रशंसा में अनेक छंद लिखे हैं, जिनमें से बहुत से हिन्दी काव्य के रचयिता हैं।

6. वार्ता—वल्लभ और उनके प्रथम शिष्यों के सम्बन्ध में जो निस्संदेह वल्लभ की तरह हिन्दी की धार्मिक कविताओं के रचयिता थे।

7. भक्त चरित्र—हिन्दू संतों की गाथा। जो सामान्यतः धार्मिक भजनों व गीतों के रचयिता हैं जैसे 14वीं शताब्दी के हिन्दी कवि और कई रचनाओं के रचयिता उद्धव ।

8. भक्तमाल—इसके कई संकलन हैं। इन विभिन्न संकलनों में मूल 'छप्पय' नामक छंद हैं। ये छंद वैष्णव संतों के सम्बन्ध में हैं। ये हिन्दुई या पुरानी हिन्दी के लोकप्रिय धार्मिक भजनों या गीतों के रूप में हैं, अत्यन्त प्रसिद्ध हैं और नाभा जी की देन हैं। उन्हें नारायणदास ने सुधारा और पहले कृष्णदास ने फिर बहुत बाद को प्रियादास ने विकसित किया।

तासी ने प्रथम संस्करण के समय भक्तमाल के कृष्णदास वाले संस्करण को देखा था, द्वितीय संस्करण प्रस्तुत करते समय प्रियादास वाला संस्करण भी, जिसकी एक हस्तलिखित प्रति स्वयं उनके पास हो गई थी।

9. राग कल्पद्रुम—कृष्णानन्द व्यासदेव उपनाम राम सागर, 1800 चौपेजी पृष्ठों की जिल्द, हिन्दी के लोकप्रिय गीतों का बृहत् संग्रह।

10. सभाविलास—हिन्दी कविताओं का संग्रह, पं० धर्मनारायण 'जमीर' कृत।

11. सुजान चरित्र—सूदन कृत, दो सौ से अधिक हिन्दुई कवियों की एक प्रकार की जीवनी।

सूची पत्रों से तासी को ग्रंथ सूची भाग के लिए बहुत बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी के देवनागरी अक्षरों वाले सूची पत्र से विशेष रूप से। संग्रह भाग के लिए अंग्रेजों द्वारा संकलित इन दो संग्रहों से लाभ उठाया गया है :

(क) सेलेक्शन्स फ्रॉम दि पापुलर पोइट्री ऑफ दि हिन्दूज—इसमें 59 लोकप्रिय भारतीय गीतों के उदाहरण हैं। इनसे अनेक प्राचीन कवियों का परिचय प्राप्त होता है।

(ख) दूसरे संग्रह में तारिणीचरण मित्र का भी सहयोग था। इस संग्रह से तासी ने विशेष लाभ उठाया था। इसमें भक्तमाल से लंबे उद्धरण, कबीर के रेखते, तुलसीकृत रामायण का एक कांड, हितोपदेश के उर्दू रूपांतर से उद्धरण, जवाँ कृत शकुन्तला की कथा और अंत में 348 छोटी-छोटी कविताएँ हैं जिनमें से अनेक लोकप्रिय गान बन गई हैं।

इतिहास विचार

इस प्रकरण में तासी ने यह दिखाया है कि वे इतिहास की कालक्रम वाली पद्धति से अनभिज्ञ नहीं थे, पर सामग्री के अभाव में उन्हें वर्णानुक्रम का सहारा लेना पड़ा। इनके पश्चात् उन्होंने विभिन्न शताब्दियों में होने वाले हिन्दुई और हिन्दुस्तानी के कुछ कवियों का नामोल्लेख किया है। इस प्रकरण की सामग्री का उपयोग आगे 'तासी और सरोज' वाले प्रसंग में मैंने किया है, इसलिए इसे यहाँ विस्तार नहीं दिया जा रहा है।

लेखक-वर्ग-विचार

अब हमें इन लेखकों के वर्ग निर्धारित कर लेने चाहिए। सर्वप्रथम स्थापित होने वाली विभिन्नता, जो अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होती है, उन्हें हिन्दुओं और मुसलमानों में अलग-अलग करना है, तो भी ऐसा करते समय यह देखने को मिलेगा कि किसी भी मुसलमान ने हिन्दुई या हिन्दी बोली में नहीं लिखा, (स्वयं तासी के ग्रंथ से सिद्ध है कि बहुत से मुसलमानों ने हिन्दी में रचना की थी, जैसे अमीर खुसरो, कबीर, जायसी, गुलाम नबी 'रसलीन' आदि), जबकि बहुत से हिन्दुओं ने चाहे उर्दू,

चाहे दक्खिनी में लिखा है, साथ ही उन्होंने बहुत पहले से फारसी में लिखा था, जैसा कि सैयद अहमद ने भी उस उद्धरण में कहा है, जो मैंने 'आसार उस्सानादीद' से दिया है। किन्तु जबकि मेरे द्वारा उल्लिखित तीन हजार भारतीय लेखकों में से दो हजार दो सौ से अधिक मुसलमान लेखक हैं, तो हिन्दू लेखक आठ सौ हैं, और इन पिछलों में से भी केवल दो सौ पचास के लगभग हैं जिन्होंने हिन्दी में लिखा है। वास्तव में इस वर्ग के सभी लेखकों को जान लेना कठिन है, क्योंकि हिन्दी कवियों के तर्जकारों का अभाव है और इस प्रकार एक बहुत बड़ी संख्या हमें अज्ञात है जबकि उर्दू लेखकों के बारे में यह बात नहीं है, जिनकी मूलजीवनियों में कम से कम नाम देने का ध्यान तो रखा गया है। विशेषत: पंजाब, कश्मीर, राजपूताना और उत्तर-पश्चिम प्रांतों के प्राचीन प्रदेशों, दिल्ली, आगरा, व्रज और बनारस के हिन्दू हैं, जिन्होंने हिन्दी में लिखा है।

जहाँ तक दक्खिनी कवियों से सम्बन्ध है, वे दो सौ नहीं हैं। इस प्रकार मेरे द्वारा उल्लिखित कवियों में से बहुत बड़ी सख्या में वास्तविक उर्दू बोली में लिखा है, जो सबसे अधिक शुद्ध हिन्दुस्तानी समझी जाती है।

नाम विचार

मूल ग्रंथ में कवियों का विवरण दिया गया है। पाद टिप्पणी में प्रत्येक नाम का अर्थ भी समझाया गया है, जैसे अंगद (यह शब्द एक बानर बालि के पुत्र का नाम है, जो रामायण की कथा में भाग लेता है), अग्रदास (हिन्दी अग्र आगरा नगर का सेवक), अभिमन्यु (अति प्रतिष्ठित)। पर यह सब व्यर्थ हैं। हिन्दू अपने देवताओं या उपदेवताओं के नाम ग्रहण करते हैं। उदाहरणार्थ हर, नारायण, राम, लक्ष्मण, गोपीनाथ, गोकुलनाथ, काशीनाथ। देवताओं के सेवक रूप में—शिवदास, कृष्णदास, माधोदास, केशवदास, नंददास, हलधरदास, सूरदास। हिन्दू केवल अपने देवताओं के ही दास नहीं हैं, वरन् पवित्र नगरों और दिव्य नदियों तथा पौधों के भी दास हैं। इस प्रकार गंगादास, तुलसीदास, अग्रदास, काशीदास, मथुरादास, द्वारिकादास मिलते हैं। देवताओं का प्रिय अर्थ में—श्रीलाल, हरवंशलाल। देवताओं का दिया हुआ अर्थ में—भगवानदत्त, रामप्रसाद, शिवप्रसाद, कालीप्रसाद।

ब्राह्मणों को शर्मा, चौबे, तिवारी, दुबे, पांडे, शास्त्री की उपाधियाँ दी जाती हैं। क्षत्रियों, राजपूतों और सिक्खों को ठाकुर, राइ, सिंह की, वैश्यों, व्यापारियों या महाजनों को 'साह' या 'सेठ' और 'लाला' की, शिक्षितों को 'पंडित' और 'सेन' की, वैद्यों को 'मिश्र' की।

हिन्दू फकीर 'गुरु', 'भगत' या 'गोसाईं' या 'साह' और सिक्ख फकीर 'भाई' कहे जाते हैं।

'श्री' और 'देव' हिन्दुओं की आदर सूचक उपाधियाँ हैं। पहली का ठीक-ठीक अर्थ है 'संत' और दूसरी का 'देवता'। 'श्री' नामों से पहले और 'देव' बाद में रखी जाती है। इन उपाधियों का प्रयोग नगरों, पर्वतों, नदियों, आदि के नाम के साथ भी होता है।

भारतवर्ष के नरेश अपने राज्य के सबसे अधिक प्रसिद्ध या अधिक कृपापात्र कवियों को 'कवीश्वर' उपाधि प्रदान करते हैं।

धर्म विचार

'लेखकों में मुसलमान हो गए कुछ हिन्दू मिलते हैं, किन्तु कोई मुसलमान ऐसा नहीं मिलता जिसने हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया हो, जब तक वह किसी उग्र सुधारवादी सप्रदाय में प्रवेश न करे, जैसे सिक्खों का, जो अपना धर्म स्वीकार करने वाले मुसलमानों को 'मजहबी' कहते हैं। "वास्तव में मुसलमान से हिन्दू होने में अवनति करना है, जबकि हिन्दू से मुसलमान होना स्पष्टत: उन्नति करना है, (तासी की ही भाँति हर एक व्यक्ति इसी ढंग पर सोच सकता है, हिन्दी और हिन्दू के प्रति तासी की यह धारणा स्पष्ट बताती है कि वह इनके साथ क्या न्याय कर सकता है), क्योंकि ईश्वर की एकता और भविष्य जीवन में विश्वास उसका आधार है।"

इसी प्रकार कुछ हिन्दू ऐसे भी मिलते हैं जिन्होंने ईसाई मत स्वीकार कर लिया है, और साथ ही, अत्यन्त साधारण और कम सुनी जाने वाली बात कि कुछ मुसलमान ईसाई हो गए हैं।

हिन्दी के लगभग सभी लेखक हिन्दुओं के नवीन संप्रदायों से संबन्ध रखते हैं अर्थात् जैनों, कबीर पंथियों, सिक्खों और सब प्रकार के वैष्णवों से। इन संप्रदायों के गुरू भी कवि हैं, वे हैं रामानन्द, वल्लभ, दरयादास, गीतगोविंद शीर्षक प्रसिद्ध संस्कृत कविता के रचयिता जयदेव, दादू, वीरभान, बाबालाल, रामचरण, शिवनारायण आदि।

केवल बहुत थोड़े शैव हैं, जिन्होंने हिन्दी में लिखा है। अधिकतर वे पुरानी पद्धति के साथ-साथ पुरानी भाषा के प्रति आसक्ति रखते हैं।

हिन्दुस्तानी के मुसलमान लेखक शीया, सुन्नी, सैयद-अहमदी और बहाबी हैं। सूफी फकीर हैं, और भिक्षुक भी। पेशेवर शायर। बादशाह शायर। महिला शायर भी हैं।'

इन विभिन्न शीर्षकों से तासी की भूमिका का विश्लेषण प्राय: उन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत किया गया है। तासी ने बहुत कुछ जानने का प्रयास किया है। कभी वह सफल रहा है, कभी असफल। हिन्दी और हिन्दू के प्रति पूर्वाग्रह रखने के कारण वह न्याय नहीं कर सका है। यह विश्लेषण यद्यपि हिन्दी साहित्य के इतिहास के अध्ययन के लिए बहुत आवश्यक नहीं है, फिर भी जिज्ञासा तृप्ति के लिए यह यहाँ दिया गया है।

तासी और सरोज

तासी के ग्रंथ का द्वितीय संस्करण (1870-71 ई०) शिवसिंह सरोज के प्रथम संस्करण (1878 ई०) के सात वर्ष पहले हो चुका था, पर सरोजकार को इसका पता न था। इस ग्रंथ का हिन्दी साहित्य के अध्येताओं ने कभी भी उपयोग नहीं

किया, क्योंकि वे फ्रांसीसी भाषा से अनभिज्ञ थे। और इस ग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद भी नहीं हुआ, जिसका कि वे उपयोग कर पाते। इसके प्रथम संस्करण का उपयोग सर जार्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहास 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' (1888 ई०) में सरोज की तिथियों की जाँच-पड़ताल के सम्बन्ध में किया था। वे इसके द्वितीय संस्करण का उपयोग नहीं कर सके, संभवतः उन्हें इसका पता न था। व्यावहारिक दृष्टि से भी सरोज का महत्व तासी से अधिक है क्योंकि इसका उपयोग अब तक बराबर होता गया है।

डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय इस ग्रंथ की प्रशंसा करते हुए 'अनुवादक की ओर से' प्रकरण के अन्तर्गत लिखते हैं—

'फ्रेंच भाषा में लिखित 'इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी' का अपना विशेष स्थान है, क्योंकि हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को सूत्रबद्ध रूप में स्पष्ट करने का यह सर्वप्रथम प्रयास था।'

पाद टिप्पणी में वे पुनः लिखते हैं—

'सेंगर ने सरोज की भूमिका में लिखा है : 'मुझको इस बात के प्रकट करने में कुछ संदेह नहीं कि ऐसा संग्रह कोई आज तक नहीं रचा गया।' तासी ने कवियों की कविताओं का संग्रह तो नहीं दिया, किन्तु 'कवियों के जीवन-चरित्र' सन्, संवत, जाति, निवास-स्थान आदि उनकी रचना से छः वर्ष पूर्व द्वितीय बार तासी द्वारा प्रस्तुत किए जा चुके थे।'

इस सम्बन्ध में मुझे कहना है कि दीर्घकालीन गाथा को सूत्रबद्ध रूप में स्पष्ट करने का सर्वप्रथम प्रयास डा० सर जार्ज ग्रियर्सन ने अपने 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' में 1888 ई0 में किया। ग्रियर्सन के पहले हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को एकसूत्रता न सरोज द्वारा मिली और न तासी के इस ग्रंथ द्वारा ही। दोनों ग्रंथों में कवि रूपी मणियाँ बिखरी हुई हैं। पुनः सेंगर ने अपने ग्रंथ के सम्बन्ध में जो बात कही है, एकदम ठीक है। सेंगर का अभिप्राय था कि सरोज जैसा संग्रह हिन्दी में उनके समय तक कोई नहीं रचा गया था, यह बात अपनी जगह पर ठीक है। सेंगर और तासी के ग्रंथों में हिन्दी कवियों और लेखकों के इतिवृत्त दिए गए हैं, वहाँ तक इनमें समानता है, पर सरोज काव्य-संग्रह है, जो तासी की रचना नहीं है। सरोजकार ने संग्रह की ही प्रशंसा की है, यद्यपि उसका कारण संलग्न इतिवृत्त ही है।

तासी के ग्रंथ को 'हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को सूत्रबद्ध रूप में स्पष्ट करने का सर्वप्रथम प्रयास' कहना पूर्णतया भ्रामक है। कवियों के विवरण नाम वर्णानुक्रम से दिए जाने के कारण पहले तो इसमें सूत्रबद्धता है ही नहीं, पुनः यह हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को प्रस्तुत भी नहीं करता। यह मुख्यतया हिन्दुस्तानी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को प्रस्तुत करता है। सरोज और तासी में एक और महान अन्तर है। वह अन्तर दृष्टिकोण का है, निष्ठा का है। शिवसिंह की निष्ठा एकमात्र हिन्दी में है। तासी की निष्ठा बँटी हुई है। उसकी निष्ठा का नौ भाग उर्दू

के पक्ष में है, एक भाग हिन्दी के, और वह भी लगे हाथ। तासी उर्दू का इतिहास प्रस्तुत कर रहा था, लगे हाथों उसने हिन्दी के सम्बन्ध में भी कुछ कह दिया। मैं तासी का अवमूल्यन नहीं करना चाहता, पर मुझे उसका अति-मूल्य भी अभीष्ट नहीं। मूल्यांकन ठीक-ठीक होना चाहिए।

तासी द्वारा दी गई सूचनाएँ अधिकाँश में छपे हुए ग्रंथों के सम्बन्ध में है, कहाँ से छपे, किसके द्वारा संपादित हुए या रचे गए, कब प्रकाशित हुए, ग्रंथ का आकार क्या है, उसमें कितने पृष्ठ हैं, प्रत्येक पृष्ठ में कितनी पंक्तियाँ हैं, आदि-आदि बातें बताई गई हैं। ये सूचनाएँ तो ठीक हैं, पर इतिवृत्त सम्बन्धी बहुत-सी सूचनाएँ अशुद्ध हैं। कवि संख्या भी सरोज की तुलना में बहुत कम है। बहुत कम सूचनाएँ ऐसी हैं, जो तासी में सरोज से अधिक हों और अन्यत्र दुर्लभ हों और साथ ही जिनकी जानकारी से हिन्दी साहित्य का किसी भी अंश में विशेष उपकार होने की संभावना हो, सन्-संवत भी बहुत ही कम दिए गए हैं। इस दृष्टि से तो तासी का यह ग्रंथ सरोज के सामने ठहर ही नहीं सकता।

तासी का महत्व - इतना ही है कि उसने सुदूर विदेश में रहते हुए एक विदेशी भाषा के प्रति इतनी अभिरुचि दिखलाई और उसके कवियों के सम्बन्ध में इतनी जानकारी प्राप्त की तथा उन्हें पुस्तक रूप में संकलित किया, साथ ही उस पुस्तक का नाम भी साहित्य का इतिहास रखा, जो इस जैसे ग्रंथ के लिए अत्यन्त महत्वाकांक्षापूर्ण है। शिवसिंह ने अपने ग्रंथ को कहीं भी साहित्य का इतिहास नहीं घोषित किया। इन दोनों ग्रंथों में कवियों का इतिवृत्त उनके नामों के वर्णानुक्रम से दिया गया है, कालक्रम से नहीं। ऐसी दशा में प्रवृत्तियों के अनुसार युग-विभाजन और युगों के अनुसार सामान्य प्रवृतियों का विश्लेषण तो संभव नहीं। इन सबके अभाव में कोई भी ग्रंथ इतिहास नाम प्राप्त करने का अधिकारी नहीं। निश्चय ही तासी इतिहास की पद्धति से अवगत थे, जैसाकि वे भूमिका में लिखते हैं—

"मौलिक जीवनियाँ जो मेरे ग्रंथ का मूलाधार हैं, सब तखल्लुसों या काव्योपनामों के अकारादि क्रम में रखी गई हैं। मैंने यही पद्धति ग्रहण की है, यद्यपि शुरू में मेरा विचार कालक्रम ग्रहण करने का था, और मैं यह बात छिपाना नहीं चाहता कि यह क्रम अधिक अच्छा रहता या कम से कम जो शीर्षक मैंने अपने ग्रंथ को दिया है उसके अधिक उपयुक्त होता, किन्तु मेरे पास अपूर्ण सूचनाएँ होने के कारण उसे ग्रहण करना कठिन ही था। वास्तव में जब मैं उसके सम्बन्ध में कहना चाहता हूँ, मौलिक जीवनियाँ हमें यह नहीं बतातीं कि उल्लिखित कवियों ने किस काल में लिखा।··· जहाँ तक हिन्दी लेखकों से सम्बन्ध है उनकी भी अधिकाँश रचनाओं की निर्माण तिथियाँ निश्चित नहीं हैं। यदि मैंने कालक्रम वाली पद्धति ग्रहण की होती, तो अनेक विभाग स्थापित करने पड़ते। पहले मैं उन लेखकों को रखता, जिनका काल अच्छी तरह ज्ञात है, दूसरे में उनको रखता जिनका काल संदेहात्मक है, अन्त में, तीसरे में उन्हें, जिनका काल अज्ञात है।···अपना कार्य सरल बनाने और पाठक की सहूलियत

दोनों की दृष्टियों से मुझे यह पद्धति, यद्यपि वह अधिक बुद्धि संगत थी, स्वेच्छा से छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा।'

—हिन्दुई साहित्य का इतिहास भूमिका, प्रथम संस्करण, पृ० 12।
,भूमिका, द्वितीय संस्करण, पृ० 106-107।

अपने इतिहास के दूसरे संस्करण की भूमिका में (1870 ई०) तासी ने विभिन्न शतियों में होनेवाले हिन्दी और हिन्दुस्तानी कवियों का भी उल्लेख किया है। उसने विभिन्न शतियों में निम्नांकित हिन्दी कवियों की चर्चा की है :

(1) नवीं शती—'अमर शतक' द्वारा ज्ञात संस्कृत कवि शंकर आचार्य। तासी के अनुसार इन्होंने 'कुछ हिन्दी कविताएँ लिखी प्रतीत होती हैं'। अनुवाद में इनका विवरण परिशिष्ट 7 में (पृ० 394-98) दिया गया है। यह वस्तुतः प्रसिद्ध शंकराचार्य हैं, जिनका हिन्दी से कोई सम्बन्ध नहीं। तासी का इनको हिन्दी का कवि मानना उसका विशुद्ध भ्रम है।

(2) ग्यारहवीं शती (1080 ई० के लगभग)—मुसलमान कवि मसूरे साद। इस कवि के विषय में हिन्दी संसार को कोई जानकारी नहीं। हिन्दुई साहित्य का इतिहास में इसको सम्मिलित नहीं किया गया है।

(3) बारहवीं शती—चंद जो राजपूतों के होमर कहे जाते हैं और पीपा जिनकी कविताएँ सिक्खों के आदि ग्रंथ में हैं। वस्तुतः रामानंद के प्रसिद्ध शिष्य पीपा का समय पंद्रहवीं शती है, बारहवीं नहीं।

(4) तेरहवीं शती—बैजू बावरा प्रसिद्ध कवि और गवैया। ये भी 15वीं शती के हैं।

(5) चौदहवीं शती—दिल्ली के अमीर खुसरो और हैदराबाद के नूरी। हिन्दी साहित्य के इतिहासों में खुसरो का उल्लेख मिलता है। अभी तक 'नूरी' को हिन्दी वालों ने स्वीकार नहीं किया है।

(6) पंद्रहवीं शती— इस शती में आधुनिक सम्प्रदायों के प्राचीनतम संस्थापक दिखाई पड़ते हैं, जिन्होंने भक्ति सिद्धांत सम्बन्धी भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया है और जिन्होने इस बोली में धार्मिक भजनों और नैतिक कविताओं का सर्जन किया है। उनमें विशेष ये हैं—

(क) कबीर—इन्होंने साहसपूर्वक संस्कृत के प्रयोग का विरोध किया।
(ख) श्रुतगोपालदास—सुखनिधान के संकलयिता और कबीर के शिष्य।
(ग) धरमदास—अमरपाल के रचयिता। कबीर के शिष्य।
(घ) भगोदास—बीजक के संकलयिता। कबीर के शिष्य।
(ङ) नानक—जन्म 1669 ई० में। मृत्यु 90 वर्ष की वय में। सिक्ख मत के प्रवर्तक।
(च) लालच—'पश्चिमी हिन्दुस्तानी में लिखित एक भागवत के संकलनकर्ता।' यह डलमऊ वाले प्रसिद्ध लालचदास हलवाई हैं। इन्होंने भागवत का अनुवाद 1471 ई० में किया था।

(7) सोलहवीं शती—(क) सुखदेव : 'इनके सम्बन्ध में प्रियादास ने एक विशेष लेख दिया है।' प्रियादास ने जिन शुकदेव के सम्बन्ध में लिखा है, वे परीक्षित को भागवत की कथा सुनानेवाले, व्यास के पुत्र प्रसिद्ध शुकदेव हैं, जिनका समय कलियुग में तो है नहीं, फिर सोलहवीं शती की कौन बात ! प्रियादास का उक्त विशेष लेख भक्तमाल की टीका के अंतर्गत 98 संख्यक कवित्त है। तासी ने अपने ग्रंथ में सुखदेव को ओरछा का रहनेवाला कहा है। उन्होंने संभवत: शुकदेव मुनि के पिता महर्षि व्यास को ओरछावासी हरिराम व्यास समझ लिया है। प्रियादास के कवित्त में व्यास नाम आया है :

'व्यास से पिता को नहीं उत्तर हु दियो है'

(ख) नाभाजी—भक्तमाल मूल के रचयिता।

(ग) वल्लभ—प्रसिद्ध साम्प्रदायिक गुरु और कवि। वल्लभाचार्य जी हिन्दी के लेखक या कवि नहीं थे।

(घ) दादू—प्रसिद्ध साम्प्रदायिक गुरु और कवि।

(ङ) विहारी—सतसई के प्रसिद्ध रचयिता।

(च) गंगादास—विद्वान काव्यशास्त्री।

इन छहों में से केवल वल्लभाचार्य नीचे 17वीं शती में वर्णित सूर, तुलसी, केशव के पूर्ववर्ती हैं, नाभा समकालीन हैं और अन्य दादू, बिहारी, गंगादास परवर्ती।

(8) सत्रहवीं शती—सूरदास, तुलसीदास, केशवदास।

(9) अठारहवीं शती—(क) गंगापति—हिन्दुओं के विभिन्न दार्शनिक सिद्धान्तों से सम्बन्धित एक प्रबन्ध के रचयिता।

(ख) वीरभान—साध सम्प्रदाय के संस्थापक और धार्मिक कविताओं के रचयिता।

(ग) रामचरण—अपना नाम लगे हुए एक सम्प्रदाय के संस्थापक और पवित्र भजनों के रचयिता।

(घ) शिवनारायण—एक सम्प्रदाय के संस्थापक और हिन्दी छंदों में 11 ग्रंथों के रचयिता।

(10) उन्नीसवीं शती—(क) बख्तावर—इन्होंने जैन सिद्धांतों की पद्य में व्याख्या की है।

(ख) दूल्हाराम—जीवनी लेखक, रामसनेही सम्प्रदाय के तीसरे गुरु।

(ग) छत्रदास—दूल्हाराम के धार्मिक उत्तराधिकारी, रामसनेहियों के चौथे गुरु।

शिवसिंह भी इतिहास लेखन की पद्धति से अनभिज्ञ नहीं थे। सरोज की भूमिका में उन्होंने पृष्ठ 8 पर भाषा काव्य निर्णय शीर्षक के अंतर्ग्रंत चार पृष्ठों में हिन्दी भाषा का मूल खोजने का प्रयास किया है और साथ ही एक-एक शताब्दी में होनेवाले प्रमुख कवियों का नामोल्लेख भी किया है। उन्होंने इस प्रकार का विवरण

संवत् 770 वि० से सं० 1934 तक का दिया है। सरोजकार ने विभिन्न शताब्दियों के अंतर्गत जिन कवियों को रखा है, वे प्रायः उसी शती के हैं। तासी के समान यहाँ भ्रामक विवरण नहीं है, साथ ही सरोज में दी हुई कवियों की संख्या भी बहुत है। अतः इस दृष्टि से भी तासी को सरोज की तुलना में बहुत महत्व नहीं दिया जा सकता।

हिन्दुई साहित्य का इतिहास में वर्णित 358 कवियों का विश्लेषण

अन्य भाषाओं के साहित्यकार

हिन्दुई साहित्य का इतिहास में डा० वार्ष्णेय ने तासी के ग्रंथ से छाँटकर कुल 358 कवियों को स्थान दिया है। इनमें से कुछ कवि तो निश्चित रूप से हिंन्दी के न होकर दूसरी भाषाओं के हैं।

संस्कृत के कवि

तासी ने निम्नांकित कवियों को हिन्दी का कवि समझ लिया है :

रणाकुंभा ने गीत गोविंद पर संस्कृत में टीका लिखी थी, पुष्पदंत ने महेन्द्र स्तोत्र की रचना की थी, भर्तृहरि श्रृंगार शतक, वैराग्य शतक, नीति शतक के रचयिता हैं। रूप और सनातन संस्कृत के लेखक हैं। ये दोनों भाई बंगाली थे। तासी ने इन्हें ब्रजभाषा का कवि माना और रूप और सनातन की गणना एक ही में की है। परिशिष्ट 6 में वर्णित जयदेव प्रसिद्ध संस्कृत काव्य 'गीत गोविंद' के एवं परिशिष्ट 7 में वर्णित शंकर आचार्य संस्कृत के अनेक ग्रंथों के रचयिता हैं।

बंगला के कवि

इस ग्रंथ में ईश्वरचंद्र विद्यासागर को भी मान लिया गया है। यह बंगला के साहित्यकार हैं। तासी के अनुसार इन्होंने किसी हिन्दी बैताल पचीसी का संपादन किया था।

मराठी के कवि

जनार्दन कृत 'कवि चरित्र' से अनेक कवियों का परिचय तासी ने लिया है। उक्त ग्रंथ मराठी का है। इसमें शक-संवत् का उपयोग हुआ है। कवि चरित्र के आधार पर उल्लिखित निम्नांकित सभी कवि मराठी के हैं। केवल नामदेव और त्रिलोचन हिन्दी के भी हैं :

(1) उद्धव चिद्धन, (2) एकनाथ स्वामी, (3) कान्हा पाठक, (4) चंगदेव यचंग केशवदास, (5) चोकमल, (6) जनार्दन रामचंद्र जी 'कवि चरित्र' के प्राणेता,

(7) जाना बेगम (जानाबाई, ज्ञानदेव की दासी), (8) ज्ञानदेव या ज्ञानेश्वर,, (9) तुकाराम, (10) दामाजी पंत, (11) नाथ, (12) नामदेव, (13) निंबराजा, (14) निवृत्तिनाथ, (15) प्रेमाबाई, (16) बोधले भाव, (17) भैरवनाथ, (18) मदरल भट्ट, (19) मध्व मुनीश्वर, (20) महीपत, (21) मुक्ताबाई, (22) मुकुन्दराजा, (23) मुक्तेश्वर, (24) मोरोपंत, (25) रघुनाथ पंडित, (26) रामजोशी, (27) वामन पंडित, (28) श्रीधर स्वामी, (29) सोमनदेव, (30) हेमंत पंत, (31) त्रिलोचन ।

त्रिलोचन और नामदेव की रचनाएँ सिक्खों के आदि ग्रंथ में संकलित हैं ।

गुजराती के कवि

नाथ भाई तिलकचंद ने बम्बई से 1868 ई० में 'पुष्टि मार्गनी वैष्णव' आदि वल्लभ सम्प्रदाय के धार्मिक पद प्रकाशित किए थे । ये नाथभाई तिलकचंद गुजराती कवि हैं ।

पंजाबी के कवि

फन्दक सिक्खों में व्यवहृत पवित्र गीतों के रचयिता हैं ।

उर्दू के कवि और लेखक

(1) (मुन्शी) चिरंजीलाल—यह चिरंजीलाल इंशा, धर्मसिंह का किस्सा और शरीउत्तालीम नामक उर्दू ग्रंथों के रचयिता थे ।

(2) (पं० नारायणदास) जमीर—फारसी-उर्दू के प्रसिद्ध कवि और लेखक । 1891 में इन्होंने भूगोलदर्पण, सभाविलास, बैताल पचीसी ग्रंथों को इंदौर से प्रकाशित किया । ये इनके लेखक नहीं हैं, प्रकाशक हैं ।

(3) (मिर्जा काजिम अली) जवाँ—यह फोर्ट विलियम कालेज कलकत्ता में उर्दू लेखक थे—शकुन्तला और सिंहासन बत्तीसी के उर्दू अनुवादक ।

(4) (पं० दयाशंकर) नसीम—गुलजारे नसीम और अलिफ लैला नामक प्रसिद्ध उर्दू रचनाओं के लेखक । इनके नाम पर दया भाग (? दाय भाग) ग्रंथ दिया गया है । इस ग्रंथ का अंग्रेजी नाम है—'ला ऑफ इनहेरीटेन्स, ट्रान्सलेटेड फ्राम दि संस्कृत इनटू हिन्दुई, ऑफ दि मिताक्षरा ।' मुझे तो यह किसी दूसरे दयाशंकर की रचना प्रतीत होती है ।

(5) (मुन्शी शंकर दयाल) फरहत—प्रेमसागर (लखनऊ) और तुलसीकृत रामायण के उर्दू पद्यों में अनुवादक (कानपुर 1866 ई०)।

(6) (मिर्जा महदी)—अनवारे सुहेली का 'बागे बहार' नाम से अनुवाद करने वाले ।

(7) मिर्जामी ।

(8) (लक्ष्मणप्रसाद या लक्ष्मणदास)—बरेली कालेज के उर्दू के लेखक।

(9) (लाला) लालजीदास—भक्तमाल का उर्दू में रूपांतर करने वाले। 1258 हि० (1842 ई०) में प्रकाशित।

(10) विला—मजहरअली खाँ विला—फोर्ट विलियम कालेज में थे। लल्लूलालजी के उर्दू ग्रंथों के सहयोगी।

(11) उमेदसिंह—महाराज होलकर के गुरु, गीता के उर्दू के अनुवादक।

कवियों की मिथ्या सृष्टि

जाँच पड़ताल से अनेक कवियों की मिथ्या सृष्टि सिद्ध होती है, जैसे—

(1) कृष्णदास—भक्तमाल की 1713 ई० (सं० 1769) में लिखित टीका के रचयिता। उक्त टीका प्रियादास की है।

(2) राजा गोपीचन्द—गोपी चन्द भरथरी के गीतों में गोपीचंद एक पात्र हैं न कि हिंदी के कोई लेखक।

(3-4) गोपीजन वल्लभ—'नहुष नाटक' भारतेन्दु के पिता गोपालचंद (गिरिधरदास) की रचना है, न कि किसी अज्ञात गोपी जन वल्लभ की। यह तो कृष्ण का एक विशेषण है। भारतेन्दु के पिता का एक बार गिरिधरदास और एक बार गोपालचंद नाम से दो बार उल्लेख हुआ है।

(5-6) महाकवि देव का एक बार (कब) देव, एक बार 'देवदत्त (राजा)' और एक बार 'देवराज' नाम से तीन बार उल्लेख हुआ है।

(7) विल्व मंगल—यह प्रसिद्ध साधु हैं। इनके हिन्दी कवि होने का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। यह संस्कृत के कवि थे।

(8) कवि लाल—इन्हें बिहारी सतसई की 'लाल चंद्रिका' का रचयिता कहा गया है। वस्तुतः यह कवि लाल प्रसिद्ध लल्लू जी लाल हैं।

(9) सुखदेव—रसार्णव के रचयिता सुखदेव मिश्र का दो बार वर्णन हो गया है—एकबार 'शुकदेव' और दूसरी बार 'सुखदेव'।

(10) सुदामा जी—'सुदामाजी की बाराखड़ी' के रचयिता सुदामा नहीं हैं। वे उसके पात्र हैं।

(11-13) ध्रुव, प्रह्लाद, सुदामा—ये तीनों कवि नहीं हैं, पौराणिक भक्त हैं। तासी के अनुसार इनकी रचनाएँ सिक्खों के 'शंभु ग्रंथ' में संकलित हैं। वस्तुतः रचनाओं में इनका नाम आया होगा और ये कवि समझ लिए गये।

(14) जाहरसिंह और जाहिरसिंह—दोनों एक हैं और 'कृष्ण फाग' या फाग के रचयिता हैं।

पाठ्यग्रंथ लेखक

हिन्दुई साहित्य में वर्णित बहुत से लेखक तासी के समकालीन हैं। इन्होंने

अधिकांश में पाठ्य पुस्तकें लिखी हैं और उनका साहित्यिक दृष्टि से कोई मूल्य नहीं। ऐसे लेखक ये हैं :

(1) अजीम बख्त—'लोगेरिज्म' और 'सिलेबस आफ नेचुरल फिलासफी।' हिन्दी सिलेबस के रचयिता, आगरा।

(2) कनारदास—गद्य में 'सनेह लीला' के रचयिता स्कूलों में पाठ्य-ग्रंथ।

(3) बाबू कालीचरण—स्त्री धर्म संग्रह, गणित सार के लेखक। 1868 ई० में बरेली से प्रकाशित।

(4) कुन्ज बिहारीलाल—सुलभ बीजगणित, रेखामिति तत्व, त्रिकोणमिति, कल विद्योदाहरण, बाल विद्यासार, खगोल विनोद, बीजात्मक रेखागणित के रचयिता। रचनाकाल 1851-61 ई०, आगरा।

(5) मुन्शी किसनलाल—भूगोग प्रकाश (1862), भूगोलसार (1864) के लेखक, आगरा।

(6) पंडित कृष्णदत्त—बुद्धि फलोदय के रचयिता तथा सत्य निरूपण और सिद्धि पदार्थ विज्ञान के सह-रचयिता।

(7) कृष्णराव—सागर में अंग्रेज सरकार के स्कूलों के निरीक्षक। 'पालीग्लैंठ इंटरलाइनर, बीइंग द फर्स्ट इन्स्ट्रक्टर इन इंग्लिश, हिन्दुई, एटसेट्रा के रचयिता, 1834, कलकत्ता।

(8) गोपाल—'शिक्षा चातुर्य' (नीति के चालीस दोहों का संग्रह) के रचयिता।

(9) (पंडित) घासीराम—भूगोल दीपिका (1860 ई०, बनारस) और संक्षेप 'इंगलिस्तान का इतिहास।' (1869 ई०, आगरा) के रचयिता।

(10) चिन्तामनि—ब्रजभाषा में गणित पर लिखे एक ग्रंथ के रचयिता। सम्भवतः यह कुछ और पहले के हों।

(11) पंडित चुन्नालाल—राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के 'इतिहास तिमिर नाशक' में आए कठिन उर्दू शब्दों का 'इतिहास तिमिर नाशक प्रकाश' नाम से कोष प्रस्तुत करने वाले।

(12) पंडित ठाकुरदास—गणित प्रश्नावली, 1868, बनारस के रचयिता।

(13) देवी दीन—भूगोल जिला इटावा। (इटावा) 1868 ई० के रचयिता।

(14) (श्री पंडित) बापू देव शास्त्री—बनारस के संस्कृत कालेज में गणित के अध्यापक। बीजगणित (1851, बनारस), व्यक्तगणित अभिधान (आगरा, 1856), त्रिकोणमिति (बनारस 1859), भूगोल वर्णन (मिर्जापुर, 1853), और भूगोल सार ग्रंथों के रचयिता।

(15) बालकृष्ण शास्त्री—'भूगोल विद्या' या भूगोल वृत्तान्त के अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद करने वाले, 1860, इलाहाबाद।

(16) बालगंगाधर शास्त्री—1810 में राजापुर में उत्पन्न, 1829 में दिल्ली में प्रोफसर, 1846 में बम्बई में मृत्यु। बाल व्याकरण, नीतिकथा, सूर संग्रह,

भूगोल विद्या के रचयिता ।

(17) पंडित बेनीराम—हिन्दी, उर्दू दोनों में 'सागर का भूगोल' के लेखक, सागर 1856 ।

(18) पंडित मगनलाल—मुव्तदी की पहली किताब (? उर्दू) फर्रुखाबाद और बद्रीनाथ की कहानी (1850 इलाहाबाद) के रचयिता । इन्होंने 'गोधन शीतला के टीका देने का वर्णन' नामक पुस्तक हिन्दी, उर्दू दोनों में लिखी है । यह प्रयाग के रहनेवाले चिकित्सक थे ।

(19) मथुराप्रसाद मिश्र—बनारस कालेज में थे । इन्होंने बाह्य प्रपंच दर्पण (अंग्रेजी से अनूदित 1861, रुढ़की), लघु कौमुदी (हिन्दी में रूपांतरित अंग्रेजी व्याकरण) बनारस 1849, तत्वकौमुदी (हिन्दी में संस्कृत व्याकरण, बनारस 1868), अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दी में त्रैभाषिक शब्दकोश, और वृहत् चाणक्य (संस्कृत-हिन्दी) ग्रंथों की रचना की थी ।

(20) मनोहरलाल—बालोपदेश के रचयिता ।

(21) पंडित मोहनलाल—पहले सर अलेक्जेण्डर बर्न्स के मुन्शी, फिर मथुरा जिला में तहसीलदार । बीजगणित, रेखागणित, सिद्धिफलोदय, सिद्धि पदार्थ विज्ञान, खुलासा गवर्नमेंट गजट 1840-49 ई०, गणित निधान, सार वर्णन, सिद्धि परीक्षा ज्ञान, पदार्थ विद्या आदि के लेखक । इन्होंने भागवत भी लिखा था ।

(22) रतनलाल—अंग्रेजी शीर्षक वाले 3 हिन्दी ग्रंथों के लेखक । भूगोल, इतिहास ।

(23) रत्नेश्वर पंडित—'ए जर्नी फ्रॉम सिहोर टु बाम्बे इन ए सिरीज ऑफ लेटर्स' शीर्षक हिन्दी ग्रंथ के लेखक—1847 ई०, आगरा ।

(24) रामकिशोर—पब्लिक रिवेन्यू विद द अब्स्ट्रेक्ट, ऑफ दि रिवेन्यू ला' शीर्षक, दिल्ली से प्रकाशित हिन्दी पुस्तक के रचयिता ।

(25) रामकिश्न पंडित—दिल्ली निवासी कश्मीरी । स्त्री शिक्षा के लेखक, गद्य-पद्य दोनों में ग्रंथ है । कलकत्ता 1834 ई० में प्रकाशित ।

(26) रामजसन—लाहौर के शिक्षा विभाग के कर्मचारी । भूगोलचन्द्रिका (बनारस 1856), हितोपदेश (रूपांतर), तुलसीकृत रामायण (शब्दार्थ सहित) के लेखक, अनुवादक एवं प्रकाशक । तीनों ग्रंथ बनारस से छपे ।

(27) रामदया या रामदयाल—(1) वृत्तान्त वफादार सिंह और गद्दार सिंह, (2) गणितसार, (3) गणित प्रकाश के लेखक, 1860-68 ई० ।

(28) रामरतन शर्मा—वाकयाते हिन्द नामक उर्दू ग्रंथ के हिन्दी अनुवादक । यह आउटलाइन्स ऑफ जाग्रफी ऐंड एस्ट्रानामी के भी अनुवादक हैं ।

(29) राम सरनदास—दिल्ली के डिप्टी कलेक्टर । हिन्दी उर्दू दोनों पाठ्य ग्रंथों के रचयिता जो 'रामसरनदास सीरीज' कही जाती थीं । अक्षर अभ्यास, फैलावट या गणित प्रकाश, मापतोल और पटवारियों की किताब । इनके इन चार ग्रंथों का उल्लेख हुआ है । रचनाकाल 1844-1849, आगरा से प्रकाशित ।

(30) (मीर) वजीर अली—दिल्ली कालिज में अंग्रेजी के प्रोफेसर। शिवप्रसाद की सहकारिता में गोल्डस्मिथ की पुस्तक का 'तर्जुमा तारीखे यूनान' (1833 ई०) नाम से अनुवाद किया। मिल की एलोट्मेन्टस आफ पोलिटकल एकानामी का भी अनुवाद किया और 'पहाड़े की पुस्तक' लिखी।

(31) शंकरदास—सिक्खों का इतिहास के रचयिता।

(32) मुन्शी श्रीप्रसाद—'जगत भूगोल' (1868 ई०, इलाहाबाद) के रचयिता, उर्दू के लेखक।

(33) मौलवी सफदर अली—मुसलमान से ईसाई हुए। जबलपुर में स्कूलों के इंस्पेक्टर—'अक्षरावली' के रचयिता, 1868 जबलपुर।

(34) सुन्दरलाल—'बरत महातम' के रचयिता।

(35) (मुन्शी) सुखदयाल—व्यापारियों की पुस्तक के रचयिता, 1859, लाहौर।

(36) पंडित हीरालाल—इंगलिस्तान का इतिहास, आगरा, 1860 के रचयिता।

धार्मिक खंडन-मंडन साहित्य

तासी में खंडन-मंडन साहित्य की रचना करने वाले निम्नांकित दो लेखकों का विवरण दिया गया है :

(1) नीलकंठ शास्त्री गोरे—ईसाई 'षड् दर्शन दर्पण' (दो भाग, कलकत्ता 1860 ई०) और 'वेदान्त मत विचार और ख्रिष्ट मत का सार, (मिर्जापुर 1854 ई०) के रचयिता। पहले ग्रंथ का फिट्ज एडवर्ड हाल ने 'ए रैशनल रिफ्यूटेशन ऑफ दि हिन्दू फिलासाफिकल सिस्टम्स' नाम से अंग्रेजी अनुवाद किया था।

(2) रेवरेण्ड के० एम० बनर्जी। ईसाई विशप कालेज कलकत्ता में प्रोफेसर। डायलाग्स ऑफ दि प्रिंसिपल स्कूल्स ऑफ हिन्दू फिलासाफी, इंब्रेसिंग ए फुल स्टेटमेन्स ऑफ देयर प्रामीनेन्ट डाक्ट्रिन्स ऐंड ए रिफ्यूटेशन पैसेजेज नेवर बिफोर प्रिंटेड आर ट्रान्सलेटेड' अंग्रेजी शीर्षक हिन्दी रचना के लेखक। उक्त हाल ने इसका भी अंग्रेजी अनुवाद किया था।

साधारण कोटि के अनुवादक

तासी के कुछ लेखक साधारण कोटि के अनुवादक मात्र हैं, जैसे—

(1) (पंडित) घनश्याम राय—उर्दू से 'डाक बिजली का प्रकाश' के अनुवादक। 1860 ई० इलाहाबाद।

(2) मिर्जा जान—एलीमेन्टरी ट्रीटाइज ऑन समरी ट्यूट्स का 'सरसरी के मुकदमों की पुस्तक' नाम से अनुवाद करने वाले। यह अनुवाद उर्दू से हिन्दी में किया गया है।

(3) लाला बलदेव प्रसाद—फारसी से अनुदित, एक ग्रंथ के रचयिता। तासी ने ग्रंथ का नाम नहीं दिया है।

(4) बाबू प्यारे मोहन बैनर्जी—इन्होंने ईश्वरचंद्र विद्यासागर कृत संस्कृत व्याकरण उपक्रमणिका का बंगाली से हिन्दी में अनुवाद किया था।

ज्योतिष ग्रंथों के कुछ रचयिता

तासी ने निम्नांकित ज्योतिष ग्रंथों के रचयिताओं को भी अपने ग्रंथ में स्थान दे दिया है :

(1) ओंकार भट्ट ए कम्पैरिजन आफ दि पुरानिक ऐंड सिद्धांतिक सिस्टम्स ऑफ ऐस्ट्रोनामी विद दैट ऑफ कापरनिकस (भूगोल सर्व)।

(2-5) कृष्ण जायसी, गंगाधर, महानन्द, महेश—अकबर ने उलुग बेग कृत ज्योतिष ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद कराया था। उसमें अबुल फजल फतह उल्ला के साथ-साथ ये लोग भी अनुवादक थे। ग्रंथ का नाम 'नवीन नक्षत्र तालिका' है।

(6) पंडित छगनलाल—सं० 1925 (1847 ई०) के लिए एक पंचांग के रचयिता।

वैद्यक ग्रंथों के रचयिता

तासी में कुछ लोग वैद्यक ग्रंथों के रचयिता हैं :

(1) अमरसिंह—'अमर विनोद' के रचयिता, संस्कृत से अनूदित, 1865 में मेरठ से प्रकाशित।

(2) जनार्दन भट्ट, गोस्वामी—'वैद्य रत्न' के कर्ता। 1864 ई० में आगरे से मुद्रित, 92 पृष्ठ। सरोज में भी इनका उल्लेख है।

(3) बाबू फतह नारायण सिंह—वैद्यामृत, बनारस 1924 वि० (1867 ई०)। संस्कृत में हिन्दी टीका सहित। इन्होंने संस्कृत ग्रंथ 'सिद्धांत' के आधार पर 'मेघमाल' नामक ज्योतिष ग्रंथ भी प्रस्तुत किया है (1868 ई०)।

(4) भट्ट जी—1864 में मेरठ से मुद्रित वैद दर्पण नामक वैद्यक ग्रंथ के रचयिता।

(5) सीताराम—चिकित्सा सम्बन्धी ग्रंथ 'दिल लगन' के रचयिता। 1865 में मेरठ से प्रकाशित।

पत्र संपादक

तासी में वर्णित अनेक सज्जन केवल पत्र-संपादक हैं :

(1) अली (मौलवी)—'ज्ञान दीपक' के, यह 1846 में कलकत्ता से हिन्दी, बँगला, फारसी और अंग्रेजी में निकलता था।

(2) गुलाब शंकर—'तत्वबोधिनी' साप्ताहिक, बरेली के संपादक।

(3) गोविंद रघुनाथ बत्ते—हिन्दी 'बनारस अखबार' और उर्दू 'बनारस गजट' के संपादक। 1854 की मई से 'आफताबे हिन्द' के भी संपादक।

(4) जवाहर लाल हकीम—इटावा से प्रजाहित (हिन्दी) मुहब्बत रिआया (उर्दू) पीपुल्स फ्रेन्ड (अंग्रेजी) निकालते थे। तीन भाषाओं में निकलता था।

(5) जयदत्त पंडित—नैनीताल के 'समय विनोद' पाक्षिक के संपादक। 'गोपीचंद' नामक ग्रंथ के रचयिता, 1868 ई०, कुमायूं।

(6) पालिराम—अमीर अहमद के उर्दू पत्र 'नजमुल अखबार' के हिन्दी रूपान्तर 'विद्यादर्श' के संपादक, मेरठ, पाक्षिक। उर्दू के 'नैरंगे नजर' का 'बरन चन्द्रिका' नाम से हिन्दी में अनुवाद भी किया है।

(7) (पंडित) बसीशर नाथ—मई 1868 से रतलाम से प्रकाशित होने वाले हिन्दी-उर्दू साप्ताहिक पत्र 'रतन प्रकाश' के संपादक।

(8) पं० मुकुन्दराम—लाहौर के विज्ञान सम्बन्धी पत्र 'ज्ञान प्रदायिनी पत्रिका' के संपादक।

(9) पंडित शिवनारायण—आगरे के उर्दू पत्र 'मुफीदे खलाइक', उसके हिन्दी रूपान्तर 'सर्व उपकारी' और अजमेर के 'जगलाभ चिन्तक' के संपादक थे। संस्कृत और हिन्दी में 'षट पंचासिका' (56 उक्तियाँ संग्रह किया, आगरा 1868।

(10) श्री किशन—आगरे से प्रकाशित 'पाप मोचन' हिन्दी पाक्षिक के संपादक।

(11) मुन्शी सदा सुखलाल—'बुद्धि प्रकाश' और उसके उर्दू रूपान्तर 'नूरूल अबसार' साप्ताहिकों के संपादक, आगरावासी थे। इन्होंने 'गंगा की नहर' का संक्षेप वर्णन भी हिन्दी-उर्दू में अंग्रेजी 'गैंजेज केनाल' नाम से किया है।

ग्रंथ-संपादक

तासी में उल्लिखित निम्नांकित सज्जन ग्रंथ-संपादक हैं :

(1) कृष्णलाल—राधा जी की बारहमासी सं० 1921 वि० और रामचंद्र की बारहमासी के संपादक, आगरा।

(2) बाबू गोकुलचन्द—जुगल किशोर विलास, पद्माभरण (पद्माकर कृत), हास्यार्णवनाटक, भर्तृहरि तीनों शतक, उपवन रहस्य, षट ऋतु वर्णन, रघुनाथ शतक के संपादक, बनारस, 1868।

(3) योगध्यान मिश्र—प्रेमसागर के एक संस्करण के संपादक, कलकत्ता।

(4) रामस्वरूप—मीर वली मुहम्मद की दो कविताओं—'श्रीकृष्ण जी की जन्म-लीला' और 'बालपन बाँसुरी लीला' के संपादक, फतहगढ़ से 1868 में प्रकाशित।

(5) बाबू अविनाशी लाल—शकुन्तला नाटक का संपादन किया, जो 1864 में बनारस में छपा।

(6) राजा दुर्गाप्रसाद शाद—पाँच रत्न (तुलसी की 5 कविताएँ,) लाल चन्द्रिका, सिंहासन बतीसी के संपादक, यह पटना के रईस थे।

(7) हरगोविन्द (उमेद लाल)—कीर्तनावली नाम से विभिन्न ईसाई कवियों द्वारा रचित धार्मिक कविताओं के संकलयिता, अहमदाबाद 1859।

(8) इशरत (पं० भोलानाथ चौबे)—बैताल पचीसी का संपादन किया और 'विक्रम विलास' नाम रखा।

कुछ प्रकाशक

तासी के कुछ लेखक केवल प्रकाशक हैं, जैसे :

(1) दशा भाई बहमन जी—इन्होंने 'गिलक्रिस्ट' के हिन्दी रोमन आर्थोएपिग्राफिकल अल्टीमेटम में लाटीनी अक्षरों में छपे जवां कृत शकुन्तला नाटक का फारसी अक्षरों में एक संस्करण 1848 में बम्बई से निकाला।

(2) बाबू विनचन्द बनर्जी—इनके संरक्षण में 'गणितसार' के दूसरे, तीसरे भाग लाहौर से 1863 में छपे।

(3) बाबू रघुनाथदास—सूर सागर रत्न, कवित्त रामायण, रसिक मोहन के प्रकाशक। सभी बनारस से 1864-65 में प्रकाशित।

(4) बाबू शिवचन्द्रनाथ—यह पत्रमालिका, महाजनी सार चन्द्रिका, चित्र चन्द्रिका, उर्दू आदर्श, लीलावती आदि के प्रकाशक हैं, आगरा।

(5) करीम बख्श (मौलवी मुहम्मद)—उर्दू के कवि। हिन्दी ग्रंथ 'विद्या चक्र' (दायराए इल्म का अनुवाद) के प्रकाशक।

शुद्ध साहित्यकार

इस प्रकार लगभग 132 कवि तो यों ही निकल जाते हैं। अब लगभग 226 कवि बचे रहते हैं। इनमें से अधिक से अधिक 150 को हिन्दी साहित्य के किसी बृहत इतिहास में स्थान दिया जा सकता है। शेष कवि नगण्य से हैं। आगे हमने तासी में वर्णित संग्रहणीय कवियों का इतिहास के काल विभाजन के साथ वर्णन किया है जिनको वहाँ नहीं स्थान दिया जा सका है उनकी अकरादि सूची यह है—1. अजोमयर, 2. अभयराम, 3. अभिमन्यु, 4. कबीरदास, 5. कर्माबाई, 6. कासीदास, 7. काशीनाथ, 8. काशीप्रसाद, 9. कृष्णसिंह जैन, 10. कृष्णदास, 11. गजराज, 12. गिर्धर, 13. जगरनाथ प्रसाद—माखनलाल के साथ भागवत का गद्य में अनुवाद करने वाले। सुखसागर नाम से यह लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से 1864 में छपा। 14. जहाँगीर दास, 15. जाहिर सिंह, 16. जैनुल आब्दीन-छत्रमुकुट के रचयिता, 17. तंधीराम या ठंढीराम, 18. मुन्शी कालीराम तमीज—खेतकर्म के रचयिता। 19. तारणीचरण मित्र, 20. दानसिंह, 21. देवीदास, 22. देवीदयाल—देवी सुकृत के रचयिता। 23. लाला गनपतराय नजीर—हिन्दी-उर्दू भागवत के रचयिता। 24. नरहरिदास—ज्ञानउपदेश के रचयिता। 25. नायक बख्शी—शाहजहाँ द्वारा संकलित हिन्दी गीतों के संग्रह 'सहस्र रस' के संपादक। 26. निश्चल दास—विचार सागर के रचयिता। वेदान्त सम्बन्धी ग्रंथ, 1868 में बम्बई से प्रकाशित। 27. नवनिधि राय—कथा सत्यनारायण के कर्ता, 1864 में मेरठ से प्रकाशित। 28. पद्म भागवत—रुक्मिणी मंगल के रचयिता।

तासी के अनुसार यह ग्रंथ भारतीय संगीत पर है। 29. बचासिंह गीतावली के रचयिता। 30. बलभद्र—बलभद्र चिंती के रचयिता। 31. बलिराम चित्त विलास के रचयिता। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति वर्णित है। 32. बाकुत पोथी वंशावली के रचयिता। 33. बैनी माधन (वेणी माधव) बारहमासी के रचयिता। 34. ब्रह्मानन्द स्वामी—शिवलीलामृत के रचयिता। 35. भवानी—बारहमासा के रचयिता। 1868 में फतहगढ़ से प्रकाशित। 36. मदन या मंडन, 37. मनबोध, 38. मनोहरदास—प्रबन्ध के रचयिता। 39. मीराभाई, 40. मुकुन्दसिंह, 41.मुक्तानन्द स्वामी—विवेक चिन्तामणि के रचयिता। अहमदाबाद से 1868 में प्रकाशित। 42. मोहन विजय मानतुंग चरित्र नामक जैनग्रंथ के लेखक। 43. रसिक सुन्दर— गंगा भक्त' के रचयिता। 44. राउ दनपत, 45.रागराजसिंह—'रुक्मिणी परिणय' के रचयिता। 46. रामगोलन—रामायण की टीका रचने वाले। 47. रामप्रसाद लक्ष्मीलाल—धर्मतत्वसार, विवेक सागर और कुछ लोकप्रिय गीतों के रचयिता। 48. रामानुज रामापति, 49. रामसिंह—पोथी रामायण के रचयिता। 50. लक्ष्मीराम, 51-52. वेणी और शंभु—शैव लेखक। 53. श्याम सुन्दर, 54. श्रीधव, 55. समललाल—'ज्ञान गश्त' (कायस्थ जाति का विवरण) के लेखक। 56. सरोधा प्रसाद—माघमेला के लेखक 1868 ई० इलाहाबाद। 57. सलीमसिंह—राणा कुम्भा के भतीजे। 58. हरिवा, 59. हरिहर, 60. हीरामन।

कवियों के सम्बन्ध में ऊपर जो कुछ विश्लेषण किया गया है उसे संक्षेप में यों व्यक्त किया जा सकता है :

(क) अन्य भाषाओं के कवि और लेखक	47
1. संस्कृत	4
2. बंगला	1
3. मराठी	29
4. गुजराती	1
5. पंजाबी	1
6. उर्दू	11
(ख) तासी द्वारा कवियों की मिथ्या सृष्टि	14
(ग) विविध वाङ्मय के रचयिता	77
1. पाठ्य ग्रंथ रचयिता—	36
2. धार्मिक खंडन-मंडन साहित्य रचने वाले	2
3. साधारण कोटि के अनुवादक	4
4. ज्योतिष ग्रंथ लिखने वाले	6
5. वैद्यक ग्रंथ लिखने वाले	5
6. पत्र संपादक	11
7. ग्रंथ संपादक	8
8. प्रकाशक	5

(घ) शुद्ध साहित्य के रचयिता	220
1. प्रसिद्ध साहित्यकार	160
2. अप्रसिद्ध साहित्यकार	60

तासी के आधार पर हिन्दी साहित्य का इतिहास

आदिकाल

तासी ने हिन्दी के प्रथम कवि की जाँच पड़ताल करनी चाही है और उसने प्रसिद्ध शंकराचार्य को हिन्दी का प्रथम कवि समझा है। भूमिका में वह लिखता है—

"यह निश्चित करना कठिन है कि हिन्दी के सबसे अधिक प्राचीन कवि किस समय हुए। तो भी मैंने 'अमर शतक' द्वारा ज्ञात संस्कृत कवि शंकराचार्य का उल्लेख किया है जो नवीं शताब्दी में रहते थे और जिन्होंने कुछ हिन्दी कविताएं लिखी प्रतीत होती हैं।"

—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, भूमिका, पृ॰ 160, पाद टिप्पणी 1।

शंकराचार्य के विवरण में भी इनके हिन्दी कवि होने का उल्लेख है :

"शंकराचार्य ने ईसवी सन् की नवीं शताब्दी में नवीनता के प्रवर्तक वैष्णवों के विरूद्ध कट्टर हिदुत्व या शैव मत को शक्ति प्रदान करना चाहा और संन्यासी ब्राह्मणों का एक मठ स्थापित किया। किन्तु इस प्रसिद्ध व्यक्ति और प्रख्यात संस्कृत लेखक का मैं यहाँ केवल इसलिए उल्लेख कर रहा हूँ क्योंकि उसने हिन्दी में लिखा प्रतीत होता है।"

यह ज्ञात है कि अन्य के अतिरिक्त सौ शृंगारिक कविताओं का प्रसिद्ध संग्रह 'अमर शतक' उनकी देन है।

—हिंदुई साहित्य का इतिहास, पृ॰ 294।

तासी ने अपना-सा प्रयत्न किया पर वे ठीक निर्णय पर नहीं पहुँच सका। 'अमर शतक' से उसका अभिप्राय 'अमरु शतक' या 'अमरुक शतक' से है, जो न तो प्रसिद्ध शंकराचार्य की रचना है और न जिसमें शंकराचार्य की कोई कविता ही संकलित है। प्रसिद्ध शंकराचार्य को 'अमरु शतक' से कुछ लेना-देना नहीं है। एक किंवदन्ति है कि मंडन मिश्र की स्त्री शारदा के कामशास्त्र सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर देने के लिए शंकराचार्य ने योगबल से राजा अमरुक के शव में प्रवेश किया और उसकी लावणिक रानियों के साथ भोगविलास करके सारी अभिज्ञता प्राप्त की और अमरुक शतक की रचना की। 'शंकर दिग्विजय' में और सब बातें तो हैं, उसमें 'अमरुक शतक' का कहीं कोई उल्लेख नहीं है। साथ ही साहित्य जगत में भी अमरुक शतक के प्रसिद्ध शंकराचार्य की रचना होने का कोई भी उल्लेख नहीं है। अतः उक्त जनश्रुति प्रामाणिक नहीं।

शंकराचार्य हिन्दी के कवि भी नहीं। उनकी सारी रचनाएँ संस्कृत में हैं।

अतः उनको हिन्दी साहित्य के इतिहास में किसी भी प्रकार स्थान नहीं दिया जा सकता। भक्तमाल के भक्तिसुधा स्वाद तिलक में शंकराचार्य का समय सं० 845 (788 ई०) दिया गया है।

तासी ने 11 वीं शती (1080 ई० के लगभग) के मुसलमान कवि मसूर-इ-साद का उल्लेख किया है। इसके सम्बन्ध में मैथेनियल व्लेंड ने 1853 ई० में 'जूर्नां एशियाटिक' में अत्यन्त रोचक बातें लिखी थीं[1]। हिंदुई साहित्य का इतिहास में इस कवि का उल्लेख नहीं हुआ है। हिन्दी संसार को इस कवि के सम्बन्ध में कोई सूचना नहीं प्राप्त है। यह उर्दू का कवि तो हो नहीं सकता, क्योंकि उस समय उर्दू का जन्म भी नहीं हुआ था। बिना इस कवि की कुछ रचना देखे कुछ कहना सम्भव नहीं प्रतीत होता।

12 वीं शती के दो हिन्दी कवियों का उल्लेख तासी ने भूमिका में किया है। ये हैं चन्द और पीपा[2]। इनमें से पीपा तो रामानन्द के शिष्य हैं और अपने गुरु भाई कबीर आदि के समकालीन हैं, चंद के नहीं। चंद का विवरण मुख्य ग्रंथ में दिया गया है। चंद के समकालीन आल्ह खण्ड के रचयिता जगनिक का भी तासी ने विवरण दिया है, उसे कवि का ठीक-ठीक नाम नहीं मालूम। वह उसे 'जगनाथ' कहता है। तासी ने जहाँ यह कहा है कि इस कवि की प्रशंसा स्वयं चंद ने की है, वहीं उसने यह भी लिखा है कि यह कवि अकबर बादशाह के शासनकाल में हुआ। इन दोनों कवियों के सम्बन्ध में तासी ने जो कुछ लिखा है, उसका संक्षेप नीचे दिया जा रहा है :

कवि चंद

12 वीं शती के अन्त में पृथ्वीराज के यहाँ दिल्ली में उपस्थित थे। इन्होंने 'पृथ्वीराज चरित्र' (? पृथ्वीराज रासो) लिखा है। इसके 69 समयों में पृथ्वीराज का शौर्य वर्णित है। इसमें राजस्थान के प्रत्येक राजवंश का कुछ-न-कुछ इतिहास है। तासी ने 'पृथ्वीराज रासो' के 'रासो' को 'राजसू' लिखा है और उसका अर्थ 'पृथ्वीराज का महान यज्ञ' किया है। 'जयचन्द प्रकाश' को भी चंद की रचना स्वीकार किया गया है। चंद के ग्रंथ का विस्तृत वर्णन चार पृष्ठों में दिया गया है।

जगनिक

पृथ्वीराज के शत्रु महोवा के राजा के चारण। चंद ने इनकी कवि-प्रतिभा और राज-भक्ति की प्रशंसा की है।

तासी ने इस कवि के सम्बन्ध में बड़ा धोखा खाया है। उक्त वर्णन देते हुए भी इन्हें अकबर के शासनकाल (1552-1605 ई०) में जीवित कहा गया है और इनका नाम 'जगनाथ' दिया गया है। 'राजसागर' में इनके 'जगन्नाथ' नाम से उल्लिखित होने का भी उल्लेख किया गया है। उक्त राजसागर वाले जगन्नाथ जो हों, जगनिक नहीं हैं।

1. हिंदुई साहित्य का इतिहास : भूमिका, पृ० 1.7। 2. वही पृ० 108।

13 वीं शति के कवियों में शेख सादी और बैजू बावरा का उल्लेख किया गया है।[1] सादी के सम्बन्ध मे लिखा गया है कि इन्होंने कुछ कविताएं उर्दू बोली में लिखना पसन्द किया। यह तासी का भ्रम है। शेख सादी विशुद्ध फारसी के लेखक थे। बैजू बावरा 13 वीं शती के नहीं हैं और भी उत्तरकालीन हैं, यह लोदियों के शासन-काल में हुए हैं।

14 वीं शती के कवियों में तासी ने दिल्ली के खुसरो और हैदराबाद के नूरी का नाम गिनाया है।[2] इनमें नूरी का विवरण 'हिंदुई साहित्य का इतिहास' में नहीं है। इस कवि के सम्बन्ध में हिन्दी के इतिहासों में कोई उल्लेख नहीं मिलता और बिना इसकी कविता का उदाहरण देखे इसके सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता। रहे अमीर खुसरो, इनका उल्लेख हिन्दी साहित्य के प्रत्येक इतिहास में मिलता है। फारसी में इनका निश्चय ही बड़ा गौरवपूर्ण स्थान है, पर हिन्दी में तो इनका उल्लेख खड़ी बोली के प्रारम्भिक प्रयोक्ता के रूप मे ही किया जाता है—किसी महान कवि के रूप में नहीं। तासी ने इनके सम्बन्ध में विस्तार से लिखा है। उसका सारांश आगे दिया जाता है।

खुसरो

यह 'तूतिए हिन्द' कहलाते थे। खुसरो का जन्म 631 हिजरी (1233 ई०) में मूमिनाबाद नामक एक गाँव में हुआ था। इनकी मृत्यु 725 हिजरी (1324-25 ई०) में हुई। खुसरो दिल्ली के सात बादशाहों की सेवा में रहे। इनकी भेंट फारसी के प्रसिद्ध कवि शेख सादी (मृत्यु 1291 ई०) से हुई थी, जो इनसे मिलने भारत आए थे। यह सूफी थे और प्रसिद्ध सूफी निजामुद्दीन औलिया के शिष्य थे। इन्होंने फारसी में 99 ग्रन्थ लिखे। यह 'तुर्कुल्लाह' भी कहे जाते थे। कभी-कभी अपनी छाप 'सुलतानी' भी रखते थे।

तासी ने इनकी निम्नांकित प्रसिद्ध गजल का अनुवाद किया है :

> जेहाल मिस्की मकुर तगाफुल, दुराय नैना बनाय बतियाँ
> किताबें हिज्रां न दारम ऐ जां, न लेहु काहे लगाय छतियां

तासी ने कुछ निस्बतें भी उद्धृत की हैं, जैसे :

प्रश्न—अनार क्यों न खाया ?
वजीर क्यों न बोला ?
उत्तर—दाना न था।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल से सम्बन्धित केवल तीन कवियों—चंद, जगनिक, खुसरो का विवरण तासी में है। मान कवीश्वर के प्रसंग में खुमान रासो का भी विवरण है, उसको ठीक ही अकबर कालीन रचना माना गया है। इसके सम्बन्ध में यह विवरण है :

"खुमान रास—मेवाड़ के नरेशों के वीर कृत। यह रचना अकबर के राजत्व

1. हिंदुई साहित्य का इतिहास : भूमिका, पृ० 108। 2. वही।

काल में संशोधित की गई प्रतीत होती है, किन्तु यह लिखी गई प्राचीन प्रमाणों के आधार पर ही है, जो नवीं शताब्दी तक के हैं। उसमें नरेशों के लम्बी वंशावली से सम्बन्धित अत्यधिक महत्वपूर्ण बातों, विशेषतः मुसलमानी आक्रमण काल, 13 वीं शताब्दी में अलाउद्दीन द्वारा चितौड़ की लूट और अन्त में राणा प्रताप और अकबर के युद्ध सहित राम तक मेवाड़ के सम्राटों की वंशावली दी गई है।"

—हिंदुई साहित्य का इतिहास, पृ० 210।

तासी ने यह विवरण टाड के आधार पर दिया है।

भक्तिकाल

(क) निर्गुण काव्यधारा : ज्ञानाश्रयी शाखा : रामानन्द और उनके शिष्यगण

रामानन्द जी यद्यपि सगुण राम के उपासक थे पर वे हठयोगी भी थे। यह रामानुजाचार्य के श्री सम्प्रदाय में थे। इनका जन्म माघ कृष्ण सप्तमी सं० 1356 वि० में प्रयाग में हुआ था और देहावसान वैशाख शुक्ल 3 संवत 1467 वि० को। यह स्वामी राघवानन्द के शिष्य थे और काशी में रहते थे। तासी ने इनके सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है उसका संक्षेप यह है :

रामानन्द

"बनारस के वैरागी, प्रसिद्ध हिन्दू सुधारक, रामानुज के शिष्य और कबीर के गुरु, वैष्णवों के समस्त आधुनिक सम्प्रदायों के सुधारक हैं। इनकी कविताएँ आदि ग्रंथ में हैं। 1400 ई० के आसपास उपस्थित। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबको बराबर स्थान देने वाले।

रामानन्द के शिष्य

भक्तमाल में रामानन्द के निम्नांकित 12 प्रधान शिष्य कहे गए हैं :

अनंतानन्द, कबीर, सुखा, सुरसुरा, पद्मावती, नरहरि,
पीपा, भवानन्द, रैदास, धना, सेन, सुरसुर की धरहरि

इनमें से निम्नांकित 6 का विवरण तासी में दिया गया है :

(1) कबीर, (2) पीपा, (3) भवानन्द, (0) रैदास, (5) धना, (6) सेन। इनके विवरणों का संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

कबीर—एकेश्वरवादी, सुधारक, अत्यन्त प्राचीन हिन्दी लेखक। भक्तमाल में दिए छप्पय और उस पर की हुई प्रियादास की टीका के कवियों का फ्रांसीसी अनुवाद तासी ने दिया है। कबीर का विवरण विस्तार से 17 पृष्ठों में दिया गया है। कबीर जुलाहे थे, रामानन्द के बारह प्रधान शिष्यों में से थे। वे हिन्दू-मुसलमान दोनों

द्वारा समादृत थे। मृत्यु के अनंतर शव और फूल की कथा भी दी हुई है। वे मूलतः मुसलमान थे। इनके सम्बन्ध की तिथियों का ऊहापोह किया गया है, पर किसी निश्चय पर नहीं पहुँचा गया है। कबीर ने हिन्दी में लिखा, साथ ही संस्कृत छोड़ हिन्दी में लिखने की प्रेरणा भी दी। इनके 21 ग्रंथों की सूची दी गई, जिनमें से अनेक कबीर के नहीं हैं। उक्त सूची 'हिंदुई साहित्य का इतिहास' में देखी जा सकती है। आचार्य शुक्ल ने कबीर का जन्मकाल सं० 1456 एवं मृत्युकाल सं० 1576 माना है।

पीपा—हिन्दू संत आदि ग्रंथ में रचनाएँ हैं। भक्तमाल में दिए छप्पय एवं प्रियादास की टीका के कवित्तों का फ्रांसीसी अनुवाद तासी ने दिया है। पीपा को 12वीं शती में जीवित कहा गया है, जो ठीक नहीं। यह कबीर के गुरुभाई और उनके समकालीन थे। इनका समय सं० 1450-1550 के बीच होना चाहिए।

भवानन्ददास—'अमृत धर' नामक दार्शनिक ग्रंथ के रचयिता। इस ग्रंथ में 14 अध्याय हैं।

रैदास—रामानन्द के शिष्य। चमार। रैदासी सम्प्रदाय के संस्थापक। इनकी रचनाएँ सिक्खों के आदि ग्रंथ में हैं। भक्तमाल में इन पर दिए छप्पय एवं प्रियादास की टीका के तत्सम्बन्धी कवित्तों का फ्रेंच अनुवाद तासी ने दिया है।

धना—हिन्दू साधु, रामानन्द के शिष्य, आदि ग्रंथ में इनकी भी कविताएँ हैं।

सेन—नाई। वैष्णव संत। आदि ग्रंथ में इनकी भी कविता है।

कबीर के समकालीन दो महाराष्ट्र हिन्दी संत कवि

नामदेव—यह शक संवत 1200 (1278 ई०) में उत्पन्न हुए और शक सं० 1250 (1328 ई०) में दिवंगत हुए। कुछ लोगों के अनुसार यह ग्वालियर में पाए गए बालक थे। उन्हें एक दर्जी ने उठा लिया था। इन्होंने उसका व्यापार ग्रहण किया। यह छीपी भी थे। पर 'कवि चरित्र' के अनुसार यह ज्ञानदेव के पुत्र थे। नामदेव पंडालिका के सर्वप्रथम शिष्यों में थे। इन्होंने बड़ी संख्या में अभंगों की रचना की है। इनका एक ग्रंथ 'हरिपाठ' है। इनके यहाँ एक दासी 'जाना बाई' थी। वह भी अभंग रचती थी।

तासी ने भक्तकाल में दिए छप्पय एवं प्रियादास की टीका का नामदेव सम्बन्धी अंश फ्रांसीसी भाषा में अनूदित किया है।

'जाना बाई' का विवरण स्वतन्त्र रूप से 'जाना बेगम' नाम से भी तासी ने दिया है। यह 'बेगम' नामदेव की संस्कृति के विपरीत है और न जानने वाले तो भ्रम करेंगे कि जाना बेगम कोई मुसलमान स्त्री थी। नामदेव कबीर के समकालीन थे। तासी ने इनका जो समय दिया है, वह ठीक नहीं है।

त्रिलोचन—एक ब्राह्मण संत। आदि ग्रंथ में इनकी रचनाएं हैं।

कबीर के शिष्यगण

कबीर के तीन शिष्यों का विवरण तासी ने दिया है, ये हैं :

(1) श्रुत गोपालदास, (2) धर्मदास, (3) भग्गूदास।

इनके सम्बन्ध में तासी ने जो कुछ लिखा है, उसका संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

श्रुतगोपालदास—कबीर के प्रथम शिष्य। इन्होंने कबीर की रचनाओं का 'सुख निधान' नाम से सम्पादन किया था।

धर्मदास—कबीर के बारह शिष्यों में से एक। अमरमाल के रचयिता। अमरमाल में अन्य हिन्दू सम्प्रदायों के साथ वाद-विवाद वर्णित है।

भग्गूदास—कबीर के मुख्य शिष्यों में से एक। बीजक के संग्रहकर्त्ता।

सिक्ख सम्प्रदाय

गुरु नानक ने सिक्ख सम्प्रदाय की स्थापना की। इनका जीवनकाल सं० 1526-96 वि० है। सिक्खों के दस गुरु हैं, जिनमें से सात कवि भी थे। इन सबका परिचय तासी ने दिया है, जिसका संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

1. **नानक**—गुरु नानक सिक्ख सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। तासी के अनुसार इन्होंने आदि ग्रंथ या 'ग्रंथ' की रचना की। वास्तविकता यह है कि आदि ग्रंथ में नानक की भी रचनाएं संकलित हैं, इसके संकलयिता पाँचवें गुरु 'अर्जुनदेव' हैं। आदि ग्रंथ का विस्तृत वर्णन स्वयं तासी ने गुरु अर्जुन के प्रकरण में दिया है जो आगे यहाँ भी दिया गया है। यह ग्रंथ सं० 1660 में संकलित हुआ था। नानक का जन्म लाहौर प्रदेश के तालविंडी (वस्तुतः तलावड़ी) नामक गाँव में 1469 (सं० 1526 वि०) में हुआ था। तासी के अनुसार इनकी मृत्यु 90 वर्ष की वय में हुई। वस्तुतः यह 70 वर्ष की वय में सं० 1596 में दिवंगत हुए। इनके पिता क्षत्रिय (वस्तुतः खत्री) जाति के थे।

2. **अंगद**—अंगद सिक्खों के दूसरे गुरु थे। तासी ने प्रमाद से इन्हें तीसरा गुरु लिख दिया है। इनकी रचनाएँ 'आदि ग्रंथ' में हैं। यह सिक्खों के तीहन नामक सम्प्रदाय के संस्थापक थे।

3. **अमरदास**—अमरदास सिक्खों के तीसरे गुरु थे। यह भल्ला नामक सिक्ख सम्प्रदाय के संस्थापक थे। इनकी भी रचनाएं आदि ग्रंथ में हैं।

0. **रामदास**—सिक्खों के चौथे गुरु। सिक्खों के सोढ़ी नामक सम्प्रदाय के संस्थापक। इनके सम्बन्ध में जो और सूचनाएं दी गई हैं, ठीक नहीं प्रतीत होतीं। इन्हें रामदास मिश्र (स्वामी नाइक) कहा गया है। सूरिमा जी का पुत्र कहा गया है। पहला नाम नारायण बताया गया है और राम की भक्ति के कारण रामदास नाम पड़ा, यह उल्लेख है। इनको दास बोध, समास आत्माराम, मानुष स्लोक, राजनीति

और रास विलास का रचयिता माना गया है। दास बोध तो मराठी की रचना है और शिवाजी के गुरु समर्थ स्वामी रामदास की कृति है। अन्य कृतियाँ अन्य रामदासों की होंगी। सिक्खों के चौथे गुरु रामदास की रचना आदि ग्रंथ में हैं।

5. **अर्जुन**—सिक्खों के पाँचवें गुरु, 'आदि ग्रंथ' के संकलयिता। इनका नाम अर्जुन मल्ल दिया गया है। तासी के अनुसार आदि ग्रंथ की विषयसूची यह है—1. जप जी, 2. सोडर रैन रास, 3. कीरति सोहिल, 4. संकलन-सिरीराग, माझ, गौरी, आसा, गूजरी, देव गांधारी, विहागरा, बड़हंस, सोरठ, धनाश्री, जैनश्री, टोंडी, वैरारी, तलंग, सोढी, बिलावल, गौड़, रामकली, नट नारायण, माली गौरा, मारू, तोखारी, केदार, भैरों, बसन्त, सारंग, मल्हार, कौड़ा, कल्यान, प्रभाती और जैवंती रागों में संकलन। इस संकलन में नानक, अंगद, अमरदास, रामदास, अर्जुन, तेगबहादुर और गुरु गोविन्द सिंह आदि सिक्ख गुरुओं की कविताओं के अतिरिक्त निम्नांकित 19 सन्तों की भी रचनाएँ हैं :

(1) कबीर, (2) त्रिलोचन, (3) बेनी, (4) रैदास, (5) नामदेव, (6) धना, (7) शेख फरीद, (8) जयदेव, (9) भीकन, (10) सेन, (11) पीपा, (12) सदना, (13) रामानन्द, (14) परमानन्द, (15) सूरदास, (16) मीराबाई, (17) बलवंत, (18) सत्त, (19) सुन्दरदास।

5. **भोग**—यह आदि ग्रंथ का पूरक भाग है। इसमें नानक, अर्जुन, कबीर शेख फरीद के अतिरिक्त निम्नांकित नौ और कवियों की रचनाएँ हैं :

(1) भीखा, अमरदास के शिष्य, (2) कल्ल, रामदास के शिष्य, (3) कल्ल सुहार, (4) जालम, अर्जुन के शिष्य, (5) सल्ल, अर्जुन के शिष्य, (6) नल्ल, (7) मथुरा, (8) बल्ल, (9) कीरति।

6. **तेग बहादुर**—सिक्खों के नवें गुरु। इनकी कुछ रचनाएँ आदि ग्रंथ के चौथे भाग में हैं।

7. **गुरु गोविन्द सिंह**—1708 (सं० 1765) में मृत्यु को प्राप्त। सिक्खों के दसवें गुरु। इनके ग्रंथ का नाम है 'दसवें पादशाह की ग्रंथ' या 'दशम पादशाह की ग्रंथ'। यह बड़ा ग्रंथ है। इसमें एक हजार से भी अधिक चौपेजी पृष्ठ हैं। यह हिंदुई पद्य में विभिन्न छंदों में है। यह ग्रंथ 16 खण्डों में है :

(1) जपजी—जैसा आदि ग्रंथ में है, (2) अकाल स्तुति, (3) विचित्र नाटक, (4) चंडी चरित्र, (5) चंडी चरित्र—एक और रूपांतर, (6) चंडी की वार, (7) ज्ञान प्रबोध, (8) चौपाइयाँ चौबीस अवतारां कियां—यह गुरु गोविन्द सिंह के शिष्य श्याम की रचना है। (9) महदी मीर—शिया मुसलमानों के बारहवें इमाम के प्रश्न, (10) ब्रह्म की अवतार, (11) रुद्र की अवतार, (12) शस्त्र नाममाला, (13) श्री मुख वाक सवैया बत्तिस—वेद पुराण, कुरान के विरुद्ध लिखे गए गुरु गोविन्द सिंह के 32 सवैये, (11) हजार शब्द—गुरु गोविन्द कृत,

(15) स्त्री चरित्र—गुरु गोविन्द के शिष्य श्याम कृत स्त्रियों के चरित्र पर 404 किस्से, (16) हिकायत—12 लघु कथाएँ।

इन सोलह भागों में से 6 भाग (या उनके कुछ अंश) गुरु गोविन्द कृत हैं। शेष उनके चार अनुयायियों के कृत हैं, जिनमें दो श्याम और राम हैं।

आदि ग्रंथ में संकलित हिन्दी के दो और निर्गुनिये कवि

1. परमानंददास—आदि ग्रंथ में इनकी रचनाएँ हैं। यह दधिलीला, नागलीला, दानलीला के भी रचयिता कहे गये हैं। मेरा ख्याल है कि आदि ग्रंथ वाले परमानंद दधिलीला, नागलीला, दानलीला के रचयिता परमानंद दास से भिन्न हैं।

2. बलवन्त—इनकी रचना आदि ग्रंथ में है। यह गुरु अर्जुनदेव के सम्मुख गाया करते थे। इनकी रचना शांतनी है। यह डोम (संगीतज्ञ) थे। इनका नाम बलबन्द लिखा गया है।

दादू-पंथ

दादू-पंथ के प्रवर्तक दादू दयाल थे। इनका जन्म सं० 1601 में एवं देहावसान सं० 1660 में हुआ। इनके शिष्य प्रसिद्ध संत सुन्दरदास (जन्म सं० 1653, मृत्यु सं० 1746) थे। तासी में दादू का विवरण है। एक सुन्दरदास हैं जिन्हें दाऊद का शिष्य कहा गया है। संभवतः यह दाऊद 'दादू' ही हैं और उक्त सुन्दरदास इन्हीं दादू के शिष्य। इनके विवरणों का संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

दादू—दादू पंथी सम्प्रदाय के संस्थापक। तासी के अनुसार दादू-पंथ रामानंदियों की एक शाखा और वैष्णव मतों में सम्मिलित है। दादू कबीर की शिष्य परम्परा में पाँचवें थे। कमाल, जमाल, विमल, बुद्धन, दादू। दादू धुनिया जाति के थे। इनका जन्म अहमदाबाद में हुआ था। 12 वर्ष की वय में यह घर से निकले, पहले सांभर में, फिर कल्यानपुर में, अंत में नराना (सांभर से 4 कोस पर) आए। यहाँ यह 37 वर्ष की वय में पहुँचे। नराना से 5 कोस दूर भराना पहाड़ी पर यह 1600 ई० के आसपास अन्तर्ध्यान हुए। नराना में इनके ग्रंथ एवं बिछौने आदि सुरक्षित हैं। दादू की रचनाएं कबीर से बहुत मेल खाती हैं।

सुन्दरदास—दाऊद के शिष्य करीम ने इनकी कविताओं के उदाहरण दिए हैं। आदि ग्रंथ में एक और रवाबी और गवैए सुन्दरदास की रचनाएँ हैं।

(ख) निर्गुण काव्यधारा : प्रेमाश्रयी शाखा

इस शाखा के केवल एक प्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी का विवरण तासी के इस ग्रंथ में है। उक्त विवरण अत्यन्त भ्रष्ट है। आगे उसका संक्षेप दिया जा रहा है।

मलिक मुहम्मद जायसी—जायसी ने पद्मावत (न कि पद्मावती) की रचना 947 हि० (1540-1541) में की। यह शेरशाह के राजत्वकाल में जीवित थे। पद्मावत में 6,500 के लगभग छंद हैं। तासी ने जायसी के 'सोरठ', 'परमार्थ जपजी' 'धनावत' नामक तीन और ग्रंथों का उल्लेख किया है, जो सम्भवतः इनकी रचनाएँ नहीं हैं। जायसी के सम्बन्ध में कुछ और भी भ्रष्ट सूचनाएँ ये हैं :

(1) 'जिन्हें जायसीदास भी कहा जाता है, जो उनके हिन्दू से इस्लाम धर्मानुयायी बनने की ओर संकेत करता प्रतीत होता है।'

(2) 'जायसी ने (यद्यपि मुसलमान थे) हिन्दुई में कवित्त और दोहरों की रचना की है।'

(3) 'उन्होंने उत्तर की उर्दू या मुसलमानी हिन्दुस्तानी में भी लिखा है।'

अनुक्रमणिका में तासी ने अखरावट की दो प्रतियों का उल्लेख किया है। इनका अनुवाद डा० वार्ष्णेय ने नहीं दिया है, इसीलिए डा० माताप्रसाद गुप्त को अखरावट की एक रद्दी प्रति से काम चलाना पड़ा। मूल ग्रंथ से पता पाकर श्री शिवसहाय पाठक ने इन दोनों प्रतियों के फोटोस्ट्रेट विदेश से मंगाकर उपयोग किया है और इनकी सहायता से अखरावट के प्रामाणिक पाठ का निर्धारण हो सका। इसी प्रकार अनुक्रमणिका में आए मुल्ला दाऊद के ग्रंथ 'नूरकचंदा' या 'चंदायन' का भी अनुवाद डा० वार्ष्णेय ने नहीं किया है। मूल के ही आधार पर इस ग्रंथ की हस्तलिखित प्रति का फोटोस्ट्रेट डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने विदेश से मंगाया है और अब हिन्दी के प्रथम प्रेमाख्यान काव्य के भी निकट भविष्य में सम्पादित रूप में सुलभ हो जाने की संभावना हो गई है।

चतुर्भुजदास—मधुमालती के लेखक चतुर्भुजदास भी प्रेमाख्यान के रचयिता कवि हैं। उनमें भी रहस्य भावना है या नहीं, कहा नहीं जा सकता। फिर भी प्रेमाख्यानक कवि होने के नाते यहाँ उनका भी उल्लेख कर दिया जाता है। मधुमालती कथा के रचयिता चतुर्भुजदास को मिश्र कहा गया है। 'मधुमालती' और उस 'भागवत दशम स्कंध भाषा' के कर्ता एक ही माने गये हैं, जिसके आधार पर लल्लूजी लाल ने 'प्रेमसागर' की रचना की। मधुमालती कथा के रचयिता चतुर्भुजदास कायस्थ थे। विनोद (1022/2) में 1902 ई० की खोज के अनुसार इन्हें सं० 1837 से पूर्ववर्ती स्वीकार किया गया है। कोई निश्चित समय नहीं दिया गया है। तासी में इनका समय नहीं दिया गया है। डा० माताप्रसाद गुप्त इनका समय सं० 1550 के आसपास स्वीकार करते हैं। (सूरपूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य, पृ० 165)।

(ग) सगुण काव्यधारा : (रामाश्रयी शाखा)

रामाश्रयी सगुण काव्यधारा के चार कवियों का विवरण तासी में मिलता है। एक तो इस शाखा के ही नहीं, सम्पूर्ण हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि गोसाईं तुलसीदास हैं, अन्य हैं, अग्रदास जी एवं उनके शिष्य नारायणदास तथा नाभादास जी।

तुलसीदास—तुलसीदास जी का विवरण तासी ने पर्याप्त विस्तार से दिया है। उसका सार यह है :

हिन्दुई के एक अत्यन्त प्रसिद्ध लेखक। भक्तमाल की टीका के अनुसार धर्म-पत्नी के द्वारा रामभक्ति के लिए प्रेरित। भ्रमणशील जीवन। घर से बनारस—बनारस से चित्रकूट। चित्रकूट में हनुमान का दर्शन। उन्हीं से काव्य-प्रेरणा एवं चमत्कार शक्ति पाई। मुगल बादशाह शाहजहाँ (?) द्वारा तुलसी का बन्दीगृह में डाला जाना और बन्दरों का उत्पात। वृन्दावन में नाभा से भेंट।

विल्सन के अनुसार तुलसीदास सरवरिया ब्राह्मण थे, चित्रकूट के निकट हाजीपुर के निवासी थे। परिपक्व वय होने पर यह काशी जाकर यहाँ के राजा के मंत्री हुए। अग्रदास के शिष्य जगन्नाथ दास इनके आध्यात्मिक गुरु थे। जगन्नाथ दास के साथ यह गोवर्द्धन गए, फिर बनारस आ गए। यहीं 1631 में 31 वर्ष की वय में रामायण प्रारम्भ की। यहाँ इन्होंने मन्दिर और मठ बनवाया। बराबर यहीं रहते हुए सं० 1680 में जहाँगीर के शासनकाल में दिवंगत हुए।

तासी के अनुसार रामायण पूर्वी भाषा या हिंदी की बोलियों में सबसे अधिक परिष्कृत ब्रज की बोली में लिखा गया। (वस्तुतः यह रचना अवधी में है।) तासी ने विभिन्न कांडों की कथा का भी संक्षेप एक दो वाक्यों में किया है। सुन्दरकांड का यह भ्रष्ट विवरण दिया गया है—'सुन्दरकांड अर्थात सुन्दर भाग।' इस सर्ग का सम्बन्ध राम और उनकी पत्नी सीता के सौंदर्य और गुणों से है। उत्तरकांड को भारत के उत्तर का भाग कहा गया है, यह वस्तुतः कथा का उत्तर (अंतिम) भाग है। तुलसीदास की अन्य रचनाएँ ये हैं—1. सतसई, 2. राम गानावली (गीतावली), 3. गीतावली, 4. विनय पत्रिका, 5. सीताराम के उपलक्ष में अनेक भजन जैसे राग, कवित्त और पद, 6. रामजन्म, 7, रामशलाका, 8. जानकी मंगल, 9. पंचरत्न—पाँच छोटी रचनाएँ, 1864 में बनारस से मुद्रित। 10. रुक्मिणी स्वयंवर टीका।

यह सूची सदोष है। 1, 3, 4, 7, 8 संख्यक ग्रंथ तुलसी के हैं, शेष या तो उनके संग्रह हैं अथवा अन्यों की कृतियाँ हैं, अंतिम तो निश्चित रूप से तुलसी की रचना नहीं है।

तासी ने रामायण के साथ-साथ 'कवित्त रामायण' का भी उल्लेख पहले किया है। तासी ने तुलसीदास जी के पिता का नाम 'आत्माराम पंत' और पत्नी का नाम 'ममतादेवी' दिया है। तासी ने 'भक्तमाल वाले छप्पय' और प्रियादास की टीका के सम्बन्धित अंश का फ्रांसीसी अनुवाद अपने ग्रंथ में दिया है।

गलता गद्दी के तीन रामोपासक

काशीवासी प्रसिद्ध स्वामी रामानंद के 12 प्रधान शिष्यों में एक अनन्तानंदजी थे। इन्हीं अनन्तानंदजी के शिष्य कृष्णदास पय-अहारी थे, जिन्होंने जयपुर के निकट गलता (गालवाश्रम) में रामानंद सम्प्रदाय की गद्दी स्थापित की। इन कृष्णदास

पय-अहारी के शिष्य अग्रदास हुए जिन्होंने राम भक्ति में पहली बार रसिक भावना की स्थापना की और इसीलिए जो अग्रअली के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। यह सं० 1632 के आसपास तक वर्तमान थे। इन्हीं अग्रदास के शिष्य नारायणदास थे जिन्होंने संभवतः 1649 में भक्तमाल की रचना की। नाभादास अग्रदास के दूसरे शिष्य थे, जिन्होंने उक्त भक्तमाल का विस्तार किया। नाभादास सं० 1719 के आस-पास जीवित रहे। सं० 1759 में प्रियादास ने भक्तमाल की सुप्रसिद्ध कवित्तबद्ध टीका लिखी। यह प्रियादास कृष्णोपासक थे और चैतन्य महाप्रभु के गौड़ीय सम्प्रदाय के थे। भक्तमाल को लेकर अग्रदास एवं उनके शिष्यों के सम्बन्ध में तासी ने बड़ी भ्रामक सूचनाएँ दी हैं जिनका संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

अग्रदास—तासी ने अग्रदास पर लिखित छप्पय और उस पर प्रियादास की टीका वाले कवित्तों का फ्रांसीसी अनुवाद दिया है। तासी के अनुसार अग्रदास एक वैष्णव संत थे और इन्होंने संस्कृत में भक्तमाल मूल की रचना की। वस्तुतः अग्रदास न तो भक्तमाल के रचयिता हैं और न भक्तमाल मूलतः किसी अन्य के द्वारा ही संस्कृत में रचा गया।

नारायण दास––"हिन्दी लेखक जो शाहजहाँ के राजत्व काल में रहते थे। ये ही थे जिन्होंने संशोधनों और परिवर्द्धनों द्वारा नाभाजी की भक्तमाल शीर्षक प्रसिद्ध रचना को वास्तविक रूप दिया। यह वस्तुतः अकबरकालीन हैं और भक्तमाल के मूल लेखक हैं।

नाभा—नाभा 16 वीं शती के अन्त और 17 वीं के प्रारम्भ में थे। यह जाति के डोम थे जो टोकरियाँ बुनने का व्यवसाय करते थे। कील्ह और अग्रदास ने इन्हें जंगल में किस प्रकार पाया यह कथा भी यहाँ दी हुई है। तासी के अनुसार इन्होंने अपने गुरु अग्रदास की इच्छा के अनुसार भक्तमाल की रचना कठिन हिन्दुई भाषा में की। अग्रदास इसे पहले संस्कृत में लिख चुके थे। तासी की अग्रदास कृत संस्कृत भक्तमाल वाली बात ठीक नहीं जैसाकि पहले कहा जा चुका है। तासी के अनुसार शाहजहाँ के राजत्वकाल में नारायणदास ने उसका शोधन और परिवर्द्धन किया और 1712 में कृष्णदास ने टीका की। उसका एक संपादन प्रियादास द्वारा हुआ। वस्तुतः भक्तमाल के मूल रचयिता अग्रदास के शिष्य नारायणदास हैं जिन्होंने उक्त ग्रंथ सं० 1649 में रचा। अग्रदास के दूसरे शिष्य नाभादास ने सं० 1700-19 वि० के बीच इसका परिवर्द्धन किया एवं वर्तमान रूप दिया। प्रियादास ने सं० 1769 में भक्तमाल की कवित्तबद्ध टीका की। उक्त कृष्णदास कोरी कल्पना है।

तासी की भक्तमाल संबंधी भ्रान्त धारणाएँ

1. तासी का खयाल है कि भक्तमाल पहले अग्रदास द्वारा संस्कृत में रची गई, यह उसका विशुद्ध भ्रम है।

2. पुनः तासी का ख्याल है कि भक्तमाल कृष्णदास की रचना है। अग्रदास

वाले छप्पय की पाँचवीं पंक्ति है :

'श्रीकृष्णदास कृपा करी भक्तदत्त मन वचन क्रम करि अटल दियो' इस पंक्ति में आए कृष्णदास गलता के प्रसिद्ध कृष्णदास पय-अहारी हैं जो अग्रदास के गुरु थे। इसी प्रकार पृथ्वीराज पर दिए छप्पय की प्रथम पंक्ति है—

"श्री कृष्नदास उपदेश परम तत्व परचौ पायो"। इस पंक्ति में आए कृष्णदास उक्त पृथ्वीराज राठौर के गुरु हैं। इन्हीं छप्पयों में कृष्णदास आया देखकर तासी ने इन्हें भक्तमाल का रचयिता समझ लिया है।

3. तासी का ख्याल है कि भक्तमाल में प्रथम एवं अन्तिम पंक्तियों के रचयिता नाभादास हैं। पहले छप्पयों की अन्तिम पंक्ति शुरू में भी लिखी जाती थी, अतः प्रथम एवं अन्तिम पंक्तियाँ एक ही हैं। उनका यह भी खयाल है कि शेष पाँच पंक्तियाँ कृष्णदास विरचित हैं। अग्रदास की पाद टिप्पणी में तासी ने यह उल्लेख किया है, पर यह सब कोरा भ्रम है।

4. पुनः तासी का ख्याल है कि 'कृष्नदास कवि' भक्तमाल की 1713 ई० में लिखित टीका के रचयिता हैं। कृष्णदास कवि की टिप्पणी में वे पुनः लिखते हैं— "मुझे भय है कि कृष्णदास और प्रियादास में कुछ भ्रम न हो। प्रियादास के सम्बन्ध में आगे लेख है और वे भी भक्तमाल की एक टीका और एक भागवत के रचयिता हैं।" तासी का यह भ्रम ही ठीक है। उक्त टीका वस्तुतः प्रियदास की ही है जो संवत् 1769 में बनी, उसी का समय 1713 ई० दिया गया है, जिसे 1712 ई० होना चाहिए।

5. भूमिका के अनुसार (पृ० 102) भक्तमाल नाभाजी की कृति है। इसे नारायणदास ने सुधारा। इसे पहले कृष्णदास ने, फिर बहुत बाद को प्रियादास ने विकसित किया। यहाँ कृष्णदास और प्रियादास भक्तमाल के दो अलग-अलग टीकाकार कहे गए हैं और 'कृष्णदास कवि' वाली टिप्पणी में दोनों के एक होने की संभावना व्यक्त की गई है।

तासी में उल्लिखित भक्तमाल के विभिन्न संस्करण

भक्तमाल की प्रियादास की टीका के अतिरिक्त निम्नांकित अन्य टीकाओं का उल्लेख तासी में हुआ जो 19 वीं शती की हैं :

1. रोहतक निवासी गमानीलाल कायस्थ द्वारा 1898 वि० में भक्तमाल की एक टीका हुई, जिसका उल्लेख 21 मार्च 1867 (सं० 1924) के मेरठ के 'अखबारे आलम' में हुआ है।

2. भक्तमाल का बँगला अनुवाद—दो भागों में। पहले भाग में 392 पृ०, दूसरे में 124। इसमें प्रह्लाद और हरिदास की जीवनियाँ हैं। रेवरेंड जे० लांग कृत डिस्क्रिप्टिव कैटलाग ऑफ बंगाली वर्क्स, पृ० 102 के आधार पर यह उल्लेख हुआ है।

3. डब्ल्यू प्राइस कृत 'हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सेलेक्शन्स' में भक्तमाल मूल एवं टीका से उद्धरण हैं।

4. भक्तमाल का एक उर्दू अनुवाद 1258 हि० (1842 ई०—1899 वि०) में प्रकाशित। अनुवादक लाला लालजीदास।

5. हरिबख्श मुंशी कृत भक्तमाल का संग्रह—1867 में सहाना जिला गुड़गाँव के मनबाउल उलूम छापेखाने में छप रहा था। 21 मार्च 1867 के मेरठ के 'अखबारे आलम' की सूचना के अनुसार यह 900 पृष्ठों की रचना होगी।

(3) सगुण काव्य धारा : कृष्णाश्रयी शाखा

ब्रजभाषा में सगुण कृष्ण-भक्ति और कृष्ण काव्य का प्रारम्भ वल्लभाचार्य के गोवर्द्धन पधारने के प्राय: 80-90 वर्ष पूर्व ही हो चुका था। यह श्रेय ग्वालियर वासी विष्णुदास कवि को प्राप्त है। यह ग्वालियर नरेश डूंगरेन्द्र सिंह के शासनकाल में जीवित थे। उक्त डूंगरेन्द्रसिंह सं० 1481 वि० में ग्वालियर की गद्दी पर बैठे थे।[1] तासी ने विष्णुदास के 'स्वर्गारोहण' काव्य का उल्लेख किया है। इनका समय नहीं दिया है। इस कवि का समावेश हिन्दी के किसी इतिहास में नहीं हो सका है। यह आश्चर्य ही है कि तासी को इसका पता था। तासी द्वारा दिए गए विवरण का संक्षेप यह है :

विष्णुदास कवि—स्वर्गारोहिणी (1 स्वर्गारोहण) कविता के रचयिता। यह ब्राह्मण थे। इन्हें दी जानेवाली 'द्विज' उपाधि से यह सिद्ध है।

सूर पूर्व के एक और साहित्यकार राणा कुंभा का उल्लेख तासी ने किया है। इन्हें कृष्ण भक्त भी कहा जा सकता है, पर यह हिन्दी के कवि नहीं हैं और इनका समावेश हिन्दी साहित्य के इतिहासों में न होना चाहिए।

वल्लभ संप्रदाय—वल्लभ संप्रदाय के प्रवर्तक वल्लभाचार्य का परिचय तासी ने दिया है। उसने इनको ब्रजभाषा का कवि कहा है, जो ठीक नहीं। उनकी सारी रचनाएँ संस्कृत में हैं। वल्लभाचार्य के पुत्र गो० विट्ठलनाथ का विवरण इस ग्रंथ में नहीं है। विट्ठलनाथ के पुत्र गिरिधर एवं गोकुलनाथ जी के विवरण हैं। तासी को 84 एवं 252 वैष्णवन की वार्ता का पता था। उसने गो० हरिराय का भी विवरण दिया है। यह रीतिकाल में आते हैं, पर सुविधा के लिए यहीं उल्लेख कर दिया जा रहा है। तासी ने अष्टछाप के दो प्रसिद्ध कवि सूरदास एवं नन्ददास के विवरण दिए हैं। इनका संक्षेप आगे दिया जा रहा है।

वल्लभाचार्य—लक्ष्मण भट्ट के पुत्र, तैलंग ब्राह्मण, वल्लभ संप्रदाय के संस्थापक। जन्म 1535 वि० में चंपारण्य में हुआ। यह ब्रज में गोकुल (? गोवर्धन) में रहते थे, फिर बनारस आ गये। इन्होंने संपूर्ण भारत की तीर्थ यात्रा की। काशी में

1. सूरपूर्व ब्रजभाषा और साहित्य, पृ० 149-152।

हनुमान-घाट पर गंगा में जल-समाधि ली। इनका संप्रदाय पुष्टिमार्ग कहलाता है। इसमें बालकृष्ण की भक्ति विहित है।

वल्लभ ने भाषा में विष्णुपद रचे, ऐसा तासी का कहना है, जो ठीक नहीं। वल्लभाचार्य ने हिन्दी में रचना की ही नहीं, उनकी सारी रचनाएँ संस्कृत में हैं। पुन: वल्लभाचार्य 84 वैष्णवन की वार्ता के नायक हैं। इसमें इनके 84 शिष्यों की वार्ताएँ हैं जिनमें स्त्री, पुरुष तथा समाज के प्रत्येक वर्ग के लोग हैं।

तासी ने बल्लभ संप्रदाय के 74 प्रामाणिक ग्रंथों की सूची दी है, जिनमें 39 संस्कृत से अनूदित हैं, 35 मौलिक।

महाकवि सूरदास—मथुरा के प्रसिद्ध ब्राह्मण, कवि संगीतज्ञ, संगीतज्ञ बाबा रामदास के पुत्र। यह अक्रूर (? उद्धव) के अवतार समझे जाते थे। इनका जन्म 1450 शक सं० (1528) ई० में हुआ तथा सोलहवीं शती उतरार्द्ध और सत्रहवीं शती के प्रथम 25 वर्षों में अकबर के राज्यांतर्गत इनका उत्कर्ष हुआ। सूरदास अंधे थे। इन्होंने सूरदासी पंथ की स्थापना की (सूर ने कोई पंथ नहीं चलाया)। इन्होंने सवा लाख विष्णु पद रचे थे। इनकी रचना सूर सागर है। यह राग-रागनियों में बद्ध है।

तासी में उल्लिखित रास लीला, रिसाला-इ-राग, सूरदास कवित्त, भाषा नल दमन, सूर रत्न, बारामास में से रासलीला तो सूरसागर का एक अंश है। सूर रत्न सूरसागर से चुने कुछ पद्य हैं, अन्य रचनाएँ दूसरे सूरों की हैं। सूरदास कवित्त भी इन्हीं का कोई संग्रह हो सकता है। तासी के अनुसार बाबू हरिश्चन्द्र ने कवि वचन सुधा के अंक 6 में सूरदास की जीवनी प्रकाशित की है।

नंददास—नन्ददास की ग्रन्थ-सूची तासी के अनुसार निम्नांकित है :

(1) पंचाध्यायी, (2) नाम मंजरी या नामाला, (3) अनेकार्थ मंजरी, (4) रुक्मिणी मंगल, (5) भँवर गीत, (6) सुदामा चरित्र, (7) विरह मंजरी, (8) प्रबोध चन्द्रोदय नाटक—केशव मिश्र के संस्कृत नाटक का अनुवाद, (9) गोवर्द्धन लीला, (10) दशम स्कन्ध, (11) रास मंजरी, (12), रस मंजरी, (13) रूप मंजरी, (14) मन मंजरी।

तासी ने 4-14 संख्यक ग्रंथों की सूची करीमुद्दीन के तबकानुश्शुअरा के आधार पर दी है। उसने नंददास के सम्बन्ध में और कोई सूचना नहीं दी है। प्रबोध चंद्रोदय नाटक का नन्ददास ने कोई अनुवाद किया, ऐसा उल्लेख अन्यत्र नहीं मिलता। उनकी पाँच मंजरियाँ प्रसिद्ध हैं—मान मंजरी (अनेकार्थ मंजरी) रूप मंजरी, रस मंजरी और विरह मंजरी। रास मंजरी रास पंचाध्यायी होनी चाहिए। नाम मंजरी या नाममाला ही मान मंजरी है, यही मन मंजरी भी होनी चाहिये। मन मंजरी नाम की नन्ददास की कोई पोथी नहीं।

गिरिधर लाल—एक प्रसिद्ध ब्राह्मण सन्त, भक्तमाल में उल्लेख, 17 वीं शती के आरम्भ में जीवित। भक्तमाल में विट्ठलनाथ जी के पुत्र गिरिधर का वर्णन छप्पय 131 में हुआ है। एक गिरिधर ग्वाल का भी विवरण छप्पय 194

में हुआ है, स्पष्ट ही वे तासी के अभीष्ट गिरिधर लाल नहीं हैं।

गोसाई गोकुलनाथ--प्रसिद्ध हिन्दू, विट्ठलनाथ जी के पुत्र, वल्लभाचार्य के पौत्र, गोपीनाथ के पिता। ब्रजभाषा में लिखित निम्नांकित ग्रंथों के रचयिता-- 1. वचनामृत, 2. रसभावन, 3. जुगलकिशोर विलास, 4. सरस रंग, 5. दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता।

गो० हरिराय—वल्लभ (सम्प्रदाय) के शिष्य। इनके निम्नांकित दो ग्रंथों के उद्धरण हिस्ट्री ऑफ दि सेक्ट ऑफ दि महाराजाज़ में है— 1. सड़सठ पाप उनके प्रायश्चित और फल, 2. पुष्टि प्रवाह मर्याद। यह प्रसिद्ध गोस्वामी हरिराय जी हैं जिन्होंने प्रसिद्ध वार्ताओं को भावप्रकाश के द्वारा वर्तमान रूप दिया।

अन्य सम्प्रदायों के कृष्ण भक्त कवि

मीराबाई--मीराबाई के सम्बन्ध में चार उल्लेख किए गए हैं, पर कोई निर्णय नहीं किया गया है। तासी के अनुसार मीरा ने उदयपुर में शरीर छोड़ा, जो ठीक नहीं। मीरा का देहावसान द्वारिका में हुआ। भक्तमाल में दिये छप्पय और प्रियादास की टीका वाले कवित्तों का फ्रांसीसी अनुवाद तासी में है।

लालच--लालच, उपनाम हलवाई, भागवत दशम स्कन्ध के अनुवादक, दोहा चौपाइयों में लिखित। दोहों में प्रायः कवि का नाम आया है। दोहे-चौपाइयों की किसी नियमित नियत संख्या पर नहीं प्रयुक्त हुये हैं।

इस ग्रन्थ की रचना सं० 1527 वि० में हुई। शुक्लजी ने इसका रचनाकाल 1587 वि० माना है। तासी को व्रजवासी दास और उनके व्रजविलास के लालच और उनके भागवत से अभिन्न होने का भ्रम हुआ है।

हरिदास--एक हिन्दुई कवि। पद रचयिता। इनका एक पद डबल्यू प्राइस ने अपने हिन्दी ऐंड हिन्दुस्तानी सिलेक्सन्स में उद्धृत किया है। यह सम्भवतः प्रसिद्ध स्वामी हरिदास हैं।

हरिराम व्यास—हरिराम व्यास का विवरण 'व्यास' नाम से दिया गया है। इन्हें मधुकर शाह का गुरु और पदों का रचयिता कहा गया है। तासी ने व्यास और मनु कृत जिस 'धर्म प्रकाश' की चर्चा की है, वे व्यास महर्षि वेदव्यास हैं और इन हरिराम व्यास से भिन्न हैं।

माधवदास—एक अत्यन्त प्रसिद्ध हिन्दी लेखक। भक्तमाल में दिए छप्पय और प्रियादास की टीका से सम्बद्ध कवित्तों का अनुवाद तासी ने दिया है।

पृथ्वीराज--एक प्रसिद्ध राठौर राजपूत जो 1552 से 1605 तक अकबर के राजत्वकाल में थे। बीकानेर नरेश के छोटे भाई। प्रसिद्ध कवि। भक्तमाल में दिए छप्पय एवं प्रियादास की टीका के कवित्तों का तासी में अनुवाद दिया गया है।

व्रजदास--वैष्णव महाराजों की वंशावली के रचयिता। 1868 में बम्बई से 84 पृष्ठों में प्रकाशित।

भक्तिकाल के अन्य कवि

इस वर्ग में तासी वर्णित निम्नांकित कवियों को रखा जा सकता है :

1. नरोत्तम, 2. रत्नावती, 3. रूपमती, 4. बैंजू बावरा, 5. केशवदास, 6. तानसेन, 7. गंग, 8. शृंगारी सुन्दर, 9. सेनापति, 10. जटमल, 11. परशुराम।

नरोत्तम—'सुदामा चरित्र' के रचयिता।

रत्नावती—भैया पूरनमल, हिन्दू सामंत, रायसेन दुर्ग के रक्षक की पत्नी। उक्त पूरनमल शेरशाह द्वारा पराजित हुए थे और मार डाले गये थे। रत्नावती उन्हीं की पत्नी थीं और हिन्दी छंदों की रचना करती थीं। 'शेरशाह' नामक किसी इतिहास ग्रन्थ में इसका उल्लेख हुआ है। 1828 ई० (सं० 1585) में धर्म रक्षा की दृष्टि से पति ने पत्नी का सिर काट लिया था।

रूपमती—जन्म स्थान सारंगपुर, मालवा। यह मालवा के तत्कालीन मुसलमान शासक बाजबहादुर की प्रेयसी थीं। अकबर ने जब बाजबहादुर को हराया, रूपमती ने अपने को मृत्यु को सौंप दिया। इनकी रचनाएँ अब भी मालवा में गाई जाती हैं।

बैंजू बावरा—उत्तर भारत के एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ, जो छ या सात सौ वर्ष पूर्व विद्यमान थे। इन्होंने लोकप्रिय गीत भी लिखे हैं। राग सागर ने उनका उल्लेख किया है।

केशवदास—केशवदास के निम्नांकित सुप्रसिद्ध ग्रन्थों का उल्लेख हुआ है :

1. रामचन्द्रिका, रचनाकाल सं० 1658। इसे विल्सन के अनुसार वाल्मीकि रामायण का संक्षिप्त अनुवाद कहा गया है, जो ठीक नहीं। 39 अध्यायों में होने का ठीक-ठीक उल्लेख है। 2. कविप्रिया—काव्य रचना सम्बन्धी शास्त्र पर 16 अध्याय में लिखित ग्रंथ। रचनाकाल सं० 1658। 3. रसिक प्रिया—रचनाकाल 1592 ई० (सं० 1648)। 4. विज्ञान गीता।

इनके सम्बन्ध में निम्नांकित सूचनाएँ दी गई हैं :

यह जाति के ब्राह्मण थे, प्रसिद्ध लेखक थे, सोलहवीं शताब्दी के अन्त और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जहाँगीर और शाहजहाँ के राजत्वकाल में विद्यमान थे।

इनके सम्बन्ध में कुछ भ्रामक सूचनाएँ दी गई हैं। इन्हें केशवस्वामी और चंग केशवदास भी कहा गया है, जो ठीक नहीं। पुन: इनके ग्रन्थों में एकादशी चा चंत्र (एकादशी का क्षेत्र), चंगेदेव कृत गोष्ठी, जैमिनी भारत, सतसई दोहा—इन चार और ग्रंथों को गिनाया गया है। इनमें से प्रथम दो तो मराठी के ग्रन्थ हैं, जो किसी मराठे चंगदेव या केशवदास की रचना होगी। जैमिनी भारत और सतसई दोहा किसी केशव स्वामी के।

तानसेन—तानसेन को पटना का निवासी कहा गया है, जो ठीक नहीं। पुन: तानसेन के गुरु हरिदास को 'गोसाई' एवं चैतन्य का शिष्य कहा गया है, यह भी ठीक नहीं। यह भी भ्रामक ढंग से लिखा गया है कि तानसेन को हरिदास ने अकबर के यहाँ भेजा।

तानसेन प्रसिद्ध गवैये थे। अकबरी दरबार के गायक थे। दूसरों ही के पद नहीं गाते थे, स्वरचित पद भी गाते थे। यह मुसलमान हो गए थे। इनको मृत्यु होने पर इन्हें ग्वालियर में दफनाया गया था। इनका एक ग्रंथ 'रागमाला' है। तासी ने इसे इनके गीतों का संग्रह समझने की भूल की है। यह वस्तुत: शास्त्रीय संगीत संबंधी ग्रंथ है।

गंग—गंगा कवि ने 1555 में काव्यशास्त्र पर लिखा। हिन्दी के अत्यन्त प्रसिद्ध रचयिता।

श्रृंगारी सुन्दर—हिन्दुई के प्रसिद्ध श्रृंगारी कवि। इन्हें कविराज और महाकवि की शानदार उपाधि मिली थी। इन्हें कवीश्वर भी कहा जाता है। यह शाहजहाँ के शासनकाल में हुए। शाहजहाँ के लिए ही सं० 1688 में इन्होंने 'सुन्दर श्रृंगार' लिखा। यह नायिका भेद का ग्रन्थ है। सम्राट शाहजहाँ की आज्ञा से इन्होंने 'सिंहासन बत्तीसी' का ब्रजभाषा रूपांतर किया। ('फोर्ट विलियम कालेज से) सिंहासन बत्तीसी का जो उर्दू अनुवाद हुआ, वह इसी ब्रजभाषा रूपांतर के आधार पर।

तासी ने इनके नाम पर 'ज्ञान समुद्र' और 'सुन्दरविलास' का उल्लेख किया है, जो ठीक नहीं। ये दोनों ग्रन्थ प्रसिद्ध सन्त सुन्दरदास के हैं, जो दादू के शिष्य थे।

सेनापति—इनका 'षट ऋतु वर्णन' 1868 में बनारस से बाबू गोकुलचन्द की देखरेख में छपा था। यह प्रसिद्ध कवि सेनापति के 'कवित्त रत्नाकर' की एक तरंग मात्र है, कोई स्वतन्त्र ग्रंथ नहीं।

जटमल—धर्मसिंह के पुत्र, कवीश्वर उपाधि धारण करने वाले, नज़ीरुद्दीन के पुत्र अली खाँ पठान के शासनकाल में, 17वीं शती में मोरछत्तो में रहते थे। इन्होंने 1624 ई० में (Sambar) सांभर नगर में पद्मिनी की पद्यबद्ध कथा लिखी थी।

तासी से सिद्ध हो जाता है कि जटमल ने पद्मिनी की कथा पद्य में लिखी थी। 'गोरा बादल री बात' उसी का खड़ी बोली में अनुवाद है, जो 1881 में हुआ।

परशुराम—'उषा चरित्र' के रचयिता। विनोद (311) के अनुसार रचनाकाल सं० 1690।

रीतिकाल (सं० 1700-1900)

इस काल के कवियों का विश्लेषण निम्नांकित शीर्षकों में किया जा रहा है :

1. श्रृंगारी कवि—इसमें रीतिमुक्त एवं रीतिबद्ध सभी का समावेश एक कर दिया जा रहा है।
2. वीर रस के कवि।
3. भक्त कवि—इस वर्ग के दो खंड कर लिए जा रहे हैं :
   (क) सगुणोपासक, (ख) निर्गुणोपासक।
4. अन्य कवि।
5. गद्य लेखक।

रीतिकाल के श्रृंगारी कवि

तासी द्वारा उल्लिखित रीतिकाल के श्रृंगारी कवि ये हैं—1. बिहारी लाल, 2. मतिराम, 3. मंडन, 3. कुलपति मिश्र, 5. सुखदेव मिश्र, 6. कालिदास, 7. नेवाज, 8. देव, 9. सुरत कवीश्वर, 10. गोविन्द कवि, 11. रसलीन, 12. शिवदास, 13. पद्माकर, 14 ग्वाल, 15. गोकुलनाथ बनारसी, 16. गोपीनाथ बनारसी, 17. महाराज बलवान सिंह, 18. बहशत।

बिहारीलाल—तासी ने सतसई के प्रणेता बिहारी लाल को कबीर का समकालीन कहा है, जो स्पष्ट ही भ्रामक है। बिहारी को अंग्रेज भारत का टामसन कहते हैं। काशी नरेश चेतसिंह के आश्रित पंडित हरिप्रसाद द्वारा इसका संस्कृत अनुवाद हो चुका है। 16 वीं शती के आरम्भ में बिहारी आमेर दरबार के प्रिय पात्र थे। 'नहिं पराग नहिं मधुर मधु' वाली कथा तासी ने दी है। तासी आजमशाही क्रम से भी परिचित था। बिहारी को सतसई की प्रेरणा गोवर्द्धन की 'सप्तशती' से प्राप्त हुई।

मतिराम—श्रेष्ठ हिन्दी कवि। 'रसराज' के रचयिता। यह नायिका भेद का ग्रंथ है—'वह वास्तव में एक प्रकार का कोकशास्त्र है, जिसका जितना सम्बन्ध स्त्रियों के मानसिक गुणों से है, उतना ही उनके शारीरिक गुणों से'।

मंडन—जनकपचीसी के रचयिता। इसमें सीताराम का बिवाह वर्णित है।

कुलपति मिश्र—'रस रहस्य' के रचयिता, हिन्दुई के कवि हैं।

सुखदेव मिश्र—सुखदेव मिश्र, उपनाम कविराज, मर्दन नामक राजा के आश्रय में साहित्य सेवा की। (उक्त 'मर्दन' डौंड़िया खेरा के राजा राव मर्दन सिंह हैं, इन्हीं के आदेश से 'रसार्णव' की रचना हुई थी)। तासी ने इनके निम्नांकित ग्रंथों का उल्लेख किया है :

1. रसार्णव। 2. पिंगल—1864 में बनारस से प्रकाशित। 3. फाजिल अली प्रकाश—यह फाजिल अली का इतिहास नहीं है, जैसाकि तासी को भ्रम है। यह रस ग्रंथ है। 4. रस रत्नाकर—1766 में बनारस से प्रकाशित। यह रचना भारतेन्दु के पिता गोपालचन्द्र जी की है, जो अपूर्ण है। स्वयं तासी ने पाद टिप्पणी में लिख दिया है—'यह रचना गोपालचन्द्र कृत भी बताई जाती है।'

तासी ने सुखदेव मिश्र को ओरछा निवासी एवं 16 वीं शती का कहा है जो ठीक नहीं। तासी ने इनका विवरण दो बार दिया है, एक बार 'शुकदेव' नाम से। दूसरी बार 'सुखदेव' नाम से। दोनों बार इन्हें ओरछावासी 16वीं शती का लेखक कहा गया है।

कालिदास—यह सम्भवतः हजारा वाले प्रसिद्ध कालिदास हैं। इनके सम्बन्ध में केवल यह लेख है—"एक हिन्दी लेखक हैं, जिसके केवल नाम का उल्लेख मैं कर सकता हूँ, किंतु इसी नाम के प्रसिद्ध संस्कृत कवि और इस लेखक के बीच गड़बड़ नहीं होनी चाहिए।"

नेवाज—तासी ने नेवाज कृत 'शकुन्तला' के सम्बन्ध में ठीक सूचनाएँ दी हैं

—"नेवाज कवीश्वर, मुसलमान, संस्कृत नाटक शकुन्तला के व्रजभाषा पद्य में अनुवाद करनेवाले। यह अनुवाद उन्होंने फिदाई खाँ के पुत्र उन मौला खाँ के कहने से किया था, जिन्होंने अपने समय के मुगल सम्राट फर्रुखसियर से आजमखाँ नाम पाया था। काजिम अली गवां कृत 'शकुन्तला' में नेवाज के विषय में यह उल्लेख हुआ है कि नेवाज ने 1128 हिजरी (1716 ई०) में शकुन्तला नाटक का खंडकाव्य के रूप में संस्कृत से हिन्दी (व्रजभाषा) में अनुवाद किया था।"

खोज में मौलाखाँ को 'मुसवी खाँ' या मुसले खाँ कहा गया है। तासी से पहली बार शकुन्तला नाटक का ठीक-ठीक रचनाकाल सं० 1773 वि० मिलता है। शुक्लजी के इतिहास में यह सं० 1737 दिया गया है।

देव—नख-शिख और अष्टयाम के रचयिता। अष्टयाम 'कवि वचन सुधा' में प्रकाशित है। महाकवि देव को तासी ने 'देवदत्त (राजा)' कहा है। सम्भवतः महाकवि देव ही का विवरण '(कव) देव' और 'देव-राज' नामों से भी दिया गया है। देवराज के नाम पर भी 'नख-शिख' और अष्टायाम' ग्रन्थों का विवरण दिया गया है।

सूरत कवीश्वर—मुहम्मद शाह के राजत्वकाल में जयपुर नरेश जयसिंह सवाई की आज्ञा से इन्होंने 'वैताल पचीसी' का व्रजभाषा में अनुवाद किया।

गोविन्द कवि—'कर्णाभरण' और 'भाषा भूषण' के रचयिता। दोनों ग्रन्थ हाशिये पर टिप्पणी सहित 1866 में बनारस से मुद्रित। केवल 'कर्णाभरण' गोविन्द कवि की रचना है।

रसलीन—सैयद गुलाम नबी रसलीन का उल्लेख तासी में 'नबी' नाम से हुआ है। इनके सम्बन्ध में यह लेख है—'मीर अब्दुल जलील बिलग्रामी के भानजे मीर गुलाम नबी बिलग्रामी ने हिन्दी भाषा में दो हजार चार सौ दोहरे लिखे हैं, जो कहा जाता है, प्रसिद्ध बिहारी के दोहरों का मुकाबला करते हैं। वे विविध विद्याओं और संगीत कला में भी अत्यन्त निपुण थे।

शिवदास—जयपुर निवासी हिन्दू कवि। इनकी रचनाएं निम्नांकित हैं :

1. शिव चौपाई 2. रत्नमाला 3. शिवसागर 4. पोथी लोक ऊकत रस जगत।

अन्तिम पोथी के नाम का अर्थ तासी की समझ में नहीं आया। यह 'लोकोक्ति रस कौमुदी' या 'लोक उक्ति रस जुक्ति' नामक नायिका भेद का ग्रन्थ है, जिसके प्रत्येक छन्द में कोई न कोई लोकोक्ति प्रयुक्त हुई है। तासी ने इसी कवि का वर्णन शिवराज कवि नाम से भी किया है।

पद्माकर—इनका नाम पद्माकर देव (कवि) दिया गया है। ग्वालियर के रहने वाले लोकप्रिय गीतों (कविताओं) के रचयिता हिन्दू कवि। इनका रचनाकाल 1810-1820 है। इनके चार ग्रंथ—जगत विनोद,, गंगा लहरी, पद्माभरण और गद्याभरण का नामोल्लेख हुआ है। गद्याभरण नाम की पद्माकर की कोई कृति नहीं।

तासी के अनुसार यह अलंकारों की व्याख्या है और 1866 से बनारस से प्रकाशित इसमें 44 अठपेजी पृष्ठ हैं।

ग्वाल कवि—पद्माकर कृत गंगालहरी के क्रम में 'जमुना लहरी' के रचयिता। 1865 ई० में बनारस से प्रकाशित।

गोकुलनाथ बनारसी—गोकुलनाथ बनारसी रघुनाथ बनारसी के पुत्र थे। काशी नरेश महाराज उदित नारायण सिंह की आज्ञा से महाभारत और हरिवंश का अनुवाद 'महाभारत दर्पण' और 'हरिवंश दर्पण' नाम से किया। शुद्धता और सौंदर्य अनुवाद की विशेषताएँ हैं। समानार्थवाची शब्दों, विशेषणों और व्यर्थ के पद्यों के अनुवाद की ओर ध्यान नहीं दिया गया है। विभिन्न छंदों में यह ग्रन्थ चार बड़ी जिल्दों में 1829 ई० में कलकत्ते से प्रकाशित हुआ। प्रथम जिल्द, दो खंडों को छोड़कर पूरी-पूरी गोकुलनाथ द्वारा अनूदित है, शेष में गोपीनाथ (गोकुलनाथ के पुत्र) और मणि देव (गोकुल नाथ के शिष्य) का सहयोग है। गोकुलनाथ जी के इस अनुवाद के सिलसिले में महाभारत के अन्य अनेक रूपांतरों की भी चर्चा तासी ने की है।

गोपीनाथ बनारसी—गोकुलनाथ के पुत्र, रघुनाथ पौत्र। 'महाभारत दर्पण' और 'हरिवंश दर्पण' के कुछ अंशों के रचयिता। यहाँ प्रमाद से गोकुलनाथ के पहले 'गोसाईं' जोड़ दिया गया है।

मणिदेव—मणिदेव को गोपीनाथ का शिष्य कहा गया है, जो ठीक नहीं। यह गोपीनाथ के पिता गोकुलनाथ के शिष्य थे। महाभारत दर्पण और हरिवंश दर्पण के अनुवाद में इनका भी सहयोग था। पहली और दूसरी जिल्दों में इनका अंश कम है, तीसरी-चौथी में बहुत है।

महाराज बलवान सिंह—काशी नरेश महाराज चेतसिंह के पुत्र, आगरा निवासी, मिर्जा हातिम अली बेग मुहर के शिष्य। 'चित्र चन्द्रिका' के रचयिता। 1859 में आगरे से मुद्रित।

वहशत—मीर बहादुर अली वहशत अवध के नवाब शुजाउद्दौला के दरबार में अधिकारी थे। इन्होंने बारहमासा लिखा था

रीति कालीन वीररस के कवि

तासी ने रीतिकाल के निम्नांकित पाँच वीर रस के कवियों का विवरण दिया है :

मान कवीश्वर—औरंगजेब के विपक्षी राणा राजसिंह के राजत्वकाल में रहते थे। 'राज विलास' के रचयिता। टाड ने इस ग्रन्थ से मेवाड़ के इतिहास की सामग्री ली है।

छत्रसिंह—विजय मुक्तावली के रचयिता। प्रसिद्ध छत्रसिंह का नाम 'छत्री सिंह' दिया गया है। उक्त ग्रन्थ संक्षिप्त महाभारत है और 1869 में आगरा से प्रकाशित हुआ था। इसमें 224 अठपेजी पृष्ठ हैं। यह ग्रन्थ 1757 में लिखा गया था।

गोरेलाल—'छत्र प्रकाश' के रचयिता। छत्र प्रकाश छत्रसाल का इतिहास है। इन लाल के नाम पर निम्नांकित ग्रन्थ और भी दिए गए हैं, जो ठीक नहीं।

1. अवध विलास—18 सर्गों में सं० 1700 में लिखित रामकथा। यह वस्तुतः लालदास की रचना है। 2. भारत (भरत) की बारहमासी। 3. इन्द्रजाल प्रकरणम् या भाषा इन्द्रजाल। 4. गुरुमुखी। 5. कुछ लोकप्रिय गीत। 6. बिहारी कृत सतसई की लाल चन्द्रिका टीका। यह टीका वस्तुतः लल्लूजी लाल की है।

कर्ण या करणीदान—मारवाड़ नरेश अभयसिंह के राज्यकाल में, उन्हीं की आज्ञा से इन्होंने 'सूरज प्रकाश' रचा। इसमें 7500 दोहे हैं। इसमें राठौरों का इतिहास है।

सूदन कवि—1748 में लिखित दो सौ से अधिक हिन्दुई कवियों की एक प्रकार की जीवनियों 'सुजान चरित्र' के रचयिता।

तासी के अनुसार एक हिन्दी ग्रन्थ का भी यही शीर्षक है जिसमें हिन्दी छंदों में भरतपुर के राजा सूरजमल द्वारा सलावत खाँ तथा अन्य अफगान सामन्तों के विरुद्ध ठाने गए युद्धों का वर्णन है। यह ग्रन्थ 1852 में भरतपुर के सफदरी प्रेस से छप चुका है।

वस्तुतः दोनों एक ही ग्रन्थ हैं। सूदन ने 'सुजान चरित्र' में 200 कवियों का जीवन चरित्र नहीं लिखा है। उक्त ग्रन्थ के प्रारम्भ में छंद में लगभग 200 कवियों की सूची है, जिन्हें सूदन ने प्रणाम किया है।

रीतिकालीन सगुणोपासक भक्त कवि

रीतिकाल में यद्यपि सगुणोपासक भक्त कवियों की संख्या कम नहीं है, पर तासी में इनकी संख्या अधिक नहीं है। इस युग के कृष्ण-भक्त कवि प्रियादास हैं, जिन्होंने सं० 1769 वि० में भक्तमाल की टीका लिखी। इसी समय गो० हरिराय जी भी हुए, जिनका विवरण पीछे भक्तिकाल में वल्लभ सम्प्रदाय के अन्तर्गत दिया जा चुका है। ब्रजवासी दास वल्लभ सम्प्रदाय के थे। इन्होंने 1827 वि० में ब्रज-विलास रचा। हलधर दास ने सुदामा चरित रचा, पर इनका समय ज्ञात नहीं। इन्हें कम से कम इसी युग का होना चाहिए।

प्रियादास—नित्यानन्द के अनुयायी। बंगाल के निवासी। भक्तमाल के टीकाकार। बुंदेलखंडी बोली में भागवत का भी अनुवाद किया है। तासी के अनुसार भक्तमाल में निम्नांकित हिन्दू सन्तों की जीवनी हैं :

वाल्मीकि, परीक्षित, सुखदेव, अग्रदास, शंकर, नामदेव, जयदेव, श्रीधरस्वामी, धन्ना भगत, माधोदास, रघुनाथ, हरिव्यास, विट्ठलनाथ, गिरधर, विट्ठलदास, रूप सनातन, सदना कसाई, लड्डू भगत, गंजा माल, लशा भक्त, नरसी भगत, मीराबाई, पृथ्वीराज, नरदेव, कबीर, पीपा, हरिदास, गोपालभट्ट।

ब्रजवासीदास—ब्रजविलास के रचयिता। इसमें कृष्ण कथा है।

हलधरदास—'सुदामाचरित्र' काव्य के रचयिता। इसका एक संस्करण सं० 1890 वि० में प्रकाशित हुआ, 62 पृ०, सम्भवत: कलकत्ता से।

रीतिकालीन निर्गुणोपासक भक्त कवि

रीतिकाल में भी निर्गुण काव्यधारा चलती रही है। इसी युग में 'साध' धर्म के प्रवर्तक वीरभान, शिवनारायणी पंथ के प्रवर्तक शिवनारायणदास, सतनामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक जगजीवनदास एवं उनके शिष्य नवलदास, रामसनेही सम्प्रदाय के प्रवर्तक रामचरण एवं उनकी परम्परा में रामजन, दूल्हाराम, छत्रदास तथा कुछ अन्य निर्गुनिए कवि दरियादास, बख्तावर, रामराउ आदि हुए। अज्ञात कालीन श्वेताम्बर और गुरदास वल्लभ (भाई) आदि निर्गुणी कवि भी इसी युग में हुए प्रतीत होते हैं। गुरू गोविन्द सिंह भी इसी युग के हैं।

वीरभान—वीरभान साध सम्प्रदाय के संस्थापक थे। दिल्ली प्रान्त में नारनौल के निकट ब्रज हसीर के निवासी थे। विक्रम सं० 1714 में इन्हें सतगुर का उपदेश मिला। ये उपदेश 'आदि उपदेश' नाम से संग्रहीत हैं। ये बारह हैं। साध लोग निर्गुनिया हैं, एक ईश्वर में विश्वास करते हैं, अमूर्तिपूजक हैं, आभूषण नहीं पहनते, न नमस्कार करते हैं, न शपथ खाते हैं, तंबाकू-पान, अफीम-मद आदि सभी व्यसनों से परे, नर्तकियों के उत्सवों में भी नहीं जाते। इनका कोई मन्दिर नहीं होता। पूर्णिमा को इन का समाज होता है।

ग्रियर्सन ने इन्हें 1658 ई० (सं० 1715) में उपस्थित बताया है।

शिवनारायणदास—शिवनानारणी सम्प्रदाय के संस्थापक। इन्हें नारायण या नेरिवाण जाति का राजपूत कहा गया है। गाजीपुर के सेसन गाँव के निवासी। मुहम्मदशाह के राजत्वकाल में थे। इनके एक ग्रन्थ का रचनाकाल सं० 1791 वि० है। हिन्दी में इनकी निम्नांकित 11 रचनाएँ हैं :

1. लवग्रन्थ, 2. सन्त विलास, 3. वजन ग्रन्थ, 4. सन्त सुन्दर, 5. गुरुन्यास, 6. सन्त अचारी, 7. सन्तोपदेश, 8. शब्दावली, 9. सन्त परवान, 10. सन्त महिमा, 11. सन्त सागर।

इस सम्प्रदाय का एक और ग्रन्थ है जो किसी को नहीं दिखाया जाता, गुरु के पास रहता है, जो गाजीपुर जिले में वलसंद नामक गाँव में रखा है।

ग्रियर्सन ने इन्हें 1735 ई० (सं० 1792) के आसपास उपस्थित माना है।

जगजीवनदास—यह सतनामी सम्प्रदाय के संस्थापक थे। यह क्षत्रिय थे। अवध में उत्पन्न हुए थे। इनकी समाधि कोटवा ('कटवा' नहीं) में है। यह जीवन भर गृहस्थ रहे। इन्होंने 'प्रथम ग्रन्थ', 'ज्ञान प्रकाश' (रचनाकाल 1761 ई०) और 'महाप्रलय' ग्रन्थ रचे।

नवलदास—ईश्वरवाद सम्बन्धी 'मन प्रमोद' नामक ग्रन्थ के रचयिता, जो फतहपुर से 1868 में प्रकाशित हुआ, कुल 8 पृष्ठ। तासी द्वारा उल्लिखित यह

नवलदास सम्भवतः जगजीवनदास जी के शिष्य हैं । इनका रचनाकाल सं० 1817-23 वि० है ।

रामचरण—रामसनेही सम्प्रदाय के संस्थापक । यह वैरागी थे । इनका जन्म सं० 1776 में जयपुर राज्यान्तर्गत सोरह चसन (Sorah Chacan) गाँव में हुआ था । यह मूर्तिपूजा के विरोधी थे । सं० 1807 में यह घर से निकले, उदयपुर राज्य में भीलवाड़ा पहुँचे । यहाँ दो वर्ष रहे । उदयपुर नरेश भीमसिंह ने इन्हें बड़ा पीड़ित किया, तब इन्हें शाहपुर नरेश भीमसिंह ने शरण दी । यह सं० 1824 में शाहपुर पहुँचे । 79 वर्ष की वय में 1798 के अप्रैल मास (सं० 1855) में इनका देहावसान यहीं हुआ । रामसनेही सम्प्रदाय की स्थापना शाहपुर में सं० 1826 में हुई ।

रामचरण ने 36250 शब्दों की रचना की है । (यह नाप अनुष्टुप छंदों में प्रतीत होती है, क्योंकि तासी ने प्रत्येक श्लोक की वर्ण संख्या 32 दी है) ।

रामजन्म—रामसनेही सम्प्रदाय के दूसरे गुरु । रामचरण के 12 चेलों में से एक । इनका जन्म सिरसाँ गांव में हुआ था, 1768 में इन्होंने रामसनेही धर्म स्वीकार किया । 12 वर्ष 2 माह 6 दिन तक गद्दी पर रहने के अनन्तर 1809 में शाहपुर में दिवंगत हुए । इन्होंने 1800 शब्दों की रचना हिन्दी में की है ।

दूल्हाराम—1776 में रामसनेही हुए । 1824 में मृत्यु को प्राप्त हुए । रामसनेही सम्प्रदाय के तीसरे गुरु । इनके दस हजार शब्द और लगभग चार हजार साखियाँ उपलब्ध हैं । इन्होंने अपने ही सम्प्रदाय के नहीं, बल्कि अन्य हिन्दू-मुसलमानों के भी प्रसिद्ध व्यक्तियों पर प्रशंसात्मक कविताएँ लिखी हैं ।

छत्रदास—रामसनेहियों के आध्यात्मिक गुरुओं में दूल्हाराम के उत्तराधिकारी । यह 1000 शब्दों के रचियता हैं । यह चौथे रामसनेही गुरु थे । 1824 ई० में गद्दी पर बैठे । 1831 में दिवंगत हुए । इनके उत्तराधिकारी नारायणदास हुए ।

दरियादास—एक मुसलमान दर्जी थे । इन्होंने एक नए आकाश पंथ की स्थापना की । यह कबीर की तरह सुधारक थे । वेद, कुरान, पुराण नहीं मानते थे । इन्होंने हिन्दी में 18 ग्रन्थ रचे थे । तासी में दरियादास के सम्प्रदाय के लोगों का आचार-विचार वर्णित है ।

दरियादास दो हुए एक राजपूताने में, दूसरे बिहार में, दोनों 19वीं शती में थे ।

बख्तावर—हिन्दू फकीर । ब्रजभाषा में 'सुनीसार' (? शून्य सार) नामक ग्रन्थ के रचयिता । इस ग्रन्थ में शून्यवादियों के सिद्धान्त का प्रतिपादन है । यह ग्रन्थ दयाराम के आश्रय में लिखा गया था । दयाराम इस सम्प्रदाय के संरक्षक थे और 1817 में हाथरस के राजा थे । इसी वर्ष उस नगर पर हेस्टिंग्ज ने अधिकार किया था । इस ग्रन्थ के कुछ अंश का अनुवाद तासी ने दिया है ।

रामराउ (गुरु)—नानक के वंश की नवीं पीढ़ी के शिष्य हैं । इन्होंने हिन्दुई भजनों की रचना की है । इनकी कब्र देहरादून में है और हिन्दू-मुसलमान सभी से समान रूप में समादृत हैं । इनकी समाधि पर लाल रंग का झंडा उड़ा करता है ।

मार्च में यहाँ मेला लगता है। यह 12 वर्ष की वय में लाहौर में थे। यह रामरामी सम्प्रदाय के संस्थापक थे। उक्त सम्प्रदाय वाले हरिद्वार के निकट हिमालय की तल-हटी में बड़ी संख्या में हैं। इन्होंने आलमगीर बादशाह के सामने चमत्कार दिखाए थे। शाह आलम के गुलाम कादिर द्वारा अंधा किए जाने से पहले ये दिवंगत हो चुके थे।

श्वेताम्बर—श्वेताम्बर, जैन कवि, वर कवि उपनाम। ऋषभ चरित्र के रचयिता।

गुरुदास वल्लभ (भाई)—यह सिख थे। इन्होंने सिख धर्म सम्बन्धी कविताएँ लिखी हैं, जिनमें नानक की प्रशस्ति है।

रीतिकाल के अन्य कवि

वेदांगराय—'पारसी प्रकाश' के रचयिता। यह ग्रंथ शाहजहां की आज्ञा से लिखा गया था और इससे हिन्दुओं और मुसलमानों के घरों में महीनों आदि के गिनने की विधि का वर्णन है।

विनोद (369) के अनुसार 'पारसी प्रकाश' का रचना काल सं० 1707 है।

मोतीराम—'माधोनल' के रचयिता। इसी के आधार पर लल्लूजीलाल और विला ने यह कथा उर्दू में लिखी। तासी ने अज्ञानवश 'माधोनल' को नायिका और 'काम कंदला' को नायक कहा है। इनकी दूसरी कृति है 'किस्सा-इ-दिलाराम ओ दिलरुवा' है। यह हिन्दुई के प्रसिद्ध शृंगारी कवि और लेखक थे। विनोद (507) के अनुसार इनका रचनाकाल सं० 1740 है। हजारा में इनके छंद हैं।

भूपति—कायस्थ। हिन्दी पद्य में 'श्रीभागवत' के रचयिता। विनोद (525/1) में इनका रचनाकाल सं० 1744 दिया गया है।

पठान सुलतान—बाबू हरिचन्द द्वारा कवि वचनसुधा के 8वें अंक में उल्लिखित, बिहारीलाल की सतसई पर रचित कुंडलिया के रचयिता।

वस्तुत: बिहारी सतसई पर पठान सुलतान के नाम से कुंडलिया जोड़नेवाले कवि का नाम चन्द है। इसका उपस्थिति काल सं० 1749 है।

वृन्द—वृन्द सतसई के रचयिता। तासी ने प्रमाद से 'नीति' को कहावत समझकर इन्हें 'सतसई' शीर्षक कहावतों के संग्रह का रचयिता कहा है।

वृन्द सतसई का रचनाकाल सं० 1761 है। (विनोद 442)।

गंगापति—सं० 1775 (1719 ई०) में लिखित 'विज्ञान विलास' के रचयिता। यह हिन्दुओं के विभिन्न दार्शनिक सिद्धांतों का निरूपण करनेवाला ग्रन्थ है। इसमें वेदांत का सिद्धांत और रहस्यमय जीवन उपयुक्त बताया गया है। रचना गुरु-शिष्य संवाद रूप में है।

रसरंग—तानसेन की भांति संङ्गीतज्ञ और कवि। रागसागर में उल्लेख। विनोद (650) के अनुसार कविताकाल सं० 1780।

जैसिंह—टाड के अनुसार 'कल्पद्रुम' के रचयिता। ग्रियर्सन के अनुसार इनका

शासनकाल सन् 1699-1743 ई० है। इनके ग्रंथ का नाम है 'जयसिंह कल्पद्रुम'।

खुशहालराय—यह मुहम्मदशाह के राजत्वकाल में रहनेवाले थे। अपनी विद्वत्ता एवं अपने धन के कारण उच्च स्थान ग्रहण करते थे। इन्होंने दोहरा एवं राग आदि में अनेक कविताएं हिन्दी में लिखी हैं। इनकी कविताओं का संग्रह रायल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता के पुस्तकालय में है। उक्त संग्रह पहले फोर्ट विलियम कालेज में था। इनके पुत्र दिलखुश उर्दू में लिखा करते थे। खुशहाल, दिलखुश से अधिक प्रसिद्ध हैं। खुशहालराय की रचनाएं 'राग सागर' में हैं। इनमें इनकी छाप 'खुशाल' है।

रागसागर कृत राग कल्पद्रुम में 'खुशाल' छाप की अनेक रचनाएँ हैं। लेखक का परिचय अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। तासी से इनके बारे में जानकारी मिलती है, जिसका औरों ने उपयोग नहीं किया। मुहम्मदशाह का शासनकाल सं० 1776-1805 वि० है। यही खुशहाल का भी समय है।

शिवराज—जैपुर के लेखक। 'रत्नमाला' और शिवसागर के रचयिता तासी ने इन दोनों ग्रन्थों का उल्लेख शिवदास की भी कृति के रूप में किया है। रत्नमाला हिन्दी एवं संस्कृत में वनस्पति एवं खनिज औषधियों की सूची है। इनका रचनाकाल 1909 वि० है।

जयचन्द्र—सं० 1863 (1806 ई०) में जयपुर के जयचन्द्र जैन ने 'स्वामि कार्तिकयानुप्रेक्षा' नाम से जैन सिद्धांतों पर संस्कृत भाषा में उक्त ग्रंथ लिखा।

जानकीप्रसाद—जुक्त (युक्ति) रामायण के रचयिता। उक्त ग्रन्थ बनारस से मुद्रित। विनोद (1131) के अनुसार कविताकाल 1872 वि०।

राजा विश्वनाथसिंह—लोक प्रचलित गीतों और कबीर की कविताओं पर टीका के रचयिता। तासी ने यह उल्लेख नहीं किया है कि यह रीवां के राजा थे। इनका रचनाकाल सं० 1870 से 1911 वि० है।

नरायन पंडित—'हितोपदेश' और 'राजनीति' के अनुवादक। तासी का संदेह है कि यह नरायन पण्डित सम्भवतः फोर्ट विलियम कालेज के पुस्तकाध्यक्ष लक्ष्मी नारायण हैं, जिन्होंने इसी ग्रन्थ (सम्भवत: राजनीति) का बँगला मे अनुवाद किया था।

हरिनाथ—'पोथी शाह मुहम्मद शाही' के रचयिता। यह मुहम्मद शाह का इतिहास है।

सेठ हमीरमल—हिन्दी में लिखित तथा 1850 में आगरे से मुद्रित जैन धर्म की व्याख्या करनेवाली 'पोथी जैन मत' के रचयिता।

जयनारायण घोषाल—स्कन्द पुराण में वर्णित काशी खण्ड के 100 भागों में से प्रथम 35 भागों के अनुवादक। उक्त ग्रन्थ कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। यह जयनारायण घोषाल वही हैं, जिनके नाम पर काशी का प्रसिद्ध 'जयनारायण स्कूल' है।

रीतिकालीन गद्य लेखक

लल्लूजीलाल—इनका नाम लल्लू (श्री लल्लूजी लाल कवि) दिया गया है। इन्हें भ्रांत ढंग से लल्लूसिंह और गुजरात का निवासी ब्राह्मण कहा गया है। वस्तुतः ये आगरा के रहनेवाले गुजराती ब्राह्मण थे। इनकी रचनाएँ ब्रजभाषा और उर्दू दोनों में समान हैं। इनकी कुछ उर्दू रचनाएँ भी नागरी लिपि में हैं। इनकी रचनाएँ ये हैं :

1. **प्रेम सागर**—चतुर्भुज मिश्र के ब्रजभाषा दोहा-चौपाइयों में लिखित श्री मद्भागवत के दशम स्कन्ध का अरबी-फारसी शब्दों के मिश्रण से रहित आगरा की बोली में गद्यानुवाद। इसकी छपाई 1804 ई० (सं० 1860) में जान गिलक्रिस्ट के समय शुरू हुई, पर 1810 में समाप्त हुई।
2. **लतायफ-इ-हिन्दी**—उर्दू और हिन्दुई में 100 छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह। 1810 में 'द न्यू साइक्लोपीडिया हिन्दुस्तानिका एटसेटरा' नाम से कलकत्ते से प्रकाशित।
3. **राजनीति**—नारायण पण्डित ने संस्कृत से ब्रजभाषा पद्य में लिखा था। उसी का ब्रजभाषा गद्य में लल्लूजी द्वारा अनुवाद। 1809 में कलकत्ते से प्रकाशित।
4. **सभा विलास**—ब्रजभाषा के विभिन्न प्रसिद्ध कवियों की चुनी हुई कविताओं का संकलन।
5. **सप्तशतिका**—तासी का खयाल है कि यह गोवर्द्धनाचार्य की आर्या सप्तशती का अनुवाद है। वस्तुतः यह बिहारी की सतसई है जिस पर लल्लूजी ने लाल चन्द्रिका नाम से टीका लिखी।
6. **मसादिर-इ-भाषा**—हिन्दी व्याकरण सम्बन्धी रचना।
7. **विद्या दर्पण**—रामकथा तथा कला और विज्ञान का सार।
8. **माधो विलास**—संस्कृत में अनुदित हिन्दी काव्य। वस्तुतः यह चम्पू है। 1864 में आगरा से प्रकाशित।

निम्नांकित रचनाओं के अनुवाद में लल्लूजी ने सहायता की है :

1. **सिंहासन बत्तीसी**—1801 में मिर्जा काज़िम अली 'जवां' की सहायता से लल्लू ने उर्दू में, पर नागरीलिपि में अनुवाद किया। 1805 में प्रकाशित।
2. **बैताल पचीसी**—सूरत कवीश्वर ने इसका ब्रजभाषा पद्य में अनुवाद किया था। इस अनुवाद के आधार पर यह ग्रन्थ मजहर अली खाँ विला की सहायता से रचा गया अथवा लल्लूजी की सहायता से बिला ने यह ग्रन्थ रचा।
3. **माधोनल**—लल्लूजी ने इसके भी रूपांतर में विला की सहायता की।
4. **शकुन्तला**—रूपांतर करने में लल्लूजी ने काजिम अली 'जवां' को सहायता दी।

बिहारी सतसई की लाल चन्द्रिका टीका इन्हीं लल्लूजी लाल की है। पर इसका उल्लेख छत्र प्रकाश के रचयिता लाल के विवरण में भी है, साथ ही इसके रचयिता एक अन्य कवि लाल की भी कल्पना कर ली गई है।

सदल मिश्र—'नासिकेतपाख्यानम्' (नासिकेतोपाख्यान) या 'चन्द्रावती' के रचयिता। संस्कृत कथा के व्रजभाषा गद्य में अनुवादक (यह रचना खड़ी बोली में है और अनुवाद न होकर स्वतन्त्र ढंग से लिखी गई है)। रचना काल 1860 सं० (1804 ई०)। गिलक्राइस्ट के संरक्षण में फोर्ट विलियम कालेज, कलकत्ता में लिखित।

अज्ञात कालीन कवि

तासी में कुछ कवि ऐसे हैं जिनका समय अज्ञात है। ये कवि तासी के समकालीन तो हैं नहीं, भक्तिकालीन हों अथवा रीतिकालीन। अत: इनको रीतिकालीन के अन्त में स्थान दिया जा रहा है :

अम्बरदास—आरसी झगड़ा के रचयिता। इसमें कृष्ण और गोपी का शृंगार पूर्ण वार्तालाप है। 1868 में आगरे से प्रकाशित।

मीरचन्द—लक्ष्मी स्वयंवर, रुक्मिणी स्वयंवर, द्रौपदी स्वयंवर और सुभद्रा स्वयंवर के रचयिता।

राव अमराव सिंह—रागमाला के रचयिता। 1864 में मेरठ से मुद्रित।

आनन्द सरस्वती—नाटकदीप, नृसिंह तापिनी, पद्मिनी के रचयिता।

कृष्णानन्द—राम रत्नावली, व्रजविलास के रचयिता।

(शाहअली) गुजराती—'दोहरा' और 'सुन्दर सिंगार' के रचयिता। दोहरा में तसव्वुफ सम्बन्धी दोहे हैं।

जानकी वल्लभ—1866 में बनारस से मुद्रित 'मानस शंकावली' के रचयिता।

तोरल मल—व्रजभाषा में लिखित भागवत के रचयिता।

दयाराम—दया विलास के रचयिता।

वर्गराय—'गोपाचल कथा' के रचयिता। पद्यबद्ध रचना। इसमें ग्वालियर का इतिहास है।

बलीराम—राम गीता, ज्ञानपोथी और मिस बाहुल हुदा (निर्देशन का दीपक) के रचयिता।

विनय विजय गणि—चार भागों में जैन धर्म की प्रिय रचना, मालवा के राजा श्रीपाल की कथा 'श्रीपाल चरित्र' के रचयिता। तासी ने इस कथा का संक्षेप दिया है।

श्यामलाल—योगवाशिष्ठ भाषा के रचयिता। 1868 में कानपुर से प्रकाशित। 1000 पृष्ठ।

समरसिंह—पुष्पदन्त के महिम्न स्तोत्र के हिन्दी अनुवादक।

सुन्दरलाल—'व्रत महातम' के रचयिता। यह ग्रन्थ फारसी लिपि में आगरा में छपा था।

आधुनिक काल (सं० 1900-1920 वि०)

इस काल के साहित्यकारों को निम्नांकित वर्गों में बाँटा जा सकता है :

1. गद्य लेखक, 2. कवि, 3. पाठ्य ग्रन्थ लेखक, 4. अन्य।

आधुनिक युग के दो गद्य लेखक

राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द—राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द का विवरण बाहबी (मुन्शी और बाबू शीव या सिवप्रसादसिंह) नाम से दिया गया है।

बनारस के। संस्कृत विद्वान, स्वभावतः हिन्दी के अत्यधिक पक्षपाती, यद्यपि उर्दू में भी लिखा है। अत्यधिक लिखनेवाले सामयिक हिंदुस्तानी लेखकों में से हैं। इनकी हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी में सब मिलाकर लगभग 50 रचनाएँ हैं। यह पहले 'शिमला हिल स्टेट्स' के प्रबन्धक थे। वहाँ शिमला अखबार के सम्पादक भी थे।

आजकल शिवप्रसाद बनारस में रहते हैं, शासन सम्बन्धी कार्य करते हैं। सरकारी कमिशनर ए० सी० टकर ने उन्हें धार्मिक और नैतिक कहानियों का अंगरेजी से उर्दू अनुवाद करने के काम में लगाया है।

तासी ने इनके ग्रन्थों की यह सूची दी है :

(क) हिन्दी ग्रन्थ

1. रोम का इतिहास—डा० गोल्डस्मिथ के इसी नाम के अंग्रेजी ग्रन्थ का अनुवाद। 1845 में दिल्ली से प्रकाशित, 2. मार्शमैन कृत 'ब्रीफ सर्वे आफ हिस्ट्री' के द्वितीय भाग का अनुवाद, 3. भूगोल वृत्तांत, 4, छोटा भूगोल हस्तामलक-1859 ई०, 5. बाल बोध, 6. विद्यांकुर, 7. अँगरेजी अक्षरों के सिखाने की उपाय 1860, 8. मनबहलाव 1860, 9. वामा मनरंजन 1856, 10. बच्चों का इनाम 1860, 11. विनय पत्रिका सटीक 1868, 12. मानव धर्मसार 1857, 13. वर्णमाला 1857, 14. इतिहास तिमिर नाशक, 15. दमयंती की कथा, 16. वीर सिंह की कथा।

इनके हिन्दी ग्रन्थों की यह अंग्रेजी सूची रेवरेंड जे० लांग ने 'सेलेक्शन्स फ्राम द रेकार्ड्स ऑफ द बंगाल गवर्नमेंट' में दी है :

1. प्राइमर, 2. आर्थोग्राफिकल प्राइमर, 3. रीडर, 4. अरिथमेटिक, 5. लेटर राइटर, 6. रूडिमेंट्स ऑफ नालेज, 7. इंट्रोडक्शन टु ज्योग्राफ़ी, 8. राइज़ ऐंड फ़ाल ऑफ़ द सिख नेशन, 9. सेल्फ़ इंस्ट्रक्टर, 10. मैनुअल ऑफ़ टीचर्स, 11. मिसेलेनी, 12. ए टेल ऑफ़ इनफ़ैंटीसाइड, 13. इज़ी रीडर, 14. ज्योग्राफ़ी, 15. टेल फ़ार वूमेन, 16. अनेकडोट्स, 17. ए क्रिश्चियन टेल, 18. ऐनअदर क्रिश्चियन टेल 19. मारल प्रीसेप्टस—ट्रान्सलेटेड फ्राम द संस्कृत, 20. विलसन्स इंट्रोडक्शन टु द रिग्वेद ट्रान्सलेटेड, 21. इंक्स्ट्रैक्ट फ्राम मनु।

उसी ग्रन्थ में उनके उर्दू ग्रन्थों की यह सूची दी गई है :

1. मिसेलेनी—कई भागों में, 2 सेन्डफर्ड ऐंड मर्टन ट्रान्सलेटेड, 3. ज्योग्रेफी—तीन भाग, 4. इक्स्ट्रैक्ट्स फ्राम लाइफ इन अर्नेस्ट, 5. दुन्नलन ए टेल, 6. हेनरी ऐंड हिज़ बियरर, 7. क्लियो ऐंड मार्क, ए टेल, 8. ट्रू हिरोइज्म, ए टेल, 9. ए लेक्चर ग्रान डाइजेशन, 10. ग्रान रेलवेज (लेक्चर्स) ।

तासी ने शिवप्रसाद के हिन्दी-उर्दू के सत्ताईस ग्रन्थों की सूची दी है, जिसमें से 16 हिन्दी ग्रन्थों का नाम पीछे दिया गया है, नीचे ग्यारह उर्दू ग्रन्थों का नाम दिया जा रहा है ।

1. 'तारीख' ता तवारीख-इ बर्र-इ ग्रो बहार—1845 ।
2. जाम जहाँनुमा, 1859 ।
3. छोटा जाम जहाँनुमा, 1860 ।
4. किस्सा-इ सैंडफोर्ड ग्रो मेर्टन 1855 ।
5. दिल बहलाव— 1858 ।
6. दस्तूरुल ग्रमल पैदाइस—1855 ।
7. मिसरातुउलगाफलीन—1856 ।
8. ग्राईना-इ-तारीख-नुमा—1868 ।
9. तारीख चीन ग्रो जापान—1867 ।
10. कुछ बयान ग्रपनी जुवान का ।
11. शहादत कुरानी वर कुतुब रब्बानी— 1860 ।

तासी ने राजा शिवप्रसाद के सम्बन्ध में एक भयानक भूल की है। उसने दो शिवप्रसादों को मिला दिया है। दूसरे शिवप्रसाद हैं मुंशी शिवप्रसाद । यह मुंशी शिवप्रसाद नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से मुद्रित उर्दू पत्र ग्रवध ग्रखबार के सम्पादक थे । इसमें इन शिवप्रसाद की कविताएँ निकला करती थीं । इन्हीं का उपनाम 'बहाबी' था, जिसका ग्रर्थ है देवदत्त, ईश्वर का दिया हुग्रा । ग्रियर्सन ने 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ग्रॉफ़ हिन्दुस्तान' में जो ग्रन्थ सूची दी है, उसमें 18 हिंन्दी की एवं 14 उर्दू की किताबें हैं ग्रौर उक्त सूची स्वयं उक्त राजा साहब की भेजी हुई है, ग्रतः प्रामाणिक है । तासी ने जो सूची दी है, उसमें कुछ भ्राँति हो सकती है । उसकी कुछ पुस्तकें इन मुंशी शिवप्रसाद बहाबी की हो सकती हैं, कुछ ग्रन्य तत्कालीन शिवप्रसादों की ।

राजा लक्ष्मणसिंह—इन्हें कुंवर लक्ष्मणसिंह कहा गया है । यह इटावा के ज्वाइंट मजिस्ट्रेट थे । ए० ग्रो० ह्यूम की सहकारिता में इन्होंने निम्नांकित ग्रन्थों का ग्रनुवाद किया :

1. लगान वसूल करने के लिए 1859 का एक ऐक्ट 10—1859 में इटावा से उर्दू में मुद्रित ।

2. हिन्दुस्तान का दण्ड संग्रह—हिन्दी में इण्डियन पेनल कोड का ग्रनुवाद । 1860 का ऐक्ट 14 । इटावा से 1861 में प्रकाशित ।

तासी का खयाल है कि सम्भवतः इन्हीं ने ये पुस्तकें लिखीं :

1. किताबखाना शुमार-इ-मगरबी

2. 'हिदायतनामा वास्ते डिप्टी मजिस्ट्रेट, उर्दू में 1859 में इलाहाबाद से प्रकाशित। 'शिक्षा डिप्टी मजिस्ट्रेट' हिन्दी में, 1853 में आगरा से प्रकाशित।

3. गोपीचन्द भरथरी—1867 में।

राजा लक्ष्मणसिंह महाकवि कालिदास के सुप्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्', 'रघुवंश' और 'मेघदूत' के हिन्दी अनुवादों के लिए परम प्रख्यात हैं। तासी को उनके इन ग्रन्थों का सम्भवतः कोई पता नहीं था। इसीलिए उसने इनका उल्लेख नहीं किया।

आधुनिक युग के चौदह कवि

रागसागर श्री कृष्णानन्द व्यासदेव—उदयपुर में देव गर्व कोट के निवासी गौड़ ब्राह्मण। राग कल्पद्रुम के रचयिता। इसमें बारह लाख पच्चीस हजार लोकप्रिय छंद हैं। इसका प्रकाशन कलकत्ते में 1899 सं० से 1902 सं० तक हुआ। इसमें 1800 बड़े पृष्ठ हैं। 22 वर्ष की वय में इसके रचयिता ने सामग्री संकलन के लिए यात्रारंभ किया था।

रामनाथ प्रधान—प्रसिद्ध सामयिक हिन्दू। 'रामकलेवा रहस्य' के रचयिता। बनारस से 1866 में प्रकाशित, 27 पृष्ठ।

बाबू गोपालचन्द बनारसी—एक उच्चवंशीय हिन्दू। जन्म 1834 जनवरी में, मृत्यु मई 1861 में। 12 की वय में वाल्मीकि रामायण और गर्ग संहिता का अनुवाद किया। इनके ग्रन्थों की सूची यह है :

1. मत्स्य कथामृत, 2. कच्छ कथामृत, 3. वाराह कथामृत, 4. नृसिंह कथामृत, 5. वामन कथामृत, 6. परशुराम कथामृत, 7. रामकथामृत, 8. बलराम कथामृत, 9. बुद्ध कथामृत, 10. कल्कि कथामृत, 11. जरासंध महाकाव्य, 12. रस रत्नाकर, 13. विचित्र विलास, 14. भारती भूषण, 15. नहुष नाटक, 16. भाषा नीति, 17. एकादशी कथा—दोहा-चौपाई में, 18. एकादशी कथा—कीर्तन में, 19. अनेकार्थ, 20. भाषा व्याकरण, 21. जोग लीला, 22. भगवद् गुणानुवाद कीर्तन, 23. होरी के कीर्तन धमार।

इन्हीं गोपालचन्द्र का वर्णन एक बार गिरधर दास नाम से अलग भी किया गया है। गिरिधरदास इनका उपनाम है।

भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र—बनारस के। गोपालचन्द्र के पुत्र। हरिवचन सुधा (? कवि वचन सुधा) के सम्पादक। इसका प्रथम अंक अगस्त 1867 में प्रकाशित हुआ। यह अप्रकाशित प्रसिद्ध हिन्दी कविताओं को प्रकाशित करने वाली मासिक पत्रिका है। एक अंक 16 में बड़े पृष्ठ। बाद में कई अंक (सम्भवतः वर्ष भर के) जिल्दों में बँध जाते हैं। जो जिल्द तासी के पास थी, उसमें देव का अष्टयाम

(पूर्ण), भारतेन्दु के पिता गोपालचंद्र का भारती भूषण (एक ग्रंश) 'उक्ति युक्ति रस कौमुदी' (एक ग्रंश), बलराम कथामृत, रत्नावली नाटिका, नहुष नाटक, ग्रनुराग बाग, प्रेमरतन, पावस कवित्त संग्रह हैं।

यह 1868 में ग्रपने घर हुए मुशायरे की 12 गजलों का संग्रह 'गजलियात' 1869 में 'फारगेट मी नाट' (पद्यों में ग्रनूदित चुने हुए ग्रंशों द्वारा निर्मित) के संकलयिता ग्रौर कार्तिक कर्म विधि (1868 ई०) के रचयिता हैं।

तासी ने इन हरिश्चन्द्र को 29 ग्रक्तूबर 1867 के 'ग्रवध' ग्रखबार में विज्ञापित 'तशरीह उस्सजा' नामक उर्दू ग्रन्थ के रचयिता पंडित हरिचन्द से ग्रभिन्न होने की भ्रांत कल्पना की है।

पंडित मन्नालाल द्विज—भारतेन्दु युगीन पण्डित मन्नालाल 'द्विज' बनारसी को तासी ने तमन्नालाल बना दिया है। इनके तीन ग्रन्थों का नाम दिया गया है—1. सुन्दरी तिलक, 2. राम सहस्र नाम, 3. राम गीता सटीक। तीनों ग्रन्थ सं० 1925 में बनारस में छपे। सुन्दरी तिलक का विशेष रूप से विवरण दिया गया है। तासी के ग्रनुसार मन्नालाल ने हरिश्चन्द्र के ग्राश्रय में, उन्हीं के व्यय से, सं० 1925 में बनारस से सुन्दरी तिलक छपवाया। इसमें 58 ग्रठपेजी पृष्ठ हैं। प्रत्येक पृष्ठ में 22-22 पंक्तियाँ है। मुख पृष्ठ पर इसमें संकलित 45 प्राचीन एवं ग्राधुनिक कवियों की सूची दी गई है, जो इस शोध प्रबन्ध में प्राचीन काव्य संग्रह नामक ग्रध्याय में दी जा चुकी है।

रणधीर सिंह—'भूषण कौमुदी' के रचयिता। तासी में उक्त ग्रन्थ की टीका के रचयिता कहे गए हैं, जो 1863 (सं० 1920) में काशी से प्रकाशित हुई थी।

महाराज रघुराज सिंह—महाराज रघुराज सिंह (रीवां नरेश) को रघुनाथ सिंह (महाराज) कहा है। इन्हें भागवत् पुराण के हिन्दी ग्रनुवाद ग्रानन्द ग्रम्बुनिधि का रचयिता कहा गया है। उक्त ग्रन्थ 1868 (सं० 1925) में बनारस से छपा था।

इनके नाम पर ये दो ग्रन्थ ग्रौर दिए गए हैं, जो दूसरों के हैं :

1. ग्राउट पोस्ट ड्रिल का 'ग्राउट पोस्ट ड्रिल का किताब' नाम से ग्रनुवाद—1867 में बिलग्राम से प्रकाशित।

2. फील्ड इक्सरसाइज़ ऐंड इवोलूशन्स ग्रॉफ़ इनफ़ैक्ट्री' का हिन्दुस्तानी ग्रनुवाद—1868 में बम्बई से प्रकाशित।

माधोसिंह—देवी चरित्र सरोज के रचयिता। 1862 ई० में बनारस से सटीक प्रकाशित। यह माधवसिंह वस्तुत: ग्रमेठी के राजा थे। इनका उपनाम क्षितिपाल था। यह सरोज की रचना के समय जीवित थे।

हरनारायण—एक सामयिक कवि। भागवत् के ग्यारहवें स्कन्ध का 'ग्रानन्द सिंधु' नाम से हिन्दी ग्रनुवाद करने वाले। उक्त ग्रनुवाद दिल्ली से 1868 में 278 पृष्ठों में फारसी लिपि में छपा।

हीराचन्द खानजी (कवि)—बम्बई के रहनेवाले हैं। इनके निम्नांकित ग्रंथ हैं :

1. ब्रजभाषा काव्य संग्रह—दो भाग, 1862 1864 में बम्बई से प्रकाशित। पहले भाग में 54 और दूसरे में 120 पृष्ठ। पहले में नन्ददास कृत 'नाममंजरी' या 'नाममाला' और 'अनेकार्थ मंजरी' हैं। दूसरे भाग में सुन्दरकृत 'सुन्दर शृंगार' और स्वयं इनका ग्रन्थ 'हीरा शृंगार' है।

2. श्री पिंगलादर्श—ब्रजभाषा में, 342 पृष्ठ, बम्बई से 1865 में प्रकाशित।

3. योगवाशिष्ठ—प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थ का अनुवाद। इसमें 6 भाग हैं—1. वैराग्य, 2. मुमुक्षु, 3. उत्पत्ति. 4. स्थिति, 5. उपशम, 6. निर्वाण।

हुकुमतराय—कायस्थ जाति के एक प्रसिद्ध वैद्य हैं। जिन्होंने अनेक दोहरे, कवित्त तथा अन्य हिन्दी कविताएँ लिखी हैं। वे दिल्ली प्रान्त में अरियाबाद के निवासी थे। इन्होंने उर्दू में भी लिखा है।

शिवबख्श 'शक्ल'—अजीमगढ़ के पंडित। इन्होंने प्रावर्ब्स ऑफ़ सालोमन, सर्मन ऑफ़ द माउंट और सन्त मैथ्यू की धर्म पुस्तक के तेरहवें अध्याय का हिन्दी छन्दों में अनुवाद किया है। ये अनुवाद लीथो में छपे हैं।

पंडित मन्नूलाल विस्मिल—उर्दू, हिन्दी दोनों के लेखक। औरंगाबाद के कायस्थ। सैयद मुहम्मद अली नजीर के शिष्य। 'रामाश्वमेध' के रचयिता। करीमुद्दीन ने इन्हें 'तबकातुशुअरा' में स्थान दिया है। राज पुस्तकालय काशी (रामनगर) में इसकी हस्तलिखित प्रति है। यह ग्रंथ सं० 1925 (1869 ई०) में बनारस से मुद्रित हुआ था, 250 पृष्ठ।

मीर वली मुहम्मद—सम्भवतः मुसलमान हो गए हिन्दू हैं। इन्होंने सम्भवतः हिन्दू रहते समय निम्नांकित दो ग्रन्थ कृष्ण पर लिखे—1. श्रीकृष्ण की जन्मलीला। 2. बालपन बाँसुरी लाल।

दोनों ग्रन्थ 1868 ई० में फतहगढ़ से रामसरूप द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित हुए थे।

लक्ष्मण या लछमन—मन्नालाल संकलित 'रघुनाथ शतक' के ढंग पर इन्होंने भी दोहों का एक शतक रचा था, जो 1923 सं० (1868 ई०) में छपा था।

दो पाठ्य ग्रंथ लेखक

तासी ने अनेक व्यक्तियों का विवरण, दिया है, जो केवल पाठ्य ग्रन्थ लेखक हैं। इनमें श्रीलाल और वंसीधर परम प्रसिद्ध हैं। इनका विवरण मातादीन मिश्र कृत कवित्त रत्नाकर, शिवसिंह सरोज और ग्रियर्सन कृत 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर' में समान रूप से दिया गया है। आचार्य शुक्ल ने भी अपने सुप्रसिद्ध इतिहास में इन्हें स्थान दिया है। अतः इनको यहाँ भी स्थान दे दिया जा रहा है।

पंडित वंशीधर—उत्तर-पश्चिम प्रदेश के स्कूलों के प्रधान निरीक्षक। उर्दू और हिन्दी के बहुत लिखनेवाले आधुनिक लेखक। उत्तर-पश्चिम प्रदेश के शिक्षा विभाग के डायरेक्टर एच० एस० रीड ने इन्हें पहले अनुवाद कार्य के लिए नियुक्त

किया था। इनके 43 ग्रन्थों की सूची तासी ने दी है। इनमें निम्नांकित हिन्दी के हैं :

1. एक अँगरेजी व्याकरण का हिन्दी रूपांतर—1855 आगरा।
2. ग्राम कल्पद्रुम—उर्दू से अनुवाद।
3. किसान उपदेश।
4. शिक्षा पटवारियान का—उर्दू से अनुवाद, आगरा 1855।
5. छन्द दीपिका, आगरा, 1854।
6. माप प्रबन्ध—उर्दू से अनुवाद, आगरा 1853।
7. जीविका परिपाटी—रेवेरेन्ड ह्वाटले के मनी मैटर के उर्दू अनुवाद 'दस्तूरुमाश' से हिन्दी में अनूदित।
8. उर्दू मार्तण्ड—उर्दू से अनुदित आगरा 1854।
9. भोज प्रबन्ध सार—संस्कृत में हिन्दी टीका सहित। इलाहाबाद 1959।

10.11. शिक्षा मंजरी, दो भाग—अँगरेजी के उर्दू अनुवाद से हिन्दी में अनूदित, 1859 इलाहाबाद।

12. दशमलव दीपिका—आगरा 1854।
13. पुष्पवाटिका—फारसी गुलिस्ताँ के आठवें अध्याय का हिन्दी अनुवाद, आगरा 1853।
14. ईश्वरता निदर्शन—उर्दू से अनूदित।
15. चित्रकारी सार—अंग्रेजी के उर्दू अनुवाद से अनूदित।
16. सैंडफोर्ड और मार्टिन कहानी—उर्दू से अनूदित, आगरा, 1855।
17. क्षेत्र चन्द्रिका—गणित नाम की पुस्तक, उर्दू से अनूदित।
18. भूगोल वर्णन—दो भाग।
19. रेखागणित सिद्ध फलोदय।
20. प्रसिद्ध चर्चावली—जीवन चरित सम्बन्धी ग्रन्थ। उर्दू से अनूदित। पाँच भागों में।
21. इंगलैंडीय अक्षरावली।
22. गणित प्रकाश—चार भाग। श्रीलाल का सहयोग।
23. पिंड चन्द्रिका—आगरा 1859।
24. सिद्धि पदार्थ विज्ञान—इलाहाबाद 1860।
25. पाठक बोधनी—(नीति ग्रन्थ) आगरा 1859।
26. जगत् वृत्तान्त।
27. उपदेश पुष्पावली—गुलदस्ता अखलाक का हिन्दी अनुवाद।

श्रीलाल पण्डित—इन्होंने निम्नांकित ग्रन्थ रचे हैं :

1. महाजनी सार—'महाजनी पुस्तक' का संक्षेप। 1859 आगरा और इलाहाबाद।
2. पत्र मालिका—दो भाग, पत्र लेखन विधि की पुस्तक। 1850-56, आगरा।

3. धर्मसिंह का वृत्तान्त—उर्दू से हिन्दी में रूपांतरित।
4. खगोल सार—उर्दू से अनूदित।
5. ज्ञान चालीसी—नीति सम्बन्धी 40 कथन दोहों में।
6. अक्षर दीपिका,
7. उर्दू आदर्श।
8. गणित प्रकाश,
9. क्षेत्र चन्द्रिका।
10. सूरजपुर की कहानी, उर्दू से अनूदित।
11. रेखागणित।
12. भारतवर्ष का वृत्तांत—अंग्रेजी से पहले गद्य में, फिर पद्य में अनूदित।
13. तस्लीसुल्लुगात—उर्दू-हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोष। श्रीलाल, वंशीधर, मुंशी चिरंजीलाल की सहायता से एस० एस० रीड द्वारा लिखा गया, जो उस समय पश्चिमोत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग के डायरेक्टर थे।
14. समय प्रबोध।
15. बीज गणित।
16. लीलावती—भास्कराचार्य की संस्कृत रचना का हिन्दी अनुवाद 1851।
17. प्रश्न मंजूषा।
18. भाषा चन्द्रोदय—हिन्दी व्याकरण। आगरा, 1860।
19. बुधि विद्योदोत—संस्कृत वाक्यों का हिन्दी टीका सहित संग्रह।
20. दिहाली दीप—हिन्दी-उर्दू में नाप-तोल की पुस्तक।
21. जमींदार के बेटे बुधसिंह का वृत्तांत।
22. आराम—हिन्दी में नीति सम्बन्धी दोहे और किस्से।
23. विद्यांकुर—यह राजा शिवप्रसाद की पुस्तक मालूमात का संशोधित रूप है।
24. खेत कर्म— 1850 सिकदरा।
25. शाला पद्धति—आगरा 1852। शरीउत्तालीम का हिन्दी रूपांतर।
26. धरमसिह शिववंसपुर के लम्बरदार का वृत्तान्त—इलाहाबाद 1868।

आधुनिक युग के अन्य लेखक

पण्डित श्री रामसिंह—-राज समाज के रचयिता। यह ग्रन्थ भारतीय रिवाजों पर है। 1851 में प्रतिलिपित।

पण्डित सीतलप्रसाद तिवारी—बनारस के। इन्होंने सिनापसिस ऑफ़ साइन्स का हिन्दी अनुवाद 'सिद्धान्त संग्रह' नाम से किया। 1855 में आगरा से प्रकाशित। 'कवि वचन सुधा' में संस्कृत से हिन्दी में अनूदित नाटकों के अनुवाद में ये पण्डित बाबू हरिश्चन्द्र के सहायक रहे हैं।

बाबू नवीनचन्द्र राय—संस्कृत व्याकरण, नवीन चन्द्रोदय (हिन्दी व्याकरण), लक्ष्मी-सरस्वती संवाद ग्रन्थों के रचयिता । ये सभी ग्रन्थ 1866, 1869 में लाहौर से प्रकाशित । लाहौर से पं० मुकुन्दराम द्वारा हिन्दी-उर्दू में प्रकाशित पाक्षिक पत्रिका 'ज्ञान प्रदायिनी' के सम्पादक ।

हरगोविन्द (उमेदलाल)—इन्होंने विभिन्न कवियों द्वारा रचित ईसाई धार्मिक हिन्दी कविताओं का संकलन 'कीर्तनावली' नाम से किया । यह तीन भागों में है। प्रथम भाग 1859 मे अहमदाबाद में छपा था ।

पण्डित बद्रीलाल—इन्होंने निम्नांकित ग्रन्थों की रचना की है :

1. हितोपदेश या उपदेश दर्पण—संस्कृत से अनुवाद, 1851ई०, मिर्जापुर । प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान डा० वैलेन्टाइन की देख-रेख में लिखित ।
2. विष्णु तरंग मलि ।
3. बालबोध व्याकरण ।
4. राबिसन क्रूसो—अँगरेजी से अनूदित, 1860 बनारस ।
5. सहस्र रात्रि संक्षेप—अरबी अलिफलैला के बँगला अनुवाद 'एक हजार एक रजनी' का संक्षिप्त अनुवाद, बनारस 1861 ।
6. भारत में स्त्री शिक्षा—व्याख्यान ।

गमानीलाल—कायस्थ, रोहतक के निवासी । सं० 1898 (1867 ई०) में इन्होंने भक्तमाल की एक टीका लिखी, मेरठ से प्रकाशित 21 मार्च 1867 के अखबार आलम में इसका उल्लेख है ।

समनलाल—'ज्ञान गश्त' के रचयिता । यह कायस्थ जाति का विवरण है और सर एच० इलियट को समर्पित है । 11-11 पंक्तियों के 132 पृष्ठ ।

————

2

□□□

हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास

डॉ० ग्रियर्सनकृत 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान'

ग्रियर्सन—ग्रियर्सन का जन्म 7 जनवरी 1851 ई० को आयरलैंड के डबलिन परगने में राथफर्नहम घराने में हुआ था। इनके पिता का भी नाम जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन था। इन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही पाई और उच्च शिक्षा डबलिन के प्रसिद्ध ट्रिनिटी कालेज में। यहाँ से 17 वर्ष की वय में इन्होंने बी० ए० की उपाधि ली। इन्होंने राबर्ट एटकिंसन से संस्कृत एवं मीर औलाद अली से हिन्दुस्तानी सीखी थी। इन भारतीय भाषाओं में अच्छी योग्यता प्राप्ति के लिए इन्हें विश्वविद्यालय ने पुरस्कृत किया था।

1871 ई० में ग्रियर्सन ने भारतीय सिविल सर्विस की परीक्षा पास की और 1873 ई० में हिन्दुस्तान आए। यहाँ यह बंगाल के जैसौर जिले में नियुक्त हुए; फिर तिरहुत, हबड़ा, मुर्शिदाबाद, रंगपुर और मधुबनी में रहे। 1880 ई० में अस्वस्थ होकर यह इंग्लैंड लौट गए। इसी वर्ष इन्होंने विवाह किया और सपत्नीक भारत लौट आए। 1885 ई० में छुट्टी लेकर यह जर्मनी गए और 1886 ई० में आस्ट्रिया के वियना नगर में हुए यूरोपीय प्राच्य विद्या विशारदों की अंतर्राष्ट्रीय सभा के अधिवेशन में भारत सरकार के प्रतिनिधि रूप में सम्मिलित हुए। यहीं इन्होंने 'हिन्दुस्तान का मध्यकालीन भाषा साहित्य, विशेषकर तुलसी' शीर्षक निबन्ध पढ़ा था। इस निबन्ध के लिए इन्होंने जो टिप्पणियाँ प्रस्तुत की थीं, उन्हीं के आधार पर दो वर्ष बाद इन्होंने अंग्रेजी में हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास प्रस्तुत किया, जिसका नाम 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान' है।

1887 ई० में ग्रियर्सन छुट्टी से लौटे और गया जिले में कलेक्टर हुए। 1892 ई० में इनकी बदली हबड़ा के लिए हुई। यहाँ यह 1896 ई० तक रहे। इसी वर्ष यह बिहार में अफ़ीम विभाग के एजेन्ट हुए। 1898 ई० में भारतीय भाषाओं के सर्वेक्षण के लिए इनकी नियुक्ति शिमला में हुई। 1902 ई० में यह विलायत चले गए, सिविल सर्विस से इस्तीफा दे दिया, फिर भारत नहीं लौटे, और वहीं बैठे-बैठे भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण करते रहे, जो 1929 ई० में पूरा हुआ।

ग्रियर्सन को भारत सरकार ने सन् 1894 ई० में सी० ग्राई० ई० की उपाधि दी थी। इसी वर्ष इन्हें हाले (Halle) विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० एवं 1902 में ट्रिनिटी कालेज डबलिन से डी०लिट० की उपाधियाँ मिलीं। इन्हें 'सर' का भी खिताब मिला था। ग्रियर्सन का देहावसान 90 वर्ष की वय में 8 मार्च 1941 ई० को हुग्रा।

कृतित्व—ग्रियर्सन भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिन्दी के प्रेमी एक परिश्रमी अंग्रेज थे। इनका रचनाकाल 1875 ई० से लेकर 1932 ई० तक है। इनका सारा कृतित्व अंग्रेजी में है और अंग्रेजों के लिए है। इनके सर्वाधिक महत्व के साहित्यिक कार्य तीन हैं। पहला है भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण। यह विशाल कार्य 1902 ई० में प्रारम्भ हुआ और 1929 ई० में समाप्त हुआ। इसमें कुल 11 बड़ी जिल्दें हैं। कुछ जिल्दों में कई-कई भाग हैं। जिल्द 5, भाग 2 में बिहारी और उड़िया भाषाएँ हैं (1903 ई०)। जिल्द 6 में पूर्वी हिन्दी (1904 ई०) और जिल्द 9 भाग 1 (1916 ई०) में पश्चिमी हिन्दी तथा भाग 2 में राजस्थानी और गुजराती (1908 ई०) का सर्वेक्षण है। जिल्द 1 भाग 1 में ग्रन्थ की भूमिका है। भूमिका भाग का हिन्दी अनुवाद डा० उदयनारायण तिवारी ने कर दिया है, जो उत्तरप्रदेशीय सरकार की ओर से प्रकाशित हुआ है। हिन्दी से सम्बन्धित अन्य भागों का भी हिन्दी अनुवाद हो जाना आवश्यक है। भाषा सर्वेक्षण के अतिरिक्त ग्रियर्सन की भाषा सम्बन्धी अनेक छोटी-बड़ी रचनाएँ और भी हैं।

ग्रियर्सन का दूसरा महत्वपूर्ण साहित्यिक कार्य है 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान'। यह हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास है। यह पहले 1888 ई० में रायल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल के एक विशेषांक रूप में प्रकाशित हुआ, तदनंतर 1889 ई० में स्वतन्त्र ग्रंथ के रूप में। इसका पुनर्मुद्रण नहीं हुआ। अतः यह ग्रन्थ अनुपलब्ध हो गया था। मैंने इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद 'हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास' नाम से प्रस्तुत किया, जो नवम्बर 1957 में हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, द्वारा प्रकाशित हुआ और अब अनूदित रूप में यह ग्रंथ सुलभ हो गया है।

ग्रियर्सन का तीसरा महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कार्य है तुलसी का वैज्ञानिक अध्ययन। ग्रियर्सन ने तुलसी पर कोई ग्रन्थ नहीं लिखा, पर उन्होंने 1886 ई० से लेकर 1921 ई० तक तुलसी पर लगभग एक दर्जन फुटकर निबन्ध लिखे, जिन्होंने तुलसी के अध्यनन की दिशा का निर्देश किया है। इन निबन्धों का एकत्र संकलन नहीं हुआ। तुलसी पर लिखे हुए ग्रियर्सन के समस्त हिन्दी निबन्धों का हिन्दी रूपांतर एक विद्वत्तापूर्ण भूमिका के साथ ग्रथ रूप में प्रकाशित होना चाहिए। ग्रियर्सन ने 1889 ई० में 'रामचरितमानस' की एक सौ छब्बीस प्रकाशित और हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर 'रामचरितमानस' का सम्पादन करके खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना से प्रकाशित कराया था। इसके सम्पादन में राजापुर के अयोध्याकांड और काशिराज पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति का भी उपयोग उन्होंने किया था।

द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान

1886 ई० में ग्रियर्सन ने वियना की प्राच्य विद्या विशारदों की सभा के अधिवेशन में हिन्दुस्तान के मध्यकालीन भाषा साहित्य और तुलसी पर जो निबंध पढ़ा था, उसकी तैयारी के लिए इन्होंने कई वर्षों में टिप्पणियाँ लिखी थीं, जिनका बहुत थोड़ा-सा अंश उक्त निबंध में प्रयुक्त हो सका था। विद्वानों ने ग्रियर्सन के उक्त निबन्ध को विशेष ध्यान से सुना था, अतः उससे प्रेरणा प्राप्त कर इन्होंने उन समस्त टिप्पणियों को सुव्यवस्थित रूप दिया। यह ग्रन्थ सर्वप्रथम 1888 ई० के 'रायल 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल' के जर्नल प्रथम भाग में, तदनन्तर उक्त सोसाइटी की ओर से ही 1889 ई० में स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में भी प्रकाशित हुआ। ग्रंथ का आकार सामान्य पुस्तकों के आकार से कुछ बड़ा है। यह ग्रंथ तीन खंडों में विभक्त कहा जा सकता है—1. प्रस्तावना आदि, 2. मूल ग्रंथ, 3. अनुक्रमणिकाएँ।

प्रथम खंड में तीन विभाग हैं—

(अ) प्रस्तावना (Preface)—इसमें कुल 5 पृष्ठ (7 से 11 तक) हैं। इसमें ग्रंथ लिखने के अवसर और आवश्यकता पर विचार हुआ है।

(ब) भूमिका (Introduction) इसमें कुल 11 पृष्ठ (13 से 23 तक) हैं। भूमिका के चार उपविभाग हैं—1. सूचना के सूत्र, 2. विषयन्यास का सिद्धांत, 3. हिन्दुस्तान के भाषा साहित्य का संक्षिप्त विवरण, 4. चित्र परिचय।

(स) शुद्धि पत्र और परिशिष्ट (Addenda)। इसमें दस-बारह पृष्ठ हैं। ग्रंथ के छपते-छपते लेखक को जो नई सूचनाएँ प्राप्त हुई, उन्हें उसने इस परिशिष्ट में दिया है। इसी के अंतर्गत तुलसीदास लिखित पंचनामे का रोमन लिपि में प्रत्यक्षीकरण और उसका अंग्रेजी अनुवाद भी है।

द्वितीय खंड में कुल 168 पृष्ठ हैं। यही मूल ग्रन्थ है। ग्रंथ 12 अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में प्रायः तीन अंश हैं। इन्हें सामान्य परिचय, प्रधान कवि परिचय और अप्रधान कवि-सूची नाम दिया जा सकता है।

तीसरे खण्ड में तीन अनुक्रमणिकाएँ हैं। पहली में व्यक्तिनाम सूची, दूसरी में ग्रन्थ-नाम सूची एवं तीसरी में स्थान-नाम सूची दी गई है। इन नामों के आगे जो संख्याएँ दी गई हैं, वे पृष्ठों की न होकर कवियों की हैं।

'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान' के अध्यायों की नाम-सूची यह है :

1. चारण काल, 2. पन्द्रहवीं शती का धार्मिक पुनरुत्थान 3. मलिक मुहम्मद का प्रेम काव्य, 4. ब्रज का कृष्ण सम्प्रदाय, 5. मुगल दरबार, 6. तुलसीदास, 7. रीतिशास्त्र, 8. तुलसीदास के अन्य परवर्ती (क) धार्मिक कवि, (ख) अन्य

कवि, 9. अठारहवीं शताब्दी (क) धार्मिक कवि, (ख) अन्य कवि, 10. कम्पनी के अंदर हिन्दुस्तान (क) बुन्देलखंड और बघेलखंड, (ख) बनारस, (ग) अवध, (घ) अन्य। 11. विक्टोरिया की छत्रछाया में हिन्दुस्तान, 12. विविध।

प्रथम ग्यारह अध्यायों में कुल संख्या 740 है, जिनमें 739 कवियों का विवरण है। 706 संख्या पर हिन्दी और बिहारी नाटकों पर टिप्पणी है। इन 739 कवियों की तिथियाँ दी गई हैं। बारहवें अध्याय में 112 कवि हैं (741-952)। ये सभी अनिश्चित कालीन कवि हैं।

ग्रन्थ का नाम है 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान'। नाम से तो मालूम होता है कि इस ग्रन्थ में हिन्दुस्तान की समस्त आधुनिक भाषाओं का विवेचन होगा, पर है ऐसा नहीं। इसीलिए ग्रियर्सन ने प्रस्तावना में 'हिन्दुस्तान' शब्द की अपनी व्याख्या दे दी है। हिन्दुस्तान से उनका अभिप्राय 'हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश' से है। इस ग्रन्थ में मारवाड़ी, हिंदी और बिहारी के लिखित साहित्य का उल्लेख हुआ है, ग्राम साहित्य की चर्चा नहीं हुई है। इस ग्रन्थ में अधिकाँश लेखकों का नाम मात्र दिया गया है, विवरण नहीं। प्रत्येक लेखक की रचना के नमूने ग्रियर्सन ने पढ़े थे, ऐसा उनका कहना है, पर सबको समझा भी है, ऐसा उनका दावा नहीं।

आधार ग्रन्थ--भूमिका में ग्रियर्सन ने निम्नांकित अठारह ग्रन्थों से सहायता लेने का उल्लेख किया है :

ग्रन्थ	रचयिता	रचनाकाल
1. भक्तमाल	नाभादास	1540 ई० के लगभग (?)
2. गोसाईं चरित	बेनीमाधवदास	1600 ई० के लगभग (?)
3. कवि माला	तुलसी	1655 ई०
4. हजारा	कालिदास त्रिवेदी	1718 ई०
5. काव्य निर्णय	भिखारीदास	1725 ई० के लगभग
6. सत्कवि गिरा विलास	बलदेव	1746 ई०
7. सूदन द्वारा प्रशंसित कवि सूची	सूदन	1750 ई० के लगभग
8. विद्वन्मोद तरंगिणी	सुब्बासिह	1817 ई०
9. राग सागरोद्भव राग कल्पद्रुम	कृष्णानन्द व्यासदेव	1843 ई०
10. शृंगार संग्रह	सरदार	1848 ई०
11. भक्तमाल का उर्दू अनुवाद	तुलसीराम	1854 ई०
12. रस चन्द्रोदय	ठाकुर प्रसाद त्रिपाठी	1863 ई०
13. दिग्विजय भूषण	गोकुल प्रसाद	1868 ई०
14. सुन्दरी तिलक	हरिश्चन्द्र	1869 ई०
15. काव्य संग्रह	महेशदत्त	1875 ई०
16. कवित्त रत्नाकर	मातादीन मिश्र	1886 ई०

17. शिवसिंह सरोज	शिवसिंह सेंगर	1883 ई०
18. विचित्रोपदेश	नकछेदी तिवारी	1887 ई०

इन 18 ग्रन्थों में से 17वां सरोज है। 18वां ग्रन्थ सरोज का परवर्ती है। प्रथम 16 सरोज की पूर्ववर्ती रचनाएँ हैं। इनमें से केवल शृंगार संग्रह ऐसा है, जिसका उल्लेख शिवसिंह ने नहीं किया है। शेष 15 की सहायता ग्रियर्सन ने ली है, ऐसा उनका कथन है। पर उनका यह कथन ठीक नहीं प्रतीत होता। इन 18 ग्रन्थों में से उन्होंने केवल निम्नांकित 5 को देखा है और इन्हीं से सहायता भी ली है—1. राग कल्पद्रुम, 2. शृंगार संग्रह, 3. सुन्दरी तिलक, 4. शिवसिंह सरोज, 5. विचित्रोपदेश। राग कल्पद्रुम को बड़े परिश्रमपूर्वक और बड़ी कठिनाई से प्राप्त करके ग्रियर्सन ने देखा था। ऐसा उल्लेख राग कल्पद्रुम द्वितीय संस्करण के सम्पादक श्री नगेन्द्रनाथ बसु ने उक्त ग्रन्थ में किया है। ग्रियर्सन ने उक्त ग्रन्थ के प्रथम संस्करण की भूमिका से हिन्दी कवियों और ग्रंथों की सूचियाँ दी हैं, जिससे यह तथ्य स्पष्ट है। शृंगार संग्रह का उल्लेख सरोज में नहीं है, पर ग्रियर्सन ने न केवल इसका उल्लेख किया है, बल्कि इसमें संकलित कवियों की सूची भी दे दी है। अतः इसका भी सदुपयोग उन्होंने अवश्य किया है। इसी प्रकार सुन्दरी तिलक में आए कवियों की भी सूची ग्रियर्सन ने दी है। अतः उन्होंने इसका भी सदुपयोग किया रहा होगा। सरोज तो ग्रियर्सन के ग्रंथ का प्रमुखतम आधार है। भूमिका में स्वयं ग्रियर्सन इस सम्बन्ध में लिखते हैं :

"एक देशी ग्रंथ जिस पर मैं अधिकाँश में निर्भर रहा हूँ, और प्रायः सभी छोटे कवियों और अनेक अधिक प्रसिद्ध कवियों के भी सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाओं के लिए जिसका मैं ऋणी हूँ। शिवसिंह द्वारा विरचित और मुंशी नवलकिशोर द्वारा प्रकाशित अत्यन्त लाभदायक शिवसिंह सरोज (द्वितीय संस्करण 1883 ई०) है।" वस्तुतः ग्रियर्सन ने सरोज के तीसरे संस्करण का उपयोग किया था। तीसरा संस्करण ही 1883 ई० में प्रकाशित हुआ था। विचित्रोपदेश का उल्लेख सरोज में न तो है, और परवर्ती रचना में होने के कारण न हो ही सकता था। ग्रियर्सन इसका उल्लेख करते हैं, अतः इसे भी उन्होंने देखा रहा होगा।

शेष 13 ग्रंथों को ग्रियर्सन ने नहीं देखा था, ऐसा सोचा जा सकता है। इनकी सहायता ग्रियर्सन ने प्रत्यक्ष रूप से नहीं ली थी, अप्रत्यक्ष रूप से ली थी। सरोज में इन ग्रंथों से सहायता ली गई है और ग्रियर्सन ने सरोज से सहायता ली है। तुलसीदास के प्रकरण में उन्होंने स्वयं लिखा है कि गोसाइँ चरित उन्हें मिला नहीं, असलियत यह है कि ग्रियर्सन को गोसाई चरित मिला था, इसे उन्होंने 1889 ई० में खड्गविलास प्रेस से प्रकाशित होनेवाले स्वसंपादित 'रामचरितमानस' के प्रारंभ में प्रकाशित कर दिया है, पर उन्हें इसकी पहचान नहीं थी कि वह तथाकथित बेनीमाधवदास का ही 'गोसाइँ चरित' है। कहावत हुई, बगल में छोरा, शहर में ढिंढोरा।

काव्य निर्णय में दास जी ने एक कवित्त में कुछ कवियों का नाम लिया है, जिनकी ब्रजभाषा को उन्होंने प्रमाण माना है। इस कवित्त को शिवसिंह ने उद्धृत किया है। जिस भ्रांत ढंग से इसका उपयोग उन्होंने किया है, उसी ढंग से ग्रियर्सन ने भी। इन्होंने भी अब्दुर्रहीम खानखाना और रहीम को दो कवि माना है तथा नीलकंठ को मिश्र मान लिया है। स्पष्ट है कि ग्रियर्सन ने काव्य निर्णय को सरोज की आँखों देखा है, अपनी आँखों नहीं।

इसी प्रकार ग्रियर्सन न तो सूदन रचित सुजान चरित्र को जानते थे और न इसके आदि में दिए छंदों से परिचित थे। ग्रंथारंभ में ही पाँच से लेकर दस संख्यक छह छंदों में प्रणम्य कवि सूची है। शिवसिंह ने प्रमाद से इन्हें दस छंद समझ लिया है। अंतिम छंद उनके पास था। इस छंद में आए कवियों का नाम उन्होंने सरोज में दिया है। इसी का उल्लेख शिवसिंह का निर्देश करते हुए ग्रियर्सन ने भी कर दिया है। स्पष्ट है उन्होंने इस ग्रंथ का भी उपयोग अप्रत्यक्ष रूप से ही किया है।

सत्कविगिराविलास में 17 कवियों की रचनाएँ संकलित हैं। इनकी सूची सरोज में दी गई है। ग्रियर्सन ने यहीं से उक्त सूची अपने ग्रंथ में उतार ली है। ऐसा कोई प्रमाण नहीं, जिससे सिद्ध हो कि उन्होंने उक्त ग्रंथ देखा था।

कविमाला, हजारा, विद्वन्मोद तरंगिणी, रस चंद्रोदय, दिग्विजय भूषण, काव्य-संग्रह एवं कवित्त रत्नाकर को यदि उन्होंने देखा होता, तो निश्चय ही इनमें संकलित कवियों की भी सूची उन्होंने दे दी होती। काव्य संग्रह और कवित्त रत्नाकर को तो वे कभी भी भूल नहीं सकते थे, क्योंकि इनके अंत में सरोज के ही समान कवियों के जीवन चरित्र एवं उनमें से अनेक की तिथियाँ दी हुई हैं। 'कवित्त रत्नाकर' के स्थान पर सरोज की भूमिका में प्रमाद से 'कवि रत्नाकर' छप गया है, ग्रियर्सन में भी उक्त ग्रंथ 'कवि रत्नाकर' के अशुद्ध नाम से ही उल्लिखित हुआ है। अतः स्पष्ट है कि उक्त ग्रंथ भी ग्रियर्सन के देखने में नहीं आए। यह संभव है कि ग्रियर्सन ने भक्तमाल के अतिरिक्त एकाध और ग्रंथ देखा रहा हो, पर निश्चयपूर्वक कुछ कहा नहीं जा सकता।

इन 5 काव्य संग्रहों के अतिरिक्त ग्रियर्सन ने निम्नांकित ग्रंथों का अवश्य ही उपयोग किया है, क्योंकि उन्होंने इनका उल्लेख विभिन्न कवियों के विवरण में मुख्य ग्रंथ के अंतर्गत अनेक स्थलों पर किया है :

1. फ्रांसीसी लेखक गार्सां द तासी कृत 'हिस्त्वायर द ला लितरेत्योर हिंदुई एं हिंदुस्तानी'—प्रथम संस्करण, प्रथम खंड।

2. विलसन कृत 'रेलिजस सेक्ट्स ऑफ द हिंदूज'। प्रायः सभी भक्त कवियों के विवरण में इस ग्रंथ की सहायता ली गई है।

3. जेम्स टाड कृत 'अनाल्स ऐंड ऐंटिक्विटीज ऑफ राजस्थान'—राजपूताने के कवियों के विवरण में इस ग्रंथ से सहायता ली गई है।

ग्रियर्सन का प्रमुखतम सूत्र 'सरोज'

शिवसिंह सरोज ग्रियर्सन के ग्रंथ का प्रमुखतम आधार है। अनेक स्थलों पर उन्होंने सरोज का अनुवाद कर दिया है और कभी कभी तो यह अनुवाद महा भ्रष्ट हो गया है। 'रस' के लिए उन्होंने 'स्टाइल' (Style) शब्द का प्रयोग किया है। रौद्र रस का अनुवाद 'द ट्रैजिक स्टाइल' और बीभत्स रस का 'द सैटिरिक स्टाइल' किया गया है। गुमान मिश्र ने नैषध चरित्र का हिन्दी पद्यानुवाद 'काव्य कलानिधि' नाम से प्रस्तुत किया था। इस अनुवाद की प्रशंसा करते हुए सरोजकार लिखता है : "पंचनली, जो नैषध में एक कठिन स्थान है, उसको भी सललि कर दिया।" ग्रियर्सन ने इसका अर्थ समझा—"इन्होंने पंचनलीय पर, जो नैषध का एक अत्यंत कठिन अंश है, सलिल नाम की एक विशेष टीका लिखी।"

ग्रियर्सन को इस सम्बन्ध में सन्देह था, अतः उन्होंने इस 'सलिल' पर यह पाद टिप्पणी दे दी है :

"अथवा शिवसिंह का, जिनसे मैंने यह लिया है, यह अभिप्राय है कि उन्होंने पंचनलीय को बिल्कुल पानी की तरह स्पष्ट कर दिया है।"

चतुरसिंह राना के सम्बन्ध में शिवसिंह ने लिखा है—"सीधी बोली में कवित्त हैं।" शिवसिंह का 'सीधी बोली' से अभिप्राय 'खड़ी बोली' से है, जैसा कि चतुरसिंह की सरोज में उदाहृत कविता से स्पष्ट है। ग्रियर्सन ने 'सीधी बोली' का अनुवाद 'सिम्पुल स्टाइल' किया है। इसी प्रकार शिवसिंह ने नृप शंभु कवि के सम्बन्ध में लिखा है :

"इनकी काव्य निराली है" सरोज में काव्य शब्द सर्वत्र स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है। ग्रियर्सन ने 'निराली' को ग्रन्थ का नाम समझ लिया है।

सरोज में एक कवि सोमनाथ हैं। इनका विवरण इस प्रकार दिया गया है :

"109 सोमनाथ ब्राह्मण नाथ भोग सांड़ीवाले 1803"

यह कवि ग्रियर्सन के ग्रंथ में दो कवि हो गया है। इस प्रकार :

"443 ब्राह्मननाथ—भोग सांड़ी, जिला हरदोई के। जन्म (? उपस्थिति) 1746 सोमनाथ (सं० 447) के प्रसंग में शिवसिंह द्वारा उल्लिखित।"

"447 सोमनाथ—भोग सांड़ी, जिला हरदोई के। जन्म (?उपस्थिति) 1746 ई०।

सूदन। शिवसिंह द्वारा ब्राह्मननाथ (सं० 443) के प्रसंग में उल्लिखित।"

सरोज में विराम चिन्हों का प्रयोग नहीं है, फिर भी अस्पष्टता कहीं नहीं है। विराम चिन्ह लगा देने पर विवरण यों होगा :

"109, सोमनाथ, ब्राह्मण, नाथ भोग, साँड़ी वाले, 1803"

स्पष्ट है कवि का नाम सोमनाथ है, वह जाति से ब्राह्मण है, उसकी कवि छाप या भोग 'नाथ' है, वह सांड़ी (जिला हरदोई) का रहने वाला है। सोमनाथ से भिन्न ब्राह्मण नाथ कोई दूसरा व्यक्ति नहीं और न तो भोगसाँड़ी नाम का कोई गाँव ही है।

ग्रियर्सन में कुल 951 कवियों का विवरण है। इसमें से 65 कवि अन्य सूत्रों से लिये गये हैं, 886 कवि सीधे शिवसिंह सरोज से लिये गये हैं, जो कुल का 94 प्रतिशत है। अन्य सूत्रों से प्राप्त 63 कवियों की सूची यह है:

1. जोधराज, 2. रामानन्द, 3. भवानन्द, 4. भगोदास, 5. श्रुत गोपाल, 6. विद्यापति मैथिल, 7. उमापति मैथिल, 8. जयदेव मैथिल, 9. हठी नारायण, 10. ध्रुवदास, 11. जगन्नज अकबरी दरबार वाले, 12. दादू, 13. प्राणनाथ पन्ना वाले, 14. वीरभान, 15. नजीर अकबराबादी, 16. वेदांग राय, 17. जगतसिंह चित्तौर के राना, 18. सूजा, 19. गम्भीर राय, 20. गंगापति, 21. शिवनारायण, 22. लालजी, 23. दूल्हाराम, 24. मनबोध झा मैथिल, 25. केशव मैथिल, 26. मोदनारायण मैथिल, 27. लाल झा मैथिल, 28. ठाकुर द्वितीय, 29. मीर अहमद, 30. देवीदास, जगजीवनदास के शिष्य, 31. बलदेव, विक्रमसाहि चरखारी के आश्रित, 32. हरिप्रसाद बनारसी, 33. जयचन्द जयपुरी, 34. बख्तावर हाथरसवाले, 35. तुलसीरास अगरवाला मीरापुर वाले, 36. भानुनाथ झा मैथिल, 37. हरखनाथ झा मैथिल, 38. चन्द्र झा मैथिल, 39. जान क्रिश्चियन, 40. पं० अंबिकादत्त व्यास, 41. पं० छोटूराम तिवारी, 42. अम्बिका प्रसाद, 43. काली परसाद तिवारी, 44. बिहारीलाल चौबे, 45. नामदेव, 46. किसनदास, भक्तमाल के एक टीकाकार, 47. गुमानी कवि पटनावाले, 48. चक्रपानि मैथिल, 49. चतुरभुज मैथिल, 50. जयानन्द मैथिल, 51. डाक, 52. नजामी, 53. नन्दीपति, 54. परमल्ल, 55. प्रेमकेश्वरदास, 56. बरगराय, 57. बुलाकीदास, 58. मंजन मैथिल, 59. भड्डुरि, 60. महीपति मैथिल, 61. रमापति मैथिल, 62. रमाकांत, 63. सरसराय मैथिल।

ग्रियर्सन के सन-संवत

ग्रियर्सन ने सरोज के कवियों के साथ-साथ सरोजदत्त संवतों को भी ग्रहण किया है, किन्तु एक अन्तर के साथ। सरोज में कवियों का उपस्थिति काल दिया गया है, ग्रियर्सन ने उन्हें उत्पत्तिकाल मान लिया है। ऐसा क्यों हुआ ? इसका उत्तर देने के लिये सरोज के विभिन्न संस्करणों की चर्चा आवश्यक है। ग्रियर्सन ने भूमिका में लिखा है कि उन्होंने 1883 ई० में हुए सरोज के द्वितीय संस्करण का उपयोग किया था। मुझे सरोज के प्रथम संस्करण एवं तृतीय संस्करण की सम्पूर्ण अखंडित प्रतियाँ प्राप्त हैं। प्रथम संस्करण अप्रैल 1878 ई० में हुआ था और तृतीय नवम्बर 1883 ई० में। द्वितीय संस्करण 1878 एवं 1883 के बीच किसी समय हुआ रहा होगा। प्रथम संस्करण एवं तृतीय संस्करण के जीवन चरित प्रकरण की मुद्रण-पद्धति में जमीन-आसमान का अन्तर है। प्रथम संस्करण में कवियों का विवरण 5 स्तम्भों में दिया गया है और तृतीय संस्करण में उसे वह रूप प्राप्त हो गया है, जिस रूप में वह सप्तम संस्करण में है। तृतीय संस्करण में प्रथम संस्करण के कवि परिचय के प्रथम तीन स्तम्भों को एक पंक्ति में शीर्षक रूप से मुद्रित किया गया है और

चौथे एवं पाँचवें स्तम्भ को नीचे एक अनुच्छेद में दिया गया है। पहले संस्करण में 'सम्वत' स्तम्भ के नीचे कवियों के सम्वत दिये गये थे। तृतीय संस्करण में ये 'सम्वत में उ०' हो गये।

मुझे सरोज की एक और खंडित प्रति प्राप्त हुई है, जिसमें कवियों का विवरण 5 स्तम्भों में ही दिया गया है। यह या तो प्रथम संस्करण या द्वितीय संस्करण की कोई प्रति होनी चाहिये, क्योंकि तृतीय संस्करण से परिचय पद्धति बदल गई है और इसमें प्रथम संस्करण सी ही स्तंभवद्ध है। अंतरंग परीक्षा से सिद्ध होता है कि यह प्रति द्वितीय संस्करण की है। प्रथम संस्करण में भूमिका की, उदाहृत कविताओं की, एवं कवियों के जीवन चरित्र की पृष्ठ संख्याएँ (10, 337, 138) अलग-अलग दी गई हैं। खंडित प्रति में प्रारम्भ के 78 पृष्ठ नहीं हैं, यह पृष्ठ 79 से प्रारम्भ होती है। इसका 79 पृष्ठ प्रथम संस्करण के 69 वें पृष्ठ के मेल में है। उक्त पृष्ठों पर दोनों में गोपालराय की पहली कविता अधूरी, दूसरी कविता पूरी तथा गदाधर राय कवि एवं गुनाकर त्रिपाठी कांधा निवासी की रचनाएँ हैं। प्रथम संस्करण में गोकुलबिहारी के कवित्त प्रथम डेढ़ चरण भी पृष्ठांत में आ गये हैं। स्पष्ट है कि खंडित संस्करण में भूमिका के पृष्ठों की अलग गणना नहीं की गई है। इसमें जीवन चरित्र के पृष्ठ भी अलग से नहीं गिने गये हैं। यह ग्रन्थ पृष्ठ 482 तक है। अन्त के भी लगभग 6 पृष्ठ इसमें नहीं है।

प्रथम संस्करण में भूमिका के दसों पृष्ठों में पृष्ठों के मध्य में 'भूमिका 2', 'भूमिका 3' आदि लिखकर पृष्ठ-गणना की गई है। कोने में उर्दू में भी पृष्ठ संख्या दी गई है। उदाहरण वाले भाग में पृष्ठ के ऊपर मध्य में 'शि० स०' लिखकर पृष्ठसंख्या दी गई है और कोने में उर्दू में भी पृष्ठ संख्या है। जीवन चरित्र वाले प्रकरण में पृष्ठ के ऊपर मध्य में केवल पृष्ठ संख्या दी गई है, कुछ लिखा नहीं गया है, यहाँ भी कोनों में पृष्ठ संख्या उर्दू में दी गई है। मुख पृष्ठ पर भी मोटे अक्षरों में शिवसिंह सरोज लिखने के पश्चात दूसरी पंक्ति में उर्दू में भी पतले अक्षरों में 'शिवसिंह सरोज' लिखा हुआ है। खंडित प्रति में मुख पृष्ठ एवं भूमिका है ही नहीं। काव्य संग्रह वाले अंश में पृष्ठों के ऊपर मध्य में 'शि० स०' लिखा गया है, एक कोने में नागरी अंकों में पृष्ठांक दिये गये हैं, दूसरे कोने में उर्दू में 'शिवसिंह सरोज' पूरा-पूरा लिखकर पृष्ठांक दिया गया है, जीवन चरित्र वाले प्रकरण में ऊपर पृष्ठ के मध्य में कोई लेख नहीं है, एक कोने में नागरी में केवल पृष्ठसंख्या दी गई है, दूसरे कोने में प्रत्येक पृष्ठ पर उर्दू में 'जीवन चरित्र' लिखकर पृष्ठ संख्या दी गई है।

ये दोनों विभेद स्पष्ट सिद्ध करते हैं कि खंडित प्रति द्वितीय संस्करण की है, प्रथम संस्करण की नहीं।

ग्रियर्सन के कथनानुसार उन्होंने सरोज के द्वितीय संस्करण का उपयोग किया जो 1883 ई० में प्रकाशित हुआ था। पर अभी हम देख चुके हैं कि नवम्बर 1883 में सरोज का तृतीय संस्करण हुआ था और इसका द्वितीय संस्करण अप्रैल 1878 और

नवम्बर 1883 के बीच किसी समय (1880 ई० के आसपास) हुआ रहा होगा। अब यदि ग्रियर्सन ने 1883 वाले संस्करण का उपयोग किया, तो उन्होंने द्वितीय संस्करण का उपयोग नहीं किया या यदि द्वितीय संस्करण का उपयोग किया, तो 1883 वाले संस्करण का नहीं किया। यह बहुत कम सम्भव प्रतीत होता है कि द्वितीय संस्करण 1883 के जनवरी और नवम्बर के बीच हुआ हो और दस महीनों में ही समाप्त हो गया हो अथवा दूसरे एव तीसरे संस्करण दोनों 1883 ई० ही में हो गये रहे हों।

मेरा निश्चित मत है कि ग्रियर्सन ने नवम्बर 1883 में होने वाले सरोज के तृतीय संस्करण का उपयोग किया, उन्होंने द्वितीय संस्करण को न तो देखा और न उसका उपयोग ही किया। कवि परिचय की जो प्रणाली सरोज के तृतीय संस्करण में दी गई है, ग्रियर्सन ने एकदम उसी को ग्रहण कर लिया है। रंचमात्र भी परिवर्तन नहीं किया है अर्थात् प्रथम पंक्ति में कविसंख्या, कविनाम-ग्राम और सम्वत शीर्षक रूप में, दूसरी पंक्ति से कवि परिचय दूसरे अनुच्छेद के रूप में। पुनः तृतीय संस्करण में प्रथम कवि अकबर के 'सम्वत 1584' के साथ 'में उत्पन्न हुए' जोड़ दिया गया है, अन्य कवियों के सम्वतों के साथ 'में उ०', जो 'में उत्पन्न हुए' का संक्षिप्त रूप है। ग्रियर्सन ने सरोज के सम्वतों को जन्मकाल माना है, स्पष्ट है कि उन्होंने तृतीय संस्करण का ही उपयोग किया है। यदि उन्होंने द्वितीय संस्करण का ही उपयोग किया होता तो निश्चित ही उन्होंने सरोज के सम्वतों को जन्म सम्वत् न स्वीकार किया होता। तो सरोज के सम्वतों को ग्रियर्सन ने जो जन्म सम्वत मान लिया, इसमें उनका कोई विशेष दोष नहीं है, सरोज के तृतीय संस्करण का दोष है, जिसमें नवल किशोर प्रेस के व्यवस्थापकों ने कागज की बचत के लिए एवं सुविधा के लिये जीवन चरित की मुद्रण पद्धति में परिवर्तन कर दिया, जो उतनी हानिप्रद नहीं, साथ ही सम्वतों के साथ 'में उत्पन्न हुए' 'या में उ०' जोड़ दिया, जो घोर अनिष्टकर सिद्ध हुआ। इस प्रसंग में शिवसिंह को भी दोष नहीं दिया जा सकता, क्योंकि इस संस्करण के होने के 5 वर्ष पूर्व ही उनका देहान्त 1878 ई० ही में हो गया था।

सरोज के 1003 कवियों में से 687 कवि तिथि युक्त हैं, 53 कवि (187 ई०) में वि०' (विद्यमान) हैं' और 263 कवि तिथिहीन हैं। सरोज के 687 स-तिथि कवियों में से 675 ग्रियर्सन में स्वीकृत हैं। इन 675 में से 438 के सम्वत भी ज्यों के त्यों स्वीकार कर लिये गये हैं। इन 438 सम्वतों में 385 जन्म सम्वत् माने गये हैं और 37 उपस्थिति सम्वत्। 15 सम्वतों के सम्बन्ध में ग्रियर्सन यह नहीं निश्चय कर पाये हैं कि इन्हें जन्म सम्वत माना जाय या उपस्थिति सम्वत।

ग्रियर्सन के निम्नांकित संख्या वाले 385 कवियों के सम्वत सरोज से लिए गये हैं और इन्हें जन्म सम्वत स्वीकार किया गया है—22, 23-30, 32, 53, 55, 64-69, 70, 72, 75, 77-83, 85, 102, 105, 106, 109, 115-21, 125, 127, 129, 140, 141, 144, 150, 154, 155, 158, 165, 166, 170, 172, 175-80, 182, 208, 210, 213-17, 218-34, 236-45, 247-54, 256-60, 262-66, 268,

270-71, 273-77, 279-84, 286-88, 291-304, 306, 307, 309-18, 342-46, 355, 364, 365, 367, 382-85, 387-91, 393-94, 397-402, 404-30, 432-33, 436-38, 440-42, 445-46, 448-60, 462-82, 485, 486, 489, 491-96, 500-01, 510-82, 533-43, 545-58, 570 574, 578, 584-88, 589, 591-92, 594-97, 603, 605-17, 619-27, 630-32, 643-44, 646-48, 650-59, 661, 663-67, 669, 671, 673-76, 678, 679 681-89।

ग्रियर्सन के निम्नांकित संख्या वाले 37 कवियों के सम्वत सरोज से लिये गये हैं और इन्हें उपस्थिति काल माना गया है—1, 73, 74, 114, 126, 142, 153, 157, 173, 235, 272, 285, 279, 290, 308, 350, 358, 366, 369, 370, 372, 374, 403, 488, 497, 504, 559, 582, 590, 598, 649, 660, 668, 672, 677, 690, 691।

ग्रियर्सन के निम्नांकित संख्या वाले 17 कवियों के सम्वत सरोज से लिये गये हैं, पर ग्रियर्सन यह नहीं निश्चित कर पाए हैं कि ये जन्म सम्वत् माने जाएँ या उपस्थिति सम्वत्—156, 288, (443, 447), 444, 483, 448, 527, 560, 593, 635, 636, 637, 639, 707-09। ये सरोज के 15 कवियों के सम्वत हैं। ग्रियर्सन के 443, 447, संख्यक कवि वस्तुतः एक ही सोमनाथ हैं, जो जाति से ब्राह्मण हैं और नाथ जिनकी छाप है। सरोज में यह एक ही हैं, ग्रियर्सन में सोमनाथ और ब्राह्मणनाथ नाम से दो हो गये हैं। इसी प्रकार 635, 636 संख्यक दलपतिराय और वंशीधर यद्यपि उचित ही रीति पर ग्रियर्सन में दो कवियों के रूप में स्वीकृत हैं, पर सरोज में वे एक में सम्मिलित हैं।

कमच कवि का संवत सरोज से लिया गया है। इन्हें उक्त संवत से पूर्व उपस्थित कहा गया है। अतः सरोज के कुल 438 कवियों के संवत ग्रियर्सन के 440 कवियों के संवतों के रूप में स्वीकृत हैं।

ग्रियर्सन ने कुल 739 कवियों का संवत् दिया है, इनमें से 440 के संवत तो ज्यों के त्यों सरोज से ले लिए गए हैं, अतः ग्रियर्सन में कुल 299 नए संवत हैं। इन 299 में से 46 कवि तो पूर्णरूपेण नए हैं। ये ग्रियर्सन में नए आए 65 कवियों में से प्रथम 46 हैं। इनकी सूची पीछे दी जा चुकी है। अतः इन 299 कवियों में से 253 कवि सरोज से उद्धृत हैं। इनमें से निम्नांकित 11 कवियों की तिथियां पूर्णरूपेण नई हैं। सरोज में इन्हें कोई तिथि नहीं दी गई है—

1. गदाधर दास, 2. जगामग, 3. नीलाधर, 4. (संत) सुन्दरदास, 5. हरिचंद चरखारीवाले, 6. रामरतन राठौर, 7. प्रहलाद चरखारी वाले, 8. मान कवि बुन्देलखंडी, 9. देव, काठ जिह्वा स्वामी, 10. दिनेश, 11. रघुनाथदास महंत अयोध्या।

इन 11 कवियों को बाद दे देने पर ग्रियर्सन के 242 कवियों की तिथियों पर विचार करना शेष रह जाता है। सरोज में 53 कवि वि० कहे गए हैं। सरोज के

अनुसार ये 1878 ई० में उपस्थित थे। ग्रियर्सन ने इनमें से 44 को 1883 ई० में जीवित स्वीकार किया है। ये संवत भी एक तरह से सरोज से ही लिए गए हैं। इनमें से केवल दो के संवतों की छानबीन की गई है और इनका जन्म संवत भी दिया गया है। ये हैं राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद और रीवाँ नरेश महाराज रघुराज सिंह। रघुराज सिंह का तो राज्यारोहण काल भी दिया गया है। इन 42 कवियों की ग्रियर्सन में दी हुई कवि संख्या निम्नांकित है :

571-73, 576, 579, 581, 583, 601, 604, 693-98, 711-37

इन 42+2 कवियों को भी बाद दे देने पर अब केवल 198 कवि ऐसे रह जाते हैं जो लिए तो गए हैं सरोज से, पर जिनकी तिथियां सरोज में दी गई तिथियों से भिन्न हैं। ये 198 संवत ऐसे हैं जिनमें से लगभग 150 को ग्रियर्सन ने अन्य सूत्रों से जांचकर लिखा है। शेष ऐसे हैं जिनका मूल आधार वस्तुतः सरोज ही है। जोड़ने घटाने में साधारण अशुद्धि हो गई है और ग्रियर्सन में दिया सन् सरोज के संवत से भिन्न हो गया है।

इस प्रकार ग्रियर्सन के 739 संवतों में से 482 सीधे सरोज से लिए गए हैं। यह कुल का 64.4 प्रतिशत है। और जोड़ने-घटाने की गलती से भिन्न हो गए 50 संवतों को और भी जोड़ लिया जाय. तो यह प्रतिशत लगभग 72 हो जाता है। सरोज के संवतों के ग्रियर्सन कितने आभारी हैं, इन आंकड़ों से स्पष्ट हो जाता है। इस सम्बन्ध में स्वयं ग्रियर्सन भूमिका में लिखते हैं :

"(तिथियों की जांच के) जब सभी उपाय असफल सिद्ध हुए, अनेक बार सरोज ही मेरा पथ प्रदर्शक रहा है। शिवसिंह बराबर तिथियां देते गए हैं। और मैंने सामान्यतया इनको पर्याप्त ठीक पाया है। हाँ, वे प्रसंग-प्राप्त कवि की जन्म तिथि ही सर्वत्र देते हैं, जबकि वस्तुतः अनेक बार ये तिथियाँ उक्त कवियों के प्रमुख ग्रंथों का रचनाकाल है। फिर भी सरोज की तिथियों का कम से कम इतना मूल्य तो है ही कि किसी अन्य प्रमाण के अभाव में हम पर्याप्त निश्चित रहें कि प्रसंग प्राप्त कवि उस तिथि को जिसे शिवसिंह ने जन्मकाल के रूप में दिया है, जीवित था।"

ग्रियर्सन ने सर्वत्र ईस्वी सन् का प्रयोग किया है। ये सन् प्रायः सरोज के संवतों में से 57 घटाकर प्राप्त किए गए हैं। ग्रियर्सन ने सरोज के जिन संवतों को स्वीकार किया है, उन्हें उन्होंने तिर्यक अंकों में मुद्रित कराया है। विभिन्न अध्यायों के परिशिष्टों में जो अप्रधान कवि परिगणित हुए हैं, वे और उनकी तिथियाँ प्रायः सरोज के ही आधार पर हैं।

सरोज में कुल 687 स-तिथि कवि हैं। इनमें से निम्नांकित 13 को ग्रियर्सन में अ-तिथि बना दिया गया है :

1. जसवंत, 2. लोधे 3. लोकनाथ, 4. गुलाम नबी 'रसलीन', 5. अलीमन, 6. नवलदास, 7. गोसाईं, 8. वंशीधर मिश्र सँडीलेवाले, 9. मून, 10. लक्ष्मणसिंह, 11. लोने बुन्देलखंडी, 12. सोमनाथ, 13. हेमगोपाल।

निम्नांकित 11 को ग्रियर्सन में स्वीकार ही नहीं किया गया है :

1. अनूप, 2. किशोर दिल्ली, 3. गोविंद कवि, 4. छेम 1, 5. नारायण कवि 3, 6. बरबै सीता कवि, 7. भीषम 8. मीरा मदनायक, 9. रतन ब्राह्मण बनारसी, 10. श्रीधर प्राचीन, 11. सुखलाल ।

सरोज के 25 स-तिथि कवि उन्हीं नामों के अन्य कवियों में ग्रियर्सन द्वारा विलीन कर दिए गए हैं । इनकी सूची यह है :

अगर 44, आनंद 347, कविराम 785. कामता प्रसाद ब्राह्मण 654, गुमान2, 349, घन आनन्द 347, छीत कवि 41, जमाल 85, तालीब शाह 439, देवदत्त कवि 261, देवदत्त कवि2, 261, नाथ 4, 162, नाथ 5 हरिनाथ 355, प्रधान 854, वल्लभ 239, विजय, राजा विजयबहादुर बुंदेला 514, विश्वनाथ कवि, 1, 721, महेश 696, माखन 670, रघुराय 2,420, रतन 2, 155, श्यामलाल 269, सवितादत्त 304 सुखराम 729, हरिराम 141 ।

अब सरोज के स-तिथि कवियों को ग्रियर्सन के स-तिथि कवियों की तुलना में संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है :

सरोज	ग्रियर्सन
687 स-तिथि कवि	13 अ-तिथि बना लिए गए
	11 स्वीकार नहीं किये
	440 तिथि के साथ स्वीकार किये गए
	138 भिन्न तिथि के साथ स्वीकार किये गए
	25 अन्य कवियों में विलीन कर दिये गए
योग	687

सरोज के 53 'वि०' कवियों में से 2 के सम्वतों की जानकारी स्वतन्त्र रूप से प्राप्त की गई है और उनके जन्म सम्वत भी दिये गए हैं । एक हैं राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द और दूसरे रीवां नरेश रघुराज सिंह । 42 को 1883 ई० में विद्यमान लिया गया है । निम्नांकित 4 को ग्रियर्सन में स्वीकार ही नहीं किया गया है—

1. चोवा, 2. मखजात, जालपा प्रसाद वाजपेयी, 3. मनोहर, काशीराम रिसालदार, भरतपुर, 4. शंकरसिंह, चंड़रा सीतापुर ।

शेष इन 5 को बारहवें अध्याय में अनिश्चित कालीन कवियों में ठेल दिया गया है :

1. कविराम, रामनाथ कायस्थ, 2. रसिया, नजीब खाँ, 3. हनुमान बनारसी, 4. कालिका बंदीजन, 5. कालीचरण वाजपेयी ।

सरोज में कुल 263 अ-तिथि कवि हैं । इनमें से 11 को ग्रियर्सन ने स-तिथि बना दिया है, जिनकी सूची पीछे दी जा चुकी है । निम्नांकित 30 कवियों को ग्रियर्सन ने ग्रहण ही नहीं किया है :

1 .कृष्ण कवि प्राचीन, केशवदास 2, गंगाधर बुन्देल खंडी, गदाधर कवि, गदाधर राम, गिरधारी 2, चन्द कवि 3, चन्द कवि 4, चैनराय, जगन्नाथ, तुलसी 4, द्विजराम, नाथ 6, नारायणदास वैष्णव 4, पंचम 2, डलमऊ वाले, परशुराम 1, फूलचन्द, बालकृष्ण 2, वृन्दावन कवि, मदन गोपाल 2, मदनगोगाल 3 चरखारी वाले, मुरली, मुरलीधर 2, मोतीलाल, लछिराम 2, व्रजवासी, लोकनाथ उपनाम बनारसीनाथ, शंकर 2, शिवदीन, सन्त 1, सुमेर।

निम्नांकित 47 अ-तिथि अन्य कवियों में विलीन कर दिये गए हैं :*

अनन्य 2, 418, कृपाराम कृपाराम, 797, खुमान 170, खेम बुन्देलखंडी 103, चतुर, चतुरबिहारी 65, चतुर्भुज 40, चिंतामणि 143, चैन 627, छत्रपति 75, छेमकरण 311, जगन्नाथदास 764, जानकीदास 2, 695, जुगलदास 313, जुगलकिशोर कवि 1, 348, जैतराम 120, तारा 419, दयानिधि 2, 787, दयाराम 1, 387, दामोदर कवि 84, दास व्रजवासी, व्रजवासीदास 369, नन्द, नन्दकिशोर 697, नवल 849, प्रेम 351, वंश गोपाल बंदीजन 549, वंशीधर, वंशीधर 3, 574, विष्णुदास 1, 769, बीटल 35, ब्रह्म राजा वीरबल 106, भगवन्त, भगवान कवि 333, भीषमदास 240, मनसा 885, मनीराम 1, 573, मान कवि 1, 517, रामकृष्ण 2, 538, राम जू 913, रूप 268, शंकर 1, 613, शिवदत्त 588, सबलसिंह 210, हरिलाल 1, 946, हुलासराम 940। सरोज के 175 अ-तिथि कवि ग्रियर्सन में गृहीत हुए हैं।

लेखन-पद्धति

ग्रियर्सन ने कवियों का इतिवृत्त देते समय निम्नलिखित पद्धति का अनुसरण किया है---

1. सर्वप्रथम वे कवि की क्रमसंख्या देते हैं। ग्रियर्सन ने यह पद्धति सरोज से ली है। सरोज में प्रत्येक वर्ण के कवियों की क्रम-संख्या अलग-अलग दी गई है। ग्रियर्सन में यह क्रमसंख्या अटूट रूप से 952 तक चली गई है। 706 संख्या पर किसी कवि का विवरण न होकर 'नाटक' पर टिप्पणी दी गई है। अतः इस ग्रंथ में 951 कवियों का विवरण या उल्लेख है। विनोद में भी ग्रियर्सन की ही देखादेखी प्रत्येक कवि को एक-एक अंक दिया गया है।

2. क्रम संख्या देने के अनंतर कवि का नाम देवनागरी अक्षरों में दिया गया है। इस संबंध में दो नियमों का पालन किया गया है। पहले तो नामों को उस ढंग से लिखा गया है, जिस ढंग से सर्वसाधारण उनका उच्चारण करते हैं। पढ़े-लिखे शिष्ट जनों के उच्चारण को महत्त्व नहीं दिया गया है, यद्यपि साहित्यकारों के संबंध में उन्हीं का उच्चारण अपनाया जाना चाहिए था। इस पद्धति पर चलकर वल्लभाचार्य 'न लिखकर' बल्लभाचारज' लिखा गया है। इस पद्धति का परित्याग कतिपय

---

* कवियों के नाम के साथ वह संख्या जिस कवि में वह बिलीन किए गए हैं।

जीवित भारतीय साहित्यकारों के ही संबंध में किया गया है और वह भी इस सिद्धाँत पर कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वेच्छानुसार अपना नाम लिखने की स्वतन्त्रता प्राप्त है। इन लोगों का नाम हिंदी लिपि में उसी प्रकार लिखा गया है, जिस प्रकार वे अंग्रेजी में लिखते हैं।

यह ग्रंथ यूरोपीयों के लिए लिखा गया था। वे लोग हिंदी नामों का ठीक-ठीक उच्चारण कर सकें, इसलिए नामों के पद-विभाजन की पद्धति स्वीकार की गई है। जहाँ प्रत्येक पद के अनंतर रुका जा सके, दो पदों के बीच बिंदु दे दिया गया है, जो अंग्रेजी के पूर्ण विराम से पर्याप्त बड़ा है। यथा—

देओकी . नंदन . सुक्ल।

प्रस्तावना में ग्रियर्सन ने इन दोनों बातों पर विचार किया है।

3. हिंदी में नाम देने के अनंतर उसको रोमन लिपि में भी दिया गया है और यदि नाम के साथ कोई अतिरिक्त अंश भी जुड़ा हुआ है, तो उसका अनुवाद कर दिया गया है, जैसे 'पुष्य कवि' को 'द पोयट पुष्य' लिखा गया है। गोसाईं तुलसीदास के गोसाईं का अनुवाद 'होली मास्टर' किया गया है।

4. नाम के साथ-साथ पिता का नाम, स्थान का नाम और समय एक साथ दिए गए हैं, जैसे वे नाम के ही अंग हों। यह सब बिना किसी क्रिया का सहारा लिए हुए किया गया है।

क्रमसंख्या, नाम, ग्राम और संवत आदि सरोज के तृतीय संस्करण में एक ही पंक्ति में शीर्षक के ढंग पर दिए गए हैं। वही पद्धति ग्रियर्सन ने भी अपनाई है और इन सबको एक ही पंक्ति में दिया है।

5. दूसरे अनुच्छेद में सबसे पहले उन संग्रहों का संक्षिप्त नाम दिया गया है, जिनमें प्रसंग प्राप्त कवि की रचना उदाहृत है।

6. संग्रह नाम दे देने के अनंतर उपलब्ध इतिवृत्त दिया गया है।

7. किसी कवि के इतिवृत में यदि किसी अन्य कवि का उल्लेख आ गया है, तो उसकी भी क्रमसंख्या सुविधा के लिए नाम के आगे कोष्ठक में दे दी गई है।

ग्रियर्सन के ग्रंथ का महत्व, विशेषतायें और उसका प्रभाव

ग्रियर्सन के ग्रंथ की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जिन्होंने बाद में लिखे जाने वाले हिंदी साहित्य के इतिहासों को पर्याप्त प्रभावित किया है। इनमें से कुछ ये हैं :

1. यह ग्रंथ हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास है। इसमें पहली बार कवियों का विवरण कालक्रमानुसार दिया गया है।

2. इस ग्रंथ में हिंदी साहित्य के इतिहास के विभिन्न काल विभाग भी किए गए हैं, जिनके आधार पर बाद में हिंदी साहित्य के इतिहास का काल विभाग किया गया।

3. प्रत्येक काल की तो नहीं, कुछ कालों की सामान्य प्रवृत्तियाँ भी दी गई

हैं, यद्यपि यह विवरण अत्यंत संक्षिप्त है। शुक्लजी ने इन प्रवृत्तियों का विस्तृत विवेचन बाद में किया।

4. प्रत्येक कवि को एक-एक अंक दिया गया है। बड़ी आसानी से किसी भी कवि को उसके नियत अंक पर देखा जा सकता है। इसी पद्धति का प्रयोग बाद में विनोद में किया गया।

5. सरोज की ही भांति ग्रियर्सन में भी कवियों का विवरण अत्यन्त संक्षिप्त है। पर निम्नांकित 18 कवियों का विवरण पर्याप्त विस्तार से दिया गया है :

1. चंद बरदाई, 2. जगनिक, 3. सारंगधर, 4. कबीरदास, 5. विद्यापति ठाकुर, 6. मलिक मुहम्मद जायसी, 7. वल्लभाचार्य, 8. विट्ठलनाथ, 9. सूरदास 10. नाभादास, 11. बीरबल, 12 तुलसीदास, 13. बिहारीलाल, 14. सरदार, 15. हरिश्चंद्र, 16. लल्लूजी लाल, 17. कृष्णानंद व्यासदेव, 18. राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद।

जायसी और तुलसी पर इस ग्रन्थ में अलग-अलग अध्याय ही हैं। इन्हीं अध्यायों ने आचार्य शुक्ल का विशेष ध्यान इन कवियों की ओर आकृष्ट किया। विद्यापति और अन्य मैथिल कवियों की वर्णना हिंदी साहित्य के इतिहासों में जो होने लगी है, उसका भी बहुत कुछ श्रेय ग्रियर्सन के इस ग्रंथ को ही है।

ग्रियर्सन का यह ग्रंथ यद्यपि सरोज का ही व्यवस्थित रूप है, पर सरोज ने हिंदी साहित्य के इतिहासों को जितना प्रभावित नहीं किया, उतना ग्रियर्सन ने किया। 1900 ई० से नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ने हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों की खोज प्रारम्भ की। उसकी रिपोर्टों में कवियों के जो विवरण सन्-संवत आदि दिए गए हैं, वे सीधे सरोज से नहीं लिए गए हैं, घुमा कर ग्रियर्सन के इस ग्रंथ द्वारा लिए गए हैं। फल यह हुआ है कि सरोज के सन्-संवत जन्मकाल मान लिए गए हैं। बाद में इन्हीं रिपोर्टों के आधार पर विनोद की रचना (1913 ई०) में हुई और फिर ग्रियर्सन तथा विनोद के आधार पर शुक्ल जी के सुप्रसिद्ध इतिहास की (1928 ई०)।

किसी भी भाषा के साहित्य के प्रथम इतिहास में जो भी त्रुटियाँ हो सकती हैं, वे सभी ग्रियर्सन के ग्रंथ में हैं। सरोज की बहुत सी भूलें यहाँ ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। सन-संवतों की भ्रांतियाँ तो इससे बढ़ी ही हैं। फिर भी इस ग्रंथ का महत्व है। यद्यपि यह हिंदी साहित्य का इतिहास है, पर आज यह हिंदी साहित्य के इतिहास के एक प्रमुख सूत्र के रूप में ही विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आज इससे हिंदी साहित्य के इतिहास का अध्ययन-अध्यापन नहीं किया जा सकता।

———

3

हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास

1. तासीकृत 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' इतिहास नहीं : 1839 ई०

पेरिस विश्वविद्यालय में उर्दू के प्रोफेसर गार्सा द तासी (1794-1838 ई०) ने 'इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ए ऐंदुस्तानी' के नाम से हिन्दुई और हिन्दुस्तानी का इतिहास फ्रांसीसी भाषा में रचा था। इसका पहला संस्करण दो भागों में प्रकाशित हुआ था—पहला भाग 1849ई० में एवं दूसरा भाग 1847 ई० में। पहले भाग में कवि परिचय था। दूसरे भाग में कवियों की रचनाओं के उदाहरण, जो फ्रांसीसी भाषा में अनूदित थे। उक्त संस्करण ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड की ओरियंटल ट्रांसलेशन कमेटी की ओर से प्रकाशित हुआ था। उक्त संस्था की स्थापना 1828 ई० में इगलैंड के तत्कालीन बादशाह विलियम चतुर्थ के संरक्षण में लंदन में हुई थी। उक्त ग्रन्थ फ्रांस के राजकीय मुद्रणालय में छपा था और लंदन तथा पेरिस दोनों नगरों में विक्रयार्थ रखा गया था।

तासी का हिन्दुई से अभिप्राय हिन्दुओं में बोली जाने वाली हिन्दी से है और हिन्दुस्तानी से मुसलमानों में बोली जाने वाली हिन्दी से, जिसे उत्तरी हिन्दुस्तान में उर्दू कहते हैं और दक्खिनी हिन्दुस्तान में दक्खिनी। उर्दू के प्रोफेसर होने के नाते तासी का लगाव उर्दू के कवियों से अधिक था, हिन्दी के कवियों से कम। इसीलिये उर्दू के कवियों को अधिक स्थान दिया है, उक्त ग्रन्थ के प्रथम भाग में कुल 738 कवि और लेखक थे, जिनमें हिन्दी के केवल 72 थे।

इस ग्रन्थ का द्वितीय संस्करण तीन भागों में प्रकाशित हुआ। प्रथम एवं द्वितीय भाग सं० 1870 ई० में एवं तृतीय भाग 1871 ई० में पेरिस से प्रकाशित हुए। तीनों भागों में कुल 1918 बड़े पृष्ठ और 3224 (1223, 1200, 801) कवि तथा लेखक हैं। पहले संस्करण के द्वितीय भाग में उदाहरणवाली जो सामग्री थी, उसका पधिकाँश दूसरे संस्करण में सम्बन्धित कवियों के विवरणों के पश्चात संलग्न कर दिया गया है। शेष सामग्री छोड़ दी गई है।

प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्राध्यापक (अब अध्यक्ष) डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने उक्त ग्रन्थ में आए हिन्दी के कवियों एवं लेखकों सम्बन्धी विवरणों का हिन्दी अनुवाद "हिन्दुई साहित्य का इतिहास" नाम से किया है, जो 1952 ई० में हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ है। इस अनूदित ग्रंथ में कुल 359 कवि और लेखक हैं। इन 359 में से 47 संस्कृत, बँगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी एवं उर्दू आदि अन्य भाषाओं के हैं, 14 तासी की मिथ्या-सृष्टि है, 77 विशुद्ध साहित्य को छोड़ विविध वाङ्मय-पाठ्य ग्रंथ, धार्मिक खंडन-मंडन, ज्योतिष और वैद्यक ग्रंथों के लेखक, साधारण अनुवादक, पत्र-सम्पादक, ग्रंथ-संपादक एवं प्रकाशक हैं। शुद्ध साहित्य के रचनेवाले केवल 220 हैं, जिनमें 160 प्रसिद्ध साहित्यकार हैं, 60 नगण्य कोटि के।

'तासी' की रचना इतिहास नहीं है, यद्यपि उसने अपने ग्रंथ को अत्यन्त महत्वाकांक्षापूर्ण इतिहास शब्द से अभिहित किया है। तासी की रचना कालक्रमानुसार न होकर लेखकों के वर्णानुक्रम से है और इतिहास के लिए कालक्रमानुसरण पहली शर्त है। वर्णानुक्रम का अनुसरण ग्रंथ को कवि-कोश बना देता है और इतिहास पद से उसे च्युत कर देता है। डा० वार्ष्णेय ने इस ग्रंथ को 'हिन्दी साहित्य की दीर्घकालीन गाथा को सूत्रबद्ध रूप से स्पष्ट करने का सर्वप्रथम प्रयास' कहा है, जो ठीक नहीं। इस ग्रंथ में उर्दू के कवियों की विपुल संख्या में एक तो हिन्दी के कवि खो से गये हैं, दूसरे वर्णानुक्रम में होने के कारण बिखरी मणियों के सदृश हैं, फिर इनमें एकसूत्रता कहाँ! निश्चय ही तासी को इतिहास का ठीक-ठीक अभिप्राय ज्ञात था और वह इतिहास पद्धति से अवगत था, जैसाकि भूमिका के इस अंश से स्पष्ट है :

"मौलिक जीवनियाँ, जो मेरे ग्रंथ का मूलाधार है, सब तखल्लुसों या काव्योपनामों के अकरादि क्रम से रखी गयी हैं। मैंने यही पद्धति ग्रहण की है, यद्यपि शुरू में मेरा विचार कालक्रम ग्रहण करने का था, और मैं यह बात छिपाना नहीं चाहता कि यह क्रम अधिक अच्छा रहता या कम से कम जो शीर्षक मैंने अपने ग्रन्थ को दिया है उसके अधिक उपयुक्त होता, किन्तु मेरे पास अपूर्ण सूचना होने के कारण उसे ग्रहण करना ही कठिन ही था।"

—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, भूमिका प्रथम संस्करण, पृ० 12

स्पष्ट है कि स्वयं तासी के अनुसार उसके ग्रंथ को इतिहास कहना अधिक उपयुक्त नहीं है, यद्यपि उसने स्वयं अपने ग्रंथ को इतिहास की संज्ञा दी है, फिर भी उसे हिन्दी साहित्य का निर्विवाद प्रथम इतिहास कहना क्या युक्तियुक्त है ?[1]

1, "हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास लेखक गार्सों द तासी था यह निर्विवाद है।"

—साहित्य का इतिहास दर्शन, नलिन विलोचन शर्मा, पृ० 75।

2. तबकातुश्शुअ्ररा भी हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं : 1848 ई०

तासी के अनन्तर मौलवी करीमुद्दीन ने 'तबकातुश्शुअ्ररा' या 'तजकिरा-ई-शुअ्ररा- ई-हिन्दी' नामक एक ग्रंथ प्रस्तुत किया जो 1848 ई० में देहली कालेज द्वारा प्रकाशित हुआ। उर्दू में इसको "तजकिरा" कहा गया और ग्रंथ के मुख्य पृष्ठ पर इसका जो विवरण अंग्रेजी में दिया गया है, उसमें उसे "हिस्ट्री" कहा गया है। उक्त विवरण यह है :

'ए हिस्ट्री ऑफ उर्दू पोएट्स चीफली ट्रांसलेटेड फ्राम इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी' बाई एफ० फैलन एंड मौलवी करीमुद्दीन विथ ऐडिशन्स। देहली कालेज 1848।

अंग्रेजी में इसे उर्दू कवियों का इतिहास कहा गया है, उर्दू में इसे हिन्दी शायरी की तजकिरा। यह मुख्यतया, पूर्णतया नहीं, तासी के ग्रंथ का अनुवाद है। अनुवाद का कार्य बिहार शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर फैलन साहब का किया हुआ है। उक्त अनुवाद में करीमुद्दीन ने बहुत कुछ अपनी ओर से जोड़ा है। यह जोड़ कुछ इतना अधिक है कि इस ग्रंथ को अनुवाद नहीं कहा जा सकता। स्वयं तासी ने इस ग्रंथ का उपयोग अपनी प्रसिद्ध पुस्तक के द्वितीय संस्करण में किया है और भूमिका में इसे स्वतन्त्र ग्रंथ जैसा मान लिया है। अपने आधार ग्रंथों का विवरण देते हुए वे इस ग्रंथ के सम्बन्ध में लिखते हैं :

"तबकात-उ-श्शुअ्ररा, करीमुद्दीन कृत। 1848 में दिल्ली से प्रकाशित इस 'तज़किरा' को जिसे तज़किरा-ई-शुअ्ररा-ई-हिन्दी-हिन्दुस्तानी कवियों का विवरण भी कहा जाता है, मेरे इस्त्वार द ल लितरेत्यूर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी' के प्रथम संस्करण से अनूदित कहा गया है, किन्तु यह एक बिलकुल भिन्न रचना है। मेरा जो कुछ लिया गया है, वह आजकल बिहार शिक्षा-विभाग के इंसपेक्टर श्री एफ० फ़ालन द्वारा लिखित रूप में मुसलमान विद्वान को दिया गया है।"

—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 99

तासी के अनुसार, करीमुद्दीन द्वारा जो वृद्धि की गयी है, वह यह है :

"इजाफा तकरीबन तमाम का तमाम या तो खानदाने तैमूरी के शाहजादों के हालात का है, जो अपना वक्त बहलाने के लिये उर्दू शायरी किया करते थे या देहली कालेज के प्रोफेसरों के हालात से मुतालिक है। प्रोफेसरों का बयान दिलचस्प है।"

—खुतबात-ई-गार्सा द तासी, पृष्ठ 96

तासी के प्रथम संस्करण में कुल 738 कवि थे, करीमुद्दीन के तजकिरे में कवि संख्या 1004 है। यहाँ कुल 266 कवि बढ़ गये हैं। इन 1004 कवियों में कठिनाई से 60-62 हिंदी कवि हैं

जिस प्रकार तासी को इतिहास का बोध तो था, पर अपूर्ण सूचनाओं के कारण वह अपने तथाकथित इतिहास ग्रंथ को इतिहास का रूप नहीं दे सका, उसी प्रकार करीमुद्दीन को भी इतिहास का बोध था, पर यह भी अपने ग्रन्थ को इतिहास

का ठीक रूप नहीं दे सके। पूर्ववर्ती तजकिरों में कवियों के जन्न-मरण के सम्वतों का अभाव था, उनके वैयक्तिक जीवन की झलक नहीं थी, यहाँ तक कि उनके काव्य-संग्रहों तक का उल्लेख नहीं था। करीमुद्दीन ने इस कमी का अनुभव बुरी तरह से किया है और उनके दूर करने का भी यथाशक्य प्रयास किया है। करीमुद्दीन तासी से एक कदम आगे अवश्य बढ़े हैं। तासी ने कवियों का विवरण अकारादि क्रम से किया है। करीमुद्दीन ने कालक्रम पर चलने का प्रयास अवश्य किया है, पर उन्हें सफलता नहीं मिली है। हिन्दी उर्दू से पहले की भाषा है, अतः ग्रन्थ के प्रथम खंड में इस क्रमशः निम्नांकित 35 कवियों का वर्णन है :

(1) बलभद्र, (2) बलराम, (3) भरतरी, (4) भगवानदास. (5) भूपति या भूदेव, (6) बिहारीलाल, (7) बीरभान, (8) ब्रजवासीदास, (9) चतुर्भुज मिश्र, (10) देवराजा, (11) गोकुलनाथ, (12) दादू, (13) जायसी, (14) कबीर, (15) कनारदास, (16) केशवदास, (17) नाभादास, (18) नेबाज, (19) नन्ददास जू, (20) नानकशाह, (21) शिवनारायण, (22) सुन्दरदास, (23) सूरत, (24) सूरदास, (25) पद्माकर, (26) सुन्दरदास, (27) तुलसीदास, (28) ओंकार, (29) बल्लभ स्वामी, (30) बावालाल गुरु, (31) खुसरो, (32) भागूदास, (33) चंद, (34) गंग, (35) गुरु राम राऊ।

इन 35 कवियों में कालक्रम से चंद और खुसरो आदि काल के हैं, जिनकी क्रमसंख्या 33, 31 है। कालक्रम से भक्तिकाल के कवि हैं कबीर, जायसी, नानक, सूरदास, तुलसीदास, नन्ददास, दादू, सुन्दरदास आदि, इनका क्रम है 14, 13, 20, 24, 27, 19, 12, 22 या 26। स्पष्ट है कि कवियों का विवरण प्रस्तुत करने में काल-क्रम का कोई ध्यान नहीं रखा गया है। फिर इसे इतिहास कैसे कह दिया जाय ?

ग्रन्थ के दूसरे और तीसरे अध्यायों में उर्दू कवियों के विवरणों के बीच दूल्हाराम (रामसनेही सम्प्रदाय के तीसरे गुरु), रामचरण (रामसनेही सम्प्रदाय के प्रवर्तक) गोविन्द सिंह (सिक्खों के दसवें गुरु), मीर गुलाम नबी रसलीन बिलग्रामी, गंगापति, मोतीलाल, धर्म नारायण आदि कवियों का विवरण है।

तासी ने यद्यपि 'तज़किरा' और तारीख में भेद किया है—

"तारीख उसे कहते हैं जिसमें वाकयात का हालात जमाने में इस जोर पर लिखे जायँ कि उससे यह मालूम हो सके कि फलाने जमाने में यह हादसा या वाकया गुजरा, बरखिलाफ तज़किरा के कि उसमें खास एक किस्म के लोगों का हाल लिखा जाता है। इससे मालूम हुआ कि तजकिरा खास है और इतिहास आम।"

—नागरी पत्रिका, वर्ष 1, अंक 2, अक्टूबर-नवम्बर 1967, पृष्ठ 13

डा० रामचन्द्र तिवारी विदेशी भाषा फ्रांसीसी में तासी द्वारा लिखित ग्रन्थ को हिन्दी और उर्दू का प्रथम इतिहास मानते हैं और अपने ही देश की भाषा और लिपि (उर्दू) में लिखित करीमुद्दीन के इस ग्रन्थ को हिन्दी-उर्दू का दूसरा इतिहास मानते हैं। उनका कहना है :

"वस्तुतः उनका (करीमुद्दीन का) तजकिरा एक भारतीय द्वारा लिखित हिन्दी और उर्दू साहित्य का प्रथम इतिहास है ।"

—नागरी पत्रिका, अंक वही ।

करीमुद्दीन ने हिन्दी के 39 प्राचीन कवियों को प्रथम अध्याय में एक साथ रखा है, यहाँ तक तो ठीक, पर डा० तिवारी के अनुसार ही—

"प्राचीनों में कालक्रमानुसार पूर्वा पर क्रम हो सकता है, इसका ध्यान उसने नहीं रखा है ।"

फिर भी 'तजकिरे' को 'इतिहास' कहना क्या न्याय-संगत है ?

करीमुद्दीन के इस ग्रंथ पर डा० महादेव साहा एवं श्री नारायण पाण्डेय ने 'कल्पना' अक्टूबर, 1956 में 'हिन्दी साहित्य का एक प्राचीन इतिहास' शीर्षक से एक परिचयात्मक लेख लिखा है । स्पष्ट है कि वे भी इसे हिन्दी साहित्य का इतिहास मानते हैं । मेरी दृष्टि से यह ग्रन्थ 'तज़किरा' मात्र है, केवल ज़िक्र (चर्चा) है, इतिहास नहीं ।

2. शिवसिंह सरोज (1878) ई०) भी इतिहास नहीं

'शिवसिंह सरोज' की रचना शिवसिंह सेंगर ने की, जो प्रथम बार 1878 ई० में नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित हुआ । शिवसिंह पुलिस के सर्किल इंस्पेक्टर थे और प्राचीन काव्य में उनकी अभिरुचि थी । उन्होंने 'शिवसिंह सरोज' नाम से 838 कवियों की रचनाओं के नमूने दिये, जिनकी संख्या प्रायः दो हजार है । इस काव्य संग्रह में कवियों की स्थापना अकारादि क्रम से है । काव्य संग्रह के उपरान्त ग्रंथ के उत्तरार्द्ध में, प्रायः 125 पृष्ठों में, सेंगर जी ने 1003 कवियों का जीवन चरित्र भी अकारादि क्रम से दिया है । इन 1003 कवियों में से 687 की तिथियाँ भी दी गई हैं, 53 कवि 'विद्यमान' कहे गये हैं, 263 कवि तिथिहीन हैं । अभी तक किसी भी ग्रन्थ में इतने कवियों का परिचय नहीं दिया गया था । अतः यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्व का है । अब किसी पुराने कवि पर कार्य करने के पहले यह देख लेना आवश्यक होता है कि सरोजकार ने इस कवि के सम्बन्ध में अपने ग्रन्थ में क्या लिखा है । शिवसिंह सरोज हिन्दी साहित्य के इतिहास का प्रस्थान-बिन्दु है ।

जिस प्रकार तासी एवं करीमुद्दीन को इतिहास का बोध था, उसी प्रकार शिवसिंह को भी था । भूमिका के अन्तर्गत एक-एक शती में होने वाले कवियों की उन्होंने परिगणना भी की है और हिंदी की जड़ की खोज करते हुए वे सं० 770 वि० में होने वाले पुंड कवि तक पहुँचे हैं । इतना होते हुए भी शिवसिंह सरोज को हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इसमें भी कवियों का परिचय कालक्रमानुसार नहीं दिया गया है, अकारादि क्रम से किया गया है, भले ही आधुनिक युग के बड़े-बड़े महारथी इस ग्रंथ को हिन्दी साहित्य का इतिहास कहते, सुनते और लिखते देखे जाते हैं ।

ग्रियर्सन कृत माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान (1888 ई०) हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास

इतिहास कहलाने के लिए जिन दो बातों की आवश्यकता है—कालक्रमानुसार कवि-परिचय और काल विभाजन, वे पहली बार डाक्टर सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन कृत "द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान" में पाई जाती है, अतः इसे हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास होने का गौरव प्राप्त है। आश्चर्य है कि हमारे हिंदी साहित्य के इतिहास का प्रणयन एक विदेशी विद्वान ने एक विदेशी भाषा में और वह भी विदेशियों के ही उपयोग के लिए किया। 1886 ई० में ग्रियर्सन ने प्राच्य विद्या विशारदों की अंतर्राष्ट्रीय सभा के वियना (आस्ट्रिया) अधिवेशन में विशेष रूप से तुलसी के संदर्भ में हिन्दुस्तान के मध्यकालीन भाषा साहित्य पर एक लेख पढ़ा था। यह लेख विशेष ध्यानपूर्वक सुना गया था और प्रशंसित हुआ था। इस लेख की तैयारी में ग्रियर्सन ने कई वर्ष लगाये थे पर समस्त सामग्री का उपयोग वे नहीं कर पाये थे। अपनी समस्त टिप्पणियों का सदुपयोग करके उन्होंने 1888 ई० में 'रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल' के जर्नल के प्रथम भाग में से "द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान" नाम से प्रस्तुत ग्रंथ प्रकाशित कराया। 1889 ई० में उक्त लेख स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ का पुनर्मुद्रण नहीं हुआ और यह दुर्लभ हो गया था। अतः मैंने "हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास" नाम से इसका अनुवाद कर दिया है और प्रत्येक कवि के विवरण के अनुवाद के अनंतर संशोधक टिप्पणियाँ भी जोड़ दी हैं। इस अनुवाद का प्रथम संस्करण 1958 ई० में हुआ और दूसरा संस्करण 1960 ई० में।

भूमिका में ग्रियर्सन ने 'हिन्दुस्तान' शब्द की व्याख्या की है। 'हिन्दुस्तान' शब्द का प्रयोग उन्होंने हिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश के अर्थ में किया है। इस ग्रंथ में मारवाड़ी, ब्रज, अवधी, बिहारी के लिखित साहित्य का उल्लेख हुआ है। कुल 951 कवियों का विवरण है। ग्रियर्सन ने इस कृति की रचना में निम्नांकित ग्रंथों का सहारा लिया है :

(क) काव्य संग्रह—

(1) राग कल्पद्रुम, (2) शृंगार संग्रह, (3) सुन्दरी तिलक, (4) शिवसिंह सरोज, (5) विचित्रोपदेश।

(ख) अन्य ग्रंथ—

1. तासीकृत 'हिस्त्वायर द ल लितरेत्यूर ऍंदुई ऐ ऍंदुस्तानी' प्रथम संस्करण 1839 ई०।
2. विलसन कृत 'रेलिजस सेक्ट्स ऑफ हिन्दूज'।
3. टाड कृत 'अनाल्स ऐंड ऐंटिक्विटीज ऑफ राजस्थान।'
4. जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल—भाग 53, अंक 1।

सभी मैथिल कवियों का विवरण इसी ग्रंक के आधार पर दिया गया है।

इस ग्रंथ के प्रस्तुत करने में सर्वाधिक सहायता सरोज से ली गई है। 951 कवियों में से 886 कवि सरोज से लिए गए हैं, केवल 65 कवि अन्य सूत्रों से स्वीकृत हैं। स्पष्ट है कि ग्रियर्सन के ग्रंथ की 94 प्रतिशत सामग्री सरोज से ली गई है। कहीं-कहीं तो सरोज का सीधा अनुवाद कर दिया गया है। इस सम्बन्ध में ग्रियर्सन ने स्पष्ट रूप से सरोज का ऋण स्वीकार करते हुए भूमिका में लिखा है :

"एक विदेशी, ग्रंथ जिस पर मैं अधिकांश में निर्भर रहा हूँ और प्राय: सभी छोटे कवियों और अनेक अधिक प्रसिद्ध कवियों के भी सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाओं के लिए जिसका मैं ऋणी हूँ, शिवसिंह द्वारा विरचित और मुन्शी नवल किशोर द्वारा प्रकाशित अत्यंत लाभदायक शिवसिंह सरोज (द्वितीय संस्करण 1883 ई०) है।"

—भूमिका पृष्ठ 13।

ग्रियर्सन ने यद्यपि सरोज के द्वितीय संस्करण के उपयोग की बात लिखी है। पर यह ठीक नहीं है। 1883 में सरोज का तृतीय संस्करण हुआ था और ग्रियर्सन ने इसके तृतीय संस्करण का ही उपयोग किया था, द्वितीय का नहीं। सरोज के प्रथम दो संस्करणों में कवियों का जीवन-चरित्र निम्नांकित पाँच स्तम्भों में दिया गया है :

1. क्रम सख्या।
2. नाम।
3. संवत।
4. जीवन-चरित्र।
5. पन्ना जिसमें कविताई है।

इन संस्करणों में सरोजकार ने कवियों के जो सम्वत दिये हैं, उनके उपस्थिति काल हैं, क्योंकि सरोजकार ने जो सम्वत दिये हैं, उनमें से अनेक इन कवियों के किसी न किसी ग्रंथ के रचनाकाल हैं। सरोजकार ने उदाहरण खण्ड में रचनाकाल सूचक जो अनेक छंद उद्धृत किये हैं, उनका मेल जीवन-चरित्र प्रकरण वाले सम्वतों से हो जाता है। प्रथम संस्करण के पश्चात ही, 1878 में ही, शिवसिंह का 45 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। प्रेस वालों ने कागज बचाने एवं छपाई की सुविधा की दृष्टि से पाँचों स्तम्भों को भ्रष्ट कर ध्वस्त कर दिया। प्रथम तीन स्तम्भों को मिलाकर शीर्षक लगा दिया। अगले अनुच्छेद में कवि का जीवन-चरित्र दिया और उसी के आगे पृष्ठ संख्या दे दी, बिना इस निर्देश के कि इस पृष्ठ पर कवि की कविता उदाहृत है। शीर्षक में सम्वत देते समय प्रथम कवि अकबर के साथ सम्वत 1584 में उत्पन्न हुए छाप दिया गया और शेष सभी कवियों के सम्वतों के साथ 'में उ०' जोड़ दिया गया, जो स्पष्ट ही 'में उत्पन्न हुए' का संक्षिप्त रूप है। ऐसी स्थिति में ग्रियर्सन ने सरोज के सम्वतों को जो जन्मकाल माना, उसके लिये उन्हें दोष देना ठीक नहीं। सरोज के सम्वतों को अभी तक लोग जन्म सम्वत मानते चले जा रहे हैं। यद्यपि अब निर्विवाद रूप से सरोज-सर्वेक्षण में इन्हें उपस्थितिकाल सिद्ध कर दिया गया है।

ग्रियर्सन ने अपने इस ग्रंथ को निम्नांकित 11 अध्यायों में बाँटा है :

1. चारणकाल (700-1400 ई०)
2. पन्द्रहवीं शती का धार्मिक पुनरुत्थान
3. मलिक मुहम्मद का प्रेमकाव्य
4. ब्रज का कृष्ण सम्प्रदाय (1500-1600 ई०)
5. मुगल-दरबार
6. तुलसीदास
7. रीतिकाव्य (1580-1692 ई०)
8. तुलसीदास के अन्य परवर्ती (1600-1700 ई०)
   (क) धार्मिक कवि
   (ख) अन्य कवि
9. अठारहवीं शताब्दी (1700-1800 ई०)
   (क) धार्मिक कवि
   (ख) अन्य कवि
10. कम्पनी के अन्दर हिन्दुस्तान (1800-1857 ई०)
   (क) बुन्देलखंड और बघेलखंड
   (ख) बनारस
   (ग) अवध
   (घ) अन्य
11. विक्टोरिया की छत्रछाया में हिन्दुस्तान (1857-1887 ई०)
12. विविध अज्ञात तिथि कवि

ग्रियर्सन के इस ग्रन्थ की निम्नांकित विशेषताएँ हैं। इनमें से कुछ ने बाद में लिखे जाने वाले हिन्दी साहित्य के इतिहासों को प्रभावित किया है।

1. इस ग्रन्थ में पहली बार कवियों का विवरण-काल क्रमानुसार दिया गया है।

2. इसमें हिन्दी साहित्य के इतिहास के विभिन्न काल-विभाग किए गए हैं। विनोद में बहुत कुछ इन्हीं कालों को स्वीकार कर लिया गया है। आगे चल कर शुक्ल जी के काल-विभाग को पूर्ण मान्यता प्राप्त हुई।

3. प्रत्येक काल की तो नहीं, कुछ कालों की सामान्य प्रवृत्तियाँ भी दी गई हैं, यद्यपि यह विवरण संक्षिप्त है। यथा 7वें अध्याय "रीति काव्य", नवें अध्याय "अठारहवीं शताब्दी", दसवें अध्याय "कम्पनी के शासन में हिन्दुस्तान", एवं 11 वें अध्याय "महारानी विक्टोरिया के शासन में हिन्दुस्तान" के प्रारंभ में। प्रवृत्ति निरूपण का पूर्ण विस्तार आगे चलकर शुक्ल जी के इतिहास में देखने में आया।

4. प्रत्येक कवि को एक संख्या दी गयी है। बड़ी आसानी से उस कवि को उक्त संख्या पर देखा जा सकता है। विनोद में इसी पद्धति को अपनाया गया है।

5. कवियों के विवरण यद्यपि अत्यंत संक्षिप्त हैं, पर निम्नांकित 18 कवियों का विवरण पर्याप्त विस्तार से दिया गया है :

1. चंदबरदाई, 2. जगनिक, 3. सारंगधर, 4. कबीरदास, 5. विद्यापति ठाकुर, 6. मलिक मुहम्मद जायसी, 7. वल्लभाचार्य, 8. विठ्लनाथ, 9. सूरदास, 10. नाभादास, 11. बीरबल, 12. तुलसीदास, 13. बिहारीलाल, 14. सरदार, 15. हरिश्चन्द, 16. लल्लू जी लाल, 17. कृष्णानंद व्यासदेव, 18. राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ।

इनमें से जायसी और तुलसी पर तो अलग-अलग अध्याय ही हैं । संम्भवतः इन्हीं विशिष्ट अध्यायों ने आचार्य शुक्ल का विशेष ध्यान इन कवियों की ओर आकृष्ट किया ।

ग्रियर्सन का यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य के इतिहास की नींव का वह पत्थर है, जिस पर आचार्य शुक्ल ने अपने सुप्रसिद्ध इतिहास का भव्य भवन निर्मित किया । इसने प्रारंभिक खोज रिपोर्टों एवं मिश्र बंधु विनोद को पूर्णत: प्रभावित किया है । शुक्ल जी के इतिहास के प्रकाश में आने के पूर्व एक युग था, जब यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जाता था । इसका महत्व यद्यपि अक्षुण्ण नहीं रह गया है, पर इसका ऐतिहासिक महत्व तो है ही । प्रो० नलिन विलोचन शर्मा का तो यहाँ तक कहना है :

"हिन्दी के विधेयवादी साहित्येतिहास के आद्य प्रर्वतक शुक्ल जी नहीं, प्रत्युत ग्रियर्सन हैं ।" —साहित्य का इतिहास-दर्शन, पृष्ठ 80

अपने कथन के प्रमाण में उन्होंने ग्रियर्सन से आठ उद्धरण भी दिए हैं, (उक्त ग्रन्थ पृष्ठ 41-83)

5. मिश्र बंधु विनोद : 1913 ई०

इटौंजा जिला लखनऊ निवासी पं० गणेश बिहारी मिश्र, रावराजा डा० श्याम बिहारी मिश्र (1873-19 फरवरी 1947) डी० लिट्०, साहित्य-वाचस्पति, राय बहादुर डाक्टर शुकदेव बिहारी मिश्र (1878-19 मई 1951 ई०) डी० लिट्०, साहित्य वाचस्पति, तीनों सगे भाई थे और "मिश्र बंधु" नाम से रचना करते थे । इन लोगों ने दिसम्बर 1901 ई० की सरस्वती में प्रकाशित अपने लेख में हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखने का विचार प्रकट किया था । तभी से वे इस ओर प्रयत्न-शील रहे । 1900 ई० में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज का कार्य प्रारम्भ किया । 1900 से 1908 तक खोज कार्य के निरीक्षक बाबू श्याम सुन्दर दास थे । 1099 से 1916 तक इसके निरीक्षक श्याम बिहारी मिश्र एवं शुकदेव बिहारी मिश्र थे । सभा की खोज में नये-नये कवि नित्य मिलते गए और इन सभी का परिचय मिश्र बन्धुओं को होता गया तथा हिन्दी साहित्य का एक बृहद इतिहास प्रस्तुत करने की उनकी योजना परिपक्व होती गयी । फलतः 1970 वि० (1913 ई०) में इन्होंने 'मिश्रबंधु-विनोद' नाम से हिन्दी साहित्य का एक वृहत्

इतिहास तीन भागों में प्रकाशित कराया। इसका चौथा भाग सं० 1991 वि० (1934 ई०) में प्रकाशित हुआ। चारों भागों में कुल मिला कर (412, 569, 364, 660) 2005 पृष्ठ एवं 4591 कवियों एवं लेखकों का विवरण है। इस विशाल ग्रन्थ के प्रस्तुत करने में निम्नांकित प्रकार की रचनाएँ प्रयुक्त हुई हैं :

1. कवियों के स्वरचित ग्रन्थ
2. शिवसिंह सरोज तथा अन्य प्राचीन संग्रह
3. काशी नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्टें
4. ग्रियर्सन कृत 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान'
5. मिश्रबंधुओं की स्वकीय जाँच एवं किंवदंतियाँ
6. मुंशी देवीप्रसाद, जोधपुर के लेख

इस संग्रह के प्रस्तुत करने में विभिन्न हिन्दी प्रेमियों ने भी कवियों के विवरण भेजकर मिश्र बंधुओं की सहायता की थी। गोविन्द गिल्लाभाई, काठियावाड़ ने कवियों एवं गद्य लेखकों की विवेचना सहित एक वृहत् सूची भेजी थी, जिससे 500 लेखकों का पता चला। ग्वालियर निवासी भास्कर रामचंद्र भालेराव से गुजरात, महाराष्ट्र, बुन्देलखण्ड के सौ डेढ़ सौ, अमूल्य कवियों के विवरण मिले थे। जोधपुर निवासी मुंशी देवी प्रसाद ने प्राय. 800 कवियों की एक नामावली भेजी थी, जिसमें 205 नए नाम मिले थे। बाद में इन 205 के विवरण भी उन्होंने भेजे थे। वृन्दावन निवासी गोस्वामी हित रूपलाल जी ने 40-50 नाम विवेचना सहित दिए थे। लाला भगवान दीन ने 185 कायस्थ कवियों की नामावली भेजी थी और मन्न द्विवेदी गजपुरी ने 40 कवियों की। इन दोनों नामावलियों में प्राय: 60 नाम नये मिले। इसी प्रकार अन्य अनेक महानुभावों ने कवियों के विवरण भेज-भेजकर इस महान साहित्यिक-यज्ञ में अपना योगदान दिया था।

इसमें प्रमुख कवियों के विवरण समालोचना सहित विस्तारपूर्वक दिए गए हैं और सामान्य कवियों की नामावली केवल संक्षिप्त सूचनाओं के साथ दे दी गयी है। प्रत्येक कवि की सुनिश्चित संख्या है। विनोद में यह पद्धति ग्रियर्सन के अनुकरण में अपनायी गई है। बाद में जो नवीन कवि मिले हैं, उनका समावेश उचित स्थल पर कर दिया गया है, पर कवियों की पूर्व संख्या में उलट-फेर न हो, इसलिए नवोपलब्ध कवियों की संख्या भिन्न में दे दी गई है। जैसे 535 संख्या पर अनन्य रामाबल्लभी सं० 1759 है और 536 संख्या पर लोकनाथ चौबे बूँदीवाले, सं० 1760 हैं। पहले संस्करण में कलश कवि 1322 संख्या पर अज्ञात कालिक प्रकरण हैं। में थे। द्वितीय संस्करण में इनको 535 और 536 के बीच 536/1 संख्या पर स्थान दिया गया है। और इस प्रकार स्पष्ट किया गया कि कलश कवि 1759 वि० के आस-पास उपस्थित थे। किन्तु कालान्तर में मिश्रबंधुओं ने अपना यह हठ छोड़ दिया था। द्वितीय भाग (द्वितीय संस्करण) के प्रथम कवि महाकवि सेनापति हैं। इनकी कवि संख्या 278 है। स्पष्ट है कि प्रथम भाग में कुल 277 कवियों के विवरण थे। मेरे

सामने विनोद प्रथम भाग का पाँचवाँ संस्करण (सं० 2012) है, इसके अंतिम कवि गुजरात प्रान्त के धोन कवि हैं, जिनकी कवि संख्या 411 है। प्रथम भाग के पंचम संस्करण में किसी कवि की संख्या भिन्न में नहीं है।

विनोद में कवियों के श्रेणी भेद किए गये हैं। कवि दो प्रकार के हैं—प्रबंध रचयिता एवं मुक्तक रचयिता (प्रबंध रचयिता कवियों की तीन श्रेणियाँ निर्धारित की गई हैं—लाल, छत्र और मधुसूदनदास। मुक्तक परंपरा वाले कवियों की पाँच श्रेणियाँ हैं—सेनापति, दास (भिखारी दास), पद्माकर, तोष और साधारण। मिश्र बंधुओं के इस श्रेणी विभाजन कसौटी को विद्वानों ने पसन्द नहीं किया है।

मिश्र बंधुओं ने हिन्दी साहित्य के इतिहास को निम्नांकित कालों में बाँटा है :

1. प्रारंभिक काल—संवत् 700 से 1444 वि० तक
2. माध्यमिक काल—संवत् 1445 से 1680 वि० तक
3. अलंकृत काल—संवत् 1681 से 1689 वि० तक
4. परिवर्तन काल—संबत् 1890 से 1925 वि० तक
5. वर्तमान काल—संवत् 1926 से···

मिश्रबंधु विनोद के विभिन्न अध्यायों की सूची निम्नांकित हैं :

मिश्रबंधु विनोद—प्रथम भाग (सं० 700-1680)

1. हिन्दी की उत्पत्ति और काव्य लक्षण

   प्रारंभिक हिन्दी

   पूर्व प्रारंभिक हिन्दी—700 1347 तक
2. चंदपूर्व की हिन्दी—सं० 700 से 1200
3. रासो काल—सं० 1201-1347
4. उत्तर प्रारंभिक हिन्दी—सं० 1348-1444

   माध्यमिक हिन्दी
5. पूर्व माध्यमिक हिन्दी—सं० 1445-1560

   प्रौढ़ माध्यमिक हिन्दी सं० 1561-1680 **वि०**
6. अष्टछाप—1561-1630
7. सौर काल—1561-1630
8. गोस्वामी तुलसीदास तथा तुलसीकाल की हिन्दी—सं० 1631-1680
9. पूर्व तुलसीकाल—1631-45
10. माध्यमिक तुलसीकाल—1646-1670
11. अन्तिम तुलसीकाल—1671-1680

मिश्रबंधु विनोद—द्वितीय भाग—सं० 1681-1889 **वि०**

   अलंकृत हिन्दी

   पूर्वालंकृत प्रकरण 1681-1790

12. पूर्वालंकृत हिन्दी

13. महाकवि सेनापति
14. सेनापति काल—1681-1706
15. बिहारी काल—1707-1720
16. भूषण काल—1721-1750
17. आदिम देव काल—1751-1771
18. माध्यमिक देव काल—1772-1790

उत्तरालंकृत प्रकरण—1791-1889

19. उत्तरालंकृत हिन्दी
20. दास काल—1791-1810
21. सूदन काल—1811-1830
22. रामचंद्र काल—1839-1855
23. बेनी प्रवीन काल—1856-1875
24. पद्माकर काल—1876-1889

मिश्रबंधु विनोद—तृतीय भाग 1890-1955

25. अज्ञातकाल—इस अध्याय में उन प्राचीन कवियों का अकारादिक्रम से वर्णन है, जिसका रचनाकाल ज्ञात नहीं है।

परिवर्तन प्रकरण—1890-1925

26. परिवर्तन कालिक हिन्दी
27. द्विजदेव काल—1890-1915
28. दयानंद काल—1916-25

वर्तमान प्रकरण—1926

29. वर्तमान हिन्दी एवं पत्र-पत्रिकाएँ—1926-1945
30. पूर्व हरिश्चंद्र काल—1926-35
31. उत्तर हरिश्चंद्र काल—1936-45

मिश्रबंधु विनोद—चतुर्थ भाग, 1946-1990 वि०

32. पूर्व नूतन परिपाटी—1945-60
    उत्तर नूतन परिपाटी—1961-94
33. प्रथम भाग—1960-75
34. द्वितीय भाग—आजकल, 1976-1994 तक

अध्यायों की इस सूची से प्रकट होता है कि मिश्रबंधु ने सूर, तुलसी, सेनापति, बिहारी, भूषण, दास, सूदन, रामचंद्र, बेनी, प्रवीन, पद्माकर, द्विजदेव, दयानंद एवं हरिश्चंद्र के नाम पर उपकालों की भी योजना की है। आलोचकों ने जिस प्रकार मिश्रबंधुओं के श्रेणी विभाजन की कदर्थना की है, उसी प्रकार प्रमुख कवियों के नाम पर स्थापित इन 14 उपकालों की भी।

प्रो० नलिन विलोचन शर्मा ने 'साहित्य का इतिहास दर्शन' नामक अपने ग्रन्थ में 'मिश्रबंधु विनोद' पर विचार करते हुए लिखा है—

1. 'मिश्रबंधुओं को श्रेय यह है कि 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' इस नाम के लिए प्रच्छन्न मोह रखते हुए भी, उन्होंने इसका प्रत्यक्ष व्यवहार उस विशाल ग्रन्थ के लिए भी नहीं किया, जिसे उन्होंने 'मिश्रबंधु विनोद' कह कर ही सन्तोष कर लिया। यदि वे विनोद को हिन्दी साहित्य का इतिहास कहते तो हिन्दी के साहित्यिक इतिहास का अभाव देखते हुए, वह क्षम्य ही माना जाता। उन्होंने ऐसा नहीं किया, यह उनके विवेक, अंतर्दृष्टि और अपनी सीमाएँ समझने की शक्ति का परिचायक है। मिश्रबंधुओं ने भले ही साहित्यिक इतिहास न लिखा हो, किन्तु साहित्यिक इतिहास विषयक उनके विचार इस सम्बन्ध में उनकी सजगता के प्रमाण हैं।'

2. 'वे विनोद को साहित्यिक इतिहास ही घोषित नहीं करते।'

नलिन जी के अनुसार मिश्रबंधु विनोद इसलिए साहित्यिक इतिहास नहीं है क्योंकि—

'मिश्रबंधुओं ने उन्नीसवीं शताब्दी के पश्चिमीय साहित्यिक इतिहास की उस प्रचलित प्रणाली पर ध्यान ही नहीं दिया, जिसे विधेयवादी प्रणाली कहते हैं। और जिसे अपनाने का सर्वप्रथम श्रेय शुक्ल जी को दिया जाता है, जिन्हें इसका थोड़ा गर्व भी है।'

जो नलिन जी तासी को निर्विवाद रूप से हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास लेखक कहते हैं, उनका 'मिश्रबंधु विनोद' को घुमा-फिराकर साहित्य का इतिहास न मानना शोभाजनक एवं युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता। नलिन जी की ही डफली को श्री देवीशंकर अवस्थी ने 'हिन्दी साहित्य कोश' भाग 2 में यह लिखकर बजाया है—

1. 'मिश्रबंधु ने अपने विनोद' को हिन्दी साहित्य का इतिहास कहने की गलती स्वयं नहीं की। —पृष्ठ 421

2. अस्तु 'विनोद' इतिहास नहीं है। —पृष्ठ 421

पर अंत में अवस्थी जी उपसंहार करते हुए लिखते है—

"हिन्दी साहित्य के विधेयवादी इतिहास लेखन के क्षेत्र में उनके महत्व का मूल्यांकन उन्हें श्रेष्ठ स्थान का अधिकारी सिद्ध करता है।" —पृष्ठ 421

यह उपसंहार 'वदतोव्याघात' का अच्छा उदाहरण है। एक ओर 'विनोद' इतिहास नहीं है, दूसरी ओर मिश्रबंधु ग्रियर्सन के बाद विधेयवादी इतिहास लेखन के क्षेत्र में द्वितीय स्थान के अधिकारी ही नहीं हो जाते, एक श्रेष्ठ स्थान के अधिकारी भी सिद्ध होते हैं। धन्य है।

प्रो० नलिन एवं प्रो० अवस्थी दोनों का कहना है कि मिश्रबंधुओं ने 'विनोद' को हिन्दी साहित्य का इतिहास कहीं नहीं कहा है। यह कथन भी अनर्गल है। मिश्र

बंधुओं ने अपने ग्रन्थ का नाम दिया है :

मिश्रबंधु विनोद

अथवा

हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा कवि कीर्तन

मिश्रबंधु विनोद तो वैसा ही नाम है, जैसा 'शिवसिंह सरोज'। यह तो ग्रंथ के साथ अपना नाम जोड़ने का मोह मात्र है। ग्रंथ का वास्तविक नाम तो हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा कवि कीर्तन' ही है।

नलिन जी ने ऊपर उद्धृत प्रथम उद्धरण के पश्चात् मिश्रबंधु विनोद, प्रथम भाग, प्रथम संस्करण की भूमिका से निम्नांकित उद्धरण दिया है :

"इतिहास-ग्रन्थ में छोटे-बड़े सभी कवियों एवं लेखकों को स्थान नहीं मिल सकता। उसमें भाषा सम्बन्धी, गुणों एवं परिवर्तनों पर तो मुख्यरूप से ध्यान देना पड़ेगा, कवियों पर गौण रूप से, किन्तु हमने कवियों पर भी पूरा ध्यान रखा है। इस कारण यह ग्रंथ इतिहास के इतर बातों का भी कथन करता है। हमने इसमें इतिहास सम्बन्धी सभी विषयों एवं गुणों को लाने का यथासाध्य पूर्ण प्रयत्न किया, परन्तु जिन बातों का इतिहास में होना आवश्यक है, उन्हें भी ग्रन्थ से नहीं हटाया।"

स्पष्ट है कि मिश्रबंधु अपने ग्रंथ को 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' तो कहते ही हैं इसे 'कवि कीर्तन' भी कहते हैं। इससे यह ध्वनि तो कदापि नहीं निकलती कि वे अपने ग्रन्थ विनोद को हिन्दी साहित्य का इतिहास नहीं कहते।

मिश्रबंधुओं ने हिन्दी साहित्य का इतिहास भी लिखा है, जो गंगा पुस्तकमाला लखनऊ से 1939 में प्रकाशित हुआ है। इसकी भूमिका में भी मिश्रबंधु स्पष्ट रूप से कहते हैं :

'विनोद हिन्दी साहित्य का इतिहास एवं कवि कीर्तन है, इतिहास उसमें है मूल, किन्तु इतिहास से इतर कवि वर्णन भी आधिक्य से है।'

—भूमिका, पृष्ठ 1

मैं निश्चित रूप से स्वीकार करता हूँ कि मिश्रबंधु विनोद हिन्दी में, किसी भारतीय एवं हिन्दी भाषी द्वारा तथा हिन्दी भाषा-भाषियों के लिए, लिखित हिन्दी का प्रथम इतिहास है। समग्रतः विचार करने पर यह हिन्दी साहित्य का द्वितीय इतिहास है। अपनी विशालता के कारण यद्यपि भूलों से भी यह भरापूरा है, पर अभी तक इतने अधिक कवियों का समावेश करने वाला हिन्दी का कोई इतिहास नहीं लिखा गया। भले ही आचार्य शुक्ल 'मिश्रबंधु विनोद' को बड़ा भारी 'कवि वृत्त संग्रह' 'प्रकांड कवि वृत्त संग्रह' एवं मिश्रबंधुओं को उत्साही और परिश्रमी संकलन-कर्ता मात्र कहें, पर इससे निःसन्देह रूप से वे लाभान्वित भी हुए हैं। रीतिकाल के सम्बन्ध में उन्होंने यह स्वीकार भी किया है।

6-7. अंग्रेजी में लिखे दो अल्प लघु इतिहास

1. ए स्केच ऑफ हिन्दी लिटरेचर—पादरी एडविन ग्रीव्ज़, 1917 ई०, 112 पृष्ठ ।
2. ए हिस्ट्री ऑफ़ हिन्दी लिटरेचर—पादरी एफ० ई० केई, 1920 ई०, 116 पृष्ठ ।

दोनों अत्यन्त लघुकाय है । इनमें कोई भी उल्लेखनीय विशेषता नहीं है । ये परिचय मात्र है । अत: इनसे किसी की विशेष अभिज्ञता नहीं है ।

8. आचार्य पंडित रामचंद्र शुक्ल कृत 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' : 1920 ई० ।

1928 ई० में 'हिन्दी शब्दसागर' का प्रकाशन पूर्ण हुआ । आचार्य शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का विकास' लिखा, जो जनवरी 1929 में शब्द-सागर की भूमिका के रूप में प्रकाशित हुआ । इसी वर्ष के मध्य में उस भूमिका के आदि और अंत में बहुत-सी बातें बढ़ाकर आचार्य शुक्ल ने अपना सुप्रसिद्ध 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' प्रस्तुत किया । 1940 ई० में इसका परिवर्द्धित एवं संशोधित संस्करण प्रकाशित हुआ । इस प्रकार ग्रंथ अद्यतन हो गया और इसकी उपयोगिता बढ़ गई ।

शुक्ल जी का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' हिन्दी का सर्वाधिक एवं प्रथम सुव्यवस्थित इतिहास है । इसकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख आगे किया जा रहा है ।

1. किसी देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का स्थायी प्रतिबिंब होता है, ये चित्तवृत्तियाँ राजनैतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक एवं धार्मिक कारणों से बदला करती हैं, अत: इन्हीं परिवर्तनों के साथ-साथ साहित्य में भी परिवर्तन होता रहता है । "आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है ।" आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास में अपनी इस परिभाषा का पूर्ण ध्यान रखा है ।

2. शिक्षित जनता की जिन-जिन प्रवृत्तियों के अनुसार हमारे साहित्य के स्वरूप में जो-जो परिवर्तन होते गए हैं, जिन-जिन प्रभावों की प्रेरणा से काव्यधारा की भिन्न-भिन्न शाखाएँ फूटती रही हैं, आचार्य शुक्ल ने उनका सम्यक निरूपण करते हुए सुसंगत काव्य विभाग किया है । आज आचार्य शुक्ल द्वारा किया गया यह काल विभाग ही सर्वमान्य एवं सर्वप्रचलित है :

1. वीरगाथा काल—सं० 1050-1375
2. भक्तिकाल—सं० 1375-1700
3. रीतिकाल—सं० 1700-1900
4. गद्यकाल—सं० 1900-1984 (या अब तक)

नवीन शोध ने हिन्दी साहित्य के उद्भव काल को प्राय: तीन सौ वर्ष और पूर्व खींच लिया है तथा वीरगाथा कहलाने वाली अधिकांश सामग्री या तो उत्तर-

कालीन सिद्ध हो गई या नोटिस मात्र है तथा अन्य अनेक विध साहित्य भी संप्राप्त हो चुका है। ऐसी स्थिति में इस काल का नामकरण पुन: 'आदिकाल' किया जा रहा है। साथ ही 'रीति काल' को 'शृंगार काल' कहने की भी बलवती प्रेरणा कार्य कर रही है।

3. जिस काल-खण्ड के भीतर किसी विशेष ढंग की रचनाओं की प्रचुरता दिखाई पड़ी है, वह एक अलग काल माना गया है और इसका नामकरण उन्हीं रचनाओं के स्वरूप के अनुसार किया गया है। इस प्रकार प्रत्येक काल का एक निर्दिष्ट सामान्य लक्षण बताया जा सकता है। काल निरूपण करते समय किसी विशेष ढंग की रचनाओं की प्रचुरता के साथ-साथ शुक्ल जी ने ग्रंथों की लोक प्रसिद्धि पर भी ध्यान दिया है।

4. एक ही काल और एक ही कोटि की रचना के भीतर जहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की परंपराएँ चलती हुई पाई गई हैं, वहाँ अलग शाखाएँ करके सामग्री का विभाग किया गया है। जैसा, भक्तिकाल के भीतर पहले दो काव्य धाराएँ—निर्गुण और सगुण—निर्दिष्ट की गई हैं, फिर प्रत्येक धारा की दो-दो शाखाएँ—निर्गुण की ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी तथा सगुण की रामाश्रयी एवं कृष्णाश्रयी।

5. शुक्ल जी का उद्देश्य हिन्दी साहित्य के इतिहास का एक पक्का और व्यवस्थित ढाँचा खड़ा करना था, इसीलिए बहुत सारे कवियों का समावेश करना उन्हें अभीष्ट नहीं था। उन्होंने केवल प्रमुख कवियों को लिया है।

6. प्रत्येक काल या शाखा की सामान्य प्रवृत्तियों का वर्णन कर लेने के उपरान्त उससे संबद्ध प्रमुख कवियों का वर्णन किया गया है। उस युग में आनेवाले इतर कवियों का विवरण उसके भी बाद फुटकर खाते में दिया गया है।

7. यद्यपि शुक्ल जी ने कवियों की साहित्यिक विशेषताओं के सम्बन्ध में दिग्दर्शन मात्र के लिए जो विचार प्रकट किया है, वे प्रायश: अत्यन्त संक्षिप्त हैं, पर वे अत्यन्त सटीक हैं। शुक्ल जी के द्वारा लिखित अनेक तथ्य एवं तिथियाँ भले अशुद्ध सिद्ध हो जायँ, पर उन्होंने कवियों के सम्बन्ध में जो कुछ आलोचनात्मक विचार प्रकट किए हैं, वे अपनी जगह पर अटल हैं और अत्यन्त अर्थपूर्ण हैं। इन आलोचना खंडों से उनकी सूक्ष्म पकड़ का पता चलता है।

8. हिन्दी साहित्य के पूर्ववर्ती इतिहासकारों के साहित्य पर बल न देकर वाङ्गमय पर बल दिया था। हिन्दी में जो कुछ लिखा गया था, सबके समावेश का उन्होंने प्रयास किया था। शुक्ल जी ने पहली बार विचार किया कि साहित्य क्या है और साहित्येतर क्या है। उन्होंने साहित्येतर का परित्याग करके केवल शुद्ध साहित्य को अपने इतिहास का विषय बनाया। उन्होंने स्पष्ट घोषणा की है कि 'सिद्धों और योगियों की रचनाएँ साहित्य कोटि में नहीं आती और योग धारा काव्य या साहित्य की कोई धारा नहीं मानी जा सकती।

9. शुक्ल जी ने कवियों की कविता के उदाहरण में जो रचनाएँ प्रस्तुत की

हैं, वे अत्यन्त सरस हैं और शुक्ल जी की सहृदयता का डिमडिम उद्घोष करती हैं।

अपनी इन विशेषताओं के कारण शुक्ल जी के इतिहास को जो मान्यता प्राप्त हुई है, वह आज तक किसी दूसरे इतिहास को नहीं प्राप्त हो सकी, क्योंकि उत्तरकालीन सभी इतिहास आचार्य शुक्ल के इस इतिहास के ऋणी हैं और इसके प्रभाव से बच नहीं सके हैं।

सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के कुछ प्रमुख इतिहास

शुक्ल जी द्वारा हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन का मार्ग प्रशस्त कर दिए जाने पर, उन्हीं की प्रणाली पर मुख्यतया चलते हुए बड़ी शीघ्रता से कई बड़े इतिहास प्रस्तुत किए गए, जिनमें से कुछ ये हैं :

1. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास—सूर्यकान्त शास्त्री कृत 1987 वि०, पृष्ठ सं० 533। प्रमुख कवियों पर लम्बी एवं तुलनात्मक समीक्षाएँ इसकी विशेषता है, सामान्य कवियों का विवरण संक्षेप में है।

2. हिन्दी भाषा और साहित्य—बाबू श्याम सुन्दरदास, सं० 1987 वि०, पृष्ठ 516। हिन्दी भाषा वाले भाग के 6 अध्याय हैं और हिन्दी साहित्य वाले भाग में 10। यह ग्रंथ बड़ी सजधज से इंडियन प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ था। इसमें प्रमुख कवियों एवं साहित्यकारों के सुन्दर चित्र आर्ट पेपर पर थे, बाद में 'हिन्दी भाषा' और 'हिन्दी साहित्य' अलग-अलग ग्रंथों के रूप में प्रकाशित हुए। 'हिन्दी साहित्य' में विशिष्ट धाराओं के वर्णन आद्योपांत हैं।

3. हिन्दी साहित्य का इतिहास—पं० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' एम० ए०, सं० 1988 वि०, पृष्ठ सं० 770। यह एक जिल्द में लिखित हिन्दी का सबसे बड़ा इतिहास है।

4. हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास—पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', सं० 1988 वि०, पृष्ठ 719। इस ग्रंथ में कवियों की भाषा के सम्बन्ध में विशेष कथन हैं। सन्-संवतों का प्राय: अभाव इसका बहुत बड़ा दोष है।

5. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा, 1995 वि० 627-86 नामानुक्रमणिका—714 पृष्ठ। यह ग्रंथ का प्रथम खंड मात्र है, इस बड़े ग्रंथ में केवल आदिकाल और भक्तिकाल (सं० 750-1750 वि० तक) का इतिहास प्रस्तुत किया जा सका है। इसका प्रस्तावित दूसरा खण्ड अभी तक नहीं लिखा जा सका। अपनी विस्तृत सामग्री के कारण यह इतिहास भी पर्याप्त प्रिय हुआ है।

6. हिन्दी साहित्य का इतिहास—मिश्रबंधु, सं० 1996 वि०, पृष्ठ सं० 360। यह मिश्रबंधु विनोद के ढाँचे को ही पूर्ण रूप से स्वीकार करता हुआ उसी का संक्षिप्त रूप-सा है।

7. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सं० 2003, पृष्ठ संख्या 735।

8. हिन्दी साहित्य : उसका उद्भव और विकास—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, सं० 2009, पृष्ठ संख्या 510।

इधर हाल ही में डा० गणपति गुप्त का हिन्दी साहित्य का एक वैज्ञानिक इतिहास निकला है, जिसका प्रचुर विज्ञापन हुआ है।

शुक्ल जी के इतिहास के प्रस्तुत कर दिए जाने के कुछ पूर्व से ही हिन्दी साहित्य के इतिहास के विविध अंगों की दृष्टि से भी इतिहास ग्रंथों का प्रणयन होने लगा है। ये अंग-उपांग निम्नलिखित हैं :

1. हिन्दी साहित्य के इतिहास के विविध कालों के इतिहास।

2. हिन्दी साहित्य के विविध काव्य धाराओं के इतिहास—जैसे वीर काव्य-धारा, सन्त काव्य, रीति काव्य आदि।

3. साहित्य की विविध विधाओं जैसे उपन्यास, नाटक, निबंध, कविता और आलोचना के इतिहास।

4. हिन्दी की विभिन्न बोलियों—अपभ्रंश, ब्रजबुलि, मैथिली, अवधी, भोजपुरी, ब्रजभाषा, खड़ी बोली, राजस्थानी, मालवी, बुन्देलखंडी, निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी और उर्दू के इतिहास।

5. जाति की दृष्टि से प्रस्तुत इतिहास, जैसे 'सुकवि सरोज' में सनाढ्य ब्राह्मण एवं 'ब्रह्मभट्ट कवि सरोज' में ब्रह्मभट्टों की साहित्य सेवा का इतिहास हे।

6. विभिन्न भूखण्डों के साहित्यिक इतिहास जैसे बुन्देल वैभव में बुन्देलखंड का इतिहास है, राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा, राजस्थानी भाषा और साहित्य, 'राजस्थान का पिंगल साहित्य' में राजस्थान का इतिहास, 'हिन्दी साहित्य और बिहार' में बिहार का इतिहास है।

'भरतपुर कवि-कुसुमांजलि' में भरतपुर राज्य के कवियों की, 'कानपुर के कवि' में कानपुर जनपद के कवियों की एवं 'असनो के हिन्दी कवि' में असनी के कवियों का इतिहास है। पंजाब प्रांतीय हिन्दी साहित्य का इतिहास भी प्रकाशित हो चुका है।

7. भिन्न-भिन्न धर्मों की दृष्टि से हिन्दी साहित्य के इतिहास—मुसलमानों एवं जैनों की साहित्य सेवा सम्बन्धी ग्रंथ प्रस्तुत किए गए हैं।

8. विभिन्न सम्प्रदायों—बल्लभ, राधाबल्लभ, गौड़ीय, निम्बार्क एवं हरिदासी सम्प्रदायों की दृष्टि से काव्य संग्रह एवं इतिहास लिखे जा चुके हैं। बल्लभ सम्प्रदाय में इतिहास अभी तक केवल अष्टछाप तक सीमित है।

'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंगलिश लिटरेचर' के ढंग पर नागरी प्रचारिणी सभा सोलह खण्डों में हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास प्रस्तुत कर रही है। इसके कई खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इसमें प्रत्येक खण्ड के अलग-अलग सम्पादक हैं, जो अपने विषय में अधिकारी विद्वान हैं। प्रत्येक खण्ड में अपने-अपने अधिकारी लेखक मण्डल हैं।

4

□□□

हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास

हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास की एक सुनिश्चित योजना आश्विन सं० 2010 में नागरी प्रचारणी सभा काशी ने निर्धारित की । इस योजना के अनुसार यह इतिहास निम्नांकित 17 भागों में सम्पूर्ण होगा :

1. हिन्दी साहित्य की पीठिका—सं० डा० राजबली पांडेय
2. हिन्दी भाषा का विकास—सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा
3. हिन्दी साहित्य का उदय और विकास, 1400 वि० तक —सं० डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. भक्ति काल (निर्गुण भक्ति), 1400-1700 वि०—सं० पं० परशुराम चतुर्वेदी
5. भक्ति काल (सगुण भक्ति), 1400-1700 वि०—पहले इस भाग के संपादक आचार्य चन्द्रबली पांडेय थे। इनके देहावसान के अनन्तर इसके सम्पादक डा० दीन दयालु गुप्त बनाये गये हैं ।
6. शृंगार काल (रीति बद्ध), 1700-1900 वि०—सं० डा० नगेन्द्र
7. शृंगार काल (रीति मुक्त), 1700-1900वि०—सं० पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
8. हिन्दी साहित्य का अभ्युत्थान (भारतेन्दु काल), 1950-75 वि० —सं० डा० विनय मोहन शर्मा
9. हिन्दी साहित्य का परिष्कार (द्विवेदी काल), 1950-75 वि०—सं० डा० राम कुमार वर्मा
10. हिन्दी साहित्य का उत्कर्ष काल (कविता) 1975-95 वि० —सं० पं० नन्द दुलारे वाजपेयी
11. ,, (नाटक) ,, सं० श्री जगदीशचंद्र माथुर
12. ,, (उपन्यास) ,, सं० डा० श्री कृष्णलाल

13. हिन्दी साहित्य का उत्कर्ष काल (आलोचना) 1975-95 वि०
—सं० श्री लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु'
14. हिन्दी साहित्य का अद्यतन काल, 1995-2010 वि०
—सं० डा० राम अवध द्विवेदी
15. हिन्दी में शास्त्र तथा विज्ञान—सं० डा० विश्वनाथ प्रसाद
16. हिन्दी का लोक साहित्य—महापंडित राहुल सांकृत्यायन
17. हिन्दी का उन्नयन—सं० डा० सम्पूर्णानन्द

इस इतिहास के प्रधान सम्पादक डा० अमरनाथ झा थे। डा० झा का देहावसान हो जाने से यह स्थान रिक्त हो गया, जिसकी पूर्ति नहीं की गई। ऐसा लगता है कि डा० झा को यह पद केवल सम्मानार्थ दिया गया था अन्यथा इसकी आवश्यकता न थी। यदि आवश्यकता होती, तो वह आज भी बनी रहती और उस पद पर किसी न किसी की नियुक्ति हुई होती। या यह भी हो सकता है कि हिन्दी के चोटी के ये विद्वान सम्पादक डा० झा को अपने से वृद्ध समझकर उन्हें प्रधान सम्पादक मानने के लिये तैयार हो गये थे, अब वे स्वयं को इतना बड़ा समझते हैं कि न तो बाहर से किसी को इस पद पर प्रतिष्ठित कर पा रहे हैं और न अपने में से ही किसी को इस स्थान पर बिठा पा रहे हैं। यह भी हो सकता है कि सभा के अधिकारी ही इस पद को अनावश्यक समझते हों और समझते हों कि संयोजक ही प्रधान सम्पादक का भी दायित्व सम्भाल लेगा। मेरी समझ से यह पद नितांत आवश्यक है। ऐसे किसी व्यक्ति के अभाव में सारा इतिहास विशृंखल बना रहेगा और विभिन्न भागों में परस्पर विरोधी बातें कही जाती रहेंगी।

17 भागों की यह विस्तृत योजना भी बहुतों को सम्मानित करने के दृष्टिकोण से ही बनाई गई प्रतीत होती है, अन्यथा यह कुछ लघुकाय हो सकती थी। मेरी समझ से भाग 1, 2, 16, 17 की सृष्टि इसी उद्देश्य से की गई है एवं 1975 से 1995 तक के 20 वर्षों के लिये जो 4 भागों की तथा 1995 से 2010 तक के 15 वर्षों के लिये एक भाग की योजना की गई है, उसमें भी यही दृष्टिकोण झलक रहा है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को तीन युगों में बाँटा जाता है—भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग और प्रसाद युग। जब भारतेन्दु एवं द्विवेदी युगों के लिये एक ही खंड निर्धारित हैं, फिर प्रसाद युग के लिय 5 खंडों की निर्धारणा में क्या कोई गूढ़ रहस्य नहीं प्रतीत होता? मेरी दृष्टि से यह सारी योजना ही सदोष है। सभा की तुष्टीकरण नीति को हटाकर यदि यह योजना बनाई जाती तो इसमें केवल 9 खण्ड होते—

1. आदि काल—सं० 1400 तक		
2. भक्तिकाल—निर्गुण भक्ति	1400 से 1700 तक
3. ,, सगुण भक्ति	,, से ,, तक
4. शृंगार काल—रीति बद्ध	1700 से 1900 तक

5. श्रृंगार काल रीति मुक्त 1700 से 1900 तक
6. भारतेन्दु युग 1900 से 1950 तक
7. द्विवेदी युग 1950 से 1975 तक
8. प्रसाद युग 1975 से 2010 तक
9. हिन्दी का साहित्येतर वाङ्मय

हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास की यह योजना इस रूप में भी बनाई जा सकती थी :

(अ) हिन्दी कविता का इतिहास

1.	हिन्दी साहित्य का आदि काल	सं० 750 से 1400 तक
2.	,, भक्तिकाल—निर्गुण भक्ति	सं० 1400 से 1700 तक
3.	,, ,, सगुण भक्ति	सं० ,, से ,, तक
4.	,, श्रृंगार काल—रीतिबद्ध	सं० 1700 से 1900 तक
5.	,, ,, रीति मुक्त	सं० ,, से ,, तक
6.	आधुनिक काव्य	सं० 1900 से 2015 तक

(ब) हिन्दी गद्य का इतिहास

7. हिन्दी गद्य साहित्य का विकास—प्रारम्भ से लेकर भारतेन्दु युग तक
8. हिन्दी कथा साहित्य
9. हिन्दी नाटक साहित्य
10. आलोचना, निबन्ध, गद्य गीत, यात्रा, संस्मरण, जीवन चरित्र, भाषा विज्ञान, व्याकरण, कोष, इतिहास, शोध आदि।
11. हिन्दी का साहित्येतर वाङ्मय—

वृहत् इतिहास की यह योजना 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ़ लिटरेचर' के ढंग पर बनाई गई है। अंग्रेजी भाषा का यह इतिहास 15 विस्तृत भागों में प्रस्तुत किया गया है। 14 भागों में इतिहास है, पन्द्रहवें में सबकी सामूहिक अनुक्रमणिका। सम्पूर्ण इतिहास का एक प्रधान सम्पादक है। एक-एक खंड के अनेक लेखक हैं जो अपने विषयों के अधिकारी विद्वान हैं। अंग्रेजी साहित्य का यह वृहत् इतिहास हिन्दी के लिये निश्चय ही प्रेरणाप्रद है।

इस वृहत् इतिहास के प्रकाशन के लिए केन्द्रीय सरकार ने सभा को एक लाख रुपये का अनुदान दिया है। योजना है भी बहु-व्ययसाध्य। बिना सरकारी सहायता के यह पूरी भी नहीं हो सकती है। जब यह योजना इतनी खर्चीली है तब इस पर व्यय भी बहुत सोच समझ कर किया जाना चाहिये। सभा में इसके लिये इतिहास विभाग खुला है, जिसका वार्षिक व्यय तीन हजार रुपये से कम नहीं है। यह व्यय पिछले चार वर्षों से होता आ रहा है और सम्भवतः इतने ही दिन और होता रहेगा।

इस प्रकार केन्द्रीय सरकार से जो अनुदान मिला है, उसका एक तिहाई केवल दफ्तर खर्च खाये चला जायगा।

इतिहास के प्रति प्रकाशित पृष्ठ पर 6 रु० पुरस्कार देने की योजना है। सम्पादक को 1 रु० प्रति पृष्ठ सम्पादन का मिलेगा। संपादक दूसरे लोगों के लिखे लेखों का सम्पादन करेगा और उसके लिये उसे योजना के अनुसार 1 रु० प्रति पृष्ठ मिलना ही चाहिये, पर वह अपने लिखे लेखों का भी न जाने कैसा सम्पादन कर रहा है और उसके लिए भी प्रति पृष्ठ 1 रु० ले रहा है। इतिहास के प्रथम, षष्ठ, सप्त एवं दशम भाग प्रकाशित हो गए हैं। पहले प्रथम भाग प्रकाशित हुआ। इसके संपादक हैं डा० राजबली पांडेय, जो वृहत् इतिहास के संजोयक एवं सभा के प्रधानमन्त्री हैं। सभा के अधिकारी होने के नाते उन्हें सचेत रहना चाहिए कि सभा का एक-एक पैसा बचे। पर स्वयं उन्होंने प्रथम खंड में जितना अंश लिखा है, उसके भी सम्पादन का प्रति पृष्ठ 1 रु० के हिसाब से लिया है। जब उन्होंने एक बार पथ प्रदर्शन कर दिया है, तब अन्य सम्पादक भी अपने-अपने लेखों का संपादन करेंगे और प्रति पृष्ठ उसका भी 1 रु० के हिसाब से लेंगे। सभा के प्रधानमन्त्री ने प्रथम भाग के सम्पादक के नाते यदि अपने लिखित अंश के भी सम्पादन का 1 रु० प्रति पृष्ठ न लिया होता, तो सभा के चार-पांच हजार रुपये निश्चित रूप से बच जाते।

अस्तु, इतना व्यय करके जो इतिहास प्रस्तुत किया जा रहा है, अब उसका मूल्यांकन भी कर लिया जाय।

हिंदी साहित्य का वृहत् इतिहास : षष्ठ भाग, रीतिबद्ध की समीक्षा

लेखक-समुदाय

इस भाग के सम्पादक हैं दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा० नगेन्द्र और लेखक हैं उन्हीं के मण्डल के लोग।

(अ) दिल्ली के लेखक :

1. डा० नगेन्द्र, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
2. डा० सावित्री सिन्हा, रीडर ,, ,,
3. डा० विजयेन्द्र स्नातक ,, ,, ,,
4. डा० ओमप्रकाश, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग हंसराज कालेज दिल्ली
5. डा० सत्यदेव चौधरी, प्राध्यापक ,,
6. डा० मनमोहन गौतम, प्राध्यापक हिन्दी विभाग, दिल्ली कालेज, दिल्ली
7. डा० महेन्द्र कुमार, प्राध्यापक हिन्दी विभाग, खालसा कालेज, दिल्ली

(ब) अन्य स्थानों के लेखक :

1. डा० भगीरथ मिश्र, रीडर हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय
2. डा० बच्चन सिंह, प्राध्यापक हिन्दी विभाग काशी विश्वविद्यालय।
3. डा० अम्बा प्रसाद 'सुमन', प्राध्यापक हिन्दी विभाग मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़

शृंगारकाल बनाम रीतिकाल

मूल योजना में डा० नगेन्द्र जिस छठे भाग के सम्पादक हैं उसका नाम शृंगार काल है; पर डा० नगेन्द्र ने इस नाम को स्वीकार न करके पूर्व प्रचलित 'रीतिकाल' शब्द को ही स्वीकार किया है। इससे दो-तीन ध्वनियाँ निकलती हैं

1. डा० नगेन्द्र उसी का लोहा मानना चाहते हैं, जिसका लोहा सब मान चुके हैं। मेरा अभिप्राय स्वर्गीय आचार्य शुक्ल से है।

2. वे उस व्यक्ति का लोहा नहीं स्वीकार करना चाहते, जिसने रीतिकाल का नाम शृंगार काल रक्खा; शायद इसे वे अपनी हेठी समझते हैं।

3. उन्हें सभा की मूल योजना की उतनी चिन्ता नहीं है, जितनी अपनी बात की। इसीलिए वे सम्पादकीय वक्तव्य में लिखते हैं—

"अनेक कारणों से हमने परम्परा सिद्ध 'रीतिकाल' नाम ही ग्रहण किया है। 'शृंगार काल (रीतिबद्ध)' नहीं। यों तो दोनों में कोई मौलिक भेद नहीं है, फिर भी शृंगार की अपेक्षा रीति शब्द ही हमारे दृष्टिकोण के अधिक निकट है। इस साधारण से परिवर्तन के लिए हम इतिहास के मूल आयोजकों से क्षमा याचना करते हैं।"

इतिहास के मूल आयोजकों ने चाहे डा० नगेन्द्र को क्षमा न किया हो, पर सभा के अधिकारियों ने उन्हें निश्चय ही क्षमा कर दिया है क्योंकि योजना को बिना बदलवाये हुए ही उन्होंने मुख पृष्ठ पर 'रीतिकाल : रीतिबद्ध' छाप दिया है। इस अवसर पर प्रधान संपादक का अभाव क्या खलने योग्य नहीं है ?

डा० नगेन्द्र ने संपादकीय वक्तव्य में शृंगार काल के विरोध में अपना जो तर्कहीन तर्क प्रस्तुत किया है, हमने अभी उसे देखा है। ऐसा लगता है कि 'शृंगार काल' का विरोध करने के लिये डा० नगेन्द्र ने एक सुनिश्चित योजना बना रखी है। इस ग्रंथ में अन्यत्र भी इसका खण्डन किया गया है। डा० अंबा प्रसाद 'सुमन' इस संबंध में लिखते हैं—

"कुछ वर्तमान आलोचक रीतिकाल को 'शृंगार काल' भी लिखने लगे हैं। यह कहाँ तक समीचीन है ? प्रश्न यह है कि क्या रीतिकाल के कवियों ने शृंगार रस के अंगों का ही विशद वर्णन किया है ? क्या रति नामक स्थायी भाव को आधार मानकर उसके आलंबन विभाव, उद्दीपन विभाव, अनुभाव और संचारियों के वर्णन और विवेचन में ही कवियों ने कविताएँ लिखी हैं ? सम्पूर्ण काल पर एक विहंगम दृष्टि डालने से पता लगता है कि उन कवियों की ऐसी परिपाटी नहीं रही।

फिर शृंगार काल नाम देने का प्रश्न ही नहीं उठता। शृंगार की प्रमुखता असंदिग्ध है एव वह स्वतन्त्र नहीं है, सर्वत्र रीतिबद्ध ही है। इस काल के समस्त कवियों को हम तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—(1) रीति ग्रन्थकार कवि, (2) रीतिबद्ध कवि, (3) रीतिमुक्त कवि। हम देखते हैं कि रीति का प्रभाव प्रत्येक वर्ग के कवियों पर है। रीति शब्द के दो ही अर्थ हैं। एक विशिष्ट पद रचना और दूसरा लक्षण ग्रन्थ। रीति ग्रन्थकार कवियों और रीतिबद्ध कवियों की कविताएँ तो किसी न किसी प्रकार लक्षबद्ध थीं ही। रही रीति मुक्त कवियों की बात, उनमें भी एक प्रकार की कवित्वपूर्ण पद रचना का वैशिष्ट्य पाया जाता है। अतः हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल को रीतिकाल नाम से अभिहित करना ही अधिक उपयुक्त है।"

—पृष्ठ 164

सुमन जी ने वर्तमान काल के उस आलोचक या उन आलोचकों का नामोल्लेख करना पाप समझा है, जिन्होंने रीतिकाल को शृंगार काल नाम दिया है। पहले उन आलोचकों के मत पूर्व पक्ष में रखने चाहिये थे, फिर उनका खंडन उत्तर पक्ष में रखा जाना चाहिये था, यों ही हवाई उत्तर देना तो हवाई फायर जैसा है। सुमन जी का प्रश्न है क्या रीतिकाल के कवियों ने शृंगार के विभिन्न अंगों का ही वर्णन किया है, जो उसे शृंगार काल कहा जाय? इसका उत्तर है क्या जो शृंगार के विभिन्न अंगों पर कविता लिखेगा, वही शृंगारी कवि कहा जायगा? क्या घनानंद, बोधा, आलम, ठाकुर, द्विजदेव, बिहारी आदि कवि जिन्होंने शृंगार के अंगों-उपांगों पर स्वतंत्र रूप से नहीं लिखा है, शृंगारी कवि नहीं हैं? जिसने भी शृगार काल नाम देना चाहा है, उसका मतलब यही है कि रीतिबद्ध कवि तो शृंगारी हैं ही, अन्य रीति मुक्त कवि भी अधिकाँश में शृंगारी ही हैं। शृंगार काल नाम दे देने से फुटकरिए कवियों की संख्या में कमी आ जायगी। रीतिकाल की अपेक्षा शृंगार काल अधिक व्यापक शब्द है और वह रीति मुक्त शृंगारी कवियों को भी प्रमुख कवियों में घसीट लेगा। ऊपर वाले उद्धरण में सुमन जी कहते हैं कि 'शृंगार की प्रमुखता असंदिग्ध है,' इसी दृष्टिकोण से तो इस काल का नाम 'शृंगार काल' वृहत् इतिहास की योजना में स्वीकृत था। आगे वे पुनः कहते हैं 'पर यह शृंगार स्वतन्त्र नहीं है, सर्वत्र रीतिबद्ध है।' सुमन जी रीति के दो अर्थ लेते हैं (1) लक्ष्य ग्रंथ (2) विशिष्ट पद रचना। हिन्दी साहित्य के इतिहासों में 'रीति-काल' नाम की स्वीकृति रीति के पहले अर्थ को लेकर है। रीति का अर्थ है काव्य की रीति। यह काव्य की रीति लक्षण ग्रंथों में मिलती है, इसीलिए उन्हें रीति ग्रंथ भी कहते हैं। इन ग्रंथों की बहुलता के कारण युग का नाम रीति काल। रीति का अर्थ विशिष्ट पद रचना भी होता है, पर 'रीतिकाल' शब्द में यह अर्थ किसी के भी द्वारा स्वीकृत नहीं किया गया था। यदि सुमन जी इस अर्थ को भी रीतिकाल में अंतर्हित कर देना चाहते हैं, और यह मत षष्ठ खंड के सम्पादक डा० नगेन्द्र को भी मान्य है, तो रीतिकाल का इतिहास 'रीतिबद्ध' और 'रीति मुक्त' करके क्यों प्रस्तुत

किया जा रहा है, रीति मुक्त कवि भी दूसरे अर्थ की दृष्टि से रीतिबद्ध हो गए, फिर उन्हें इस छठे भाग में ही स्थान देना चाहिये था। स्पष्ट है कि यह मत न तो डा० नगेन्द्र को मान्य है, न वृहत् इतिहास की योजना बनाने वालों को।

ग्रंथ परिचय

इस ग्रंथ के प्रारम्भ में चार पृष्ठों में 113 शब्दों की संकेत सारिणी दी गई है, जिसमें काजिमी, कुक, मनूची, लाहोरी, वारिस ये पाँच शब्द दोनों ओर ज्यों के त्यों हैं, शेष 108 शब्दों का संक्षेपण भी मूल के साथ दिया गया है। यह सूची व्यर्थ ही दी गई है, क्योंकि मूल ग्रंथ में कहीं भी इन संकेतों का प्रयोग नहीं हुआ है। सर्वत्र सम्पूर्ण शब्द व्यवहृत हुआ है। उदाहरणार्थ सम्पूर्ण ग्रंथ में 'अकबर नामा' का प्रयोग केवल एक बार पृष्ठ 23 पर हुआ है। यहाँ पूर्ण शब्द व्यवहृत हुआ है। संकेत सारिणी में दिया 'अक०ना०' नहीं। जब कोई बड़ा नाम किसी ग्रंथ में बार-बार आता हो, तब उसका संक्षेपण में प्रयोग लाया जाता है, जैसे 'मिश्रबन्धु विनोद' के लिए 'विनोद' और 'शिव सिंह सरोज' के लिए 'सरोज'। जब कोई नाम एक ही बार प्रयुक्त हो रहा हो, तब उसका संक्षिप्त रूप प्रयुक्त करना उपहासास्पद ही है।

ग्रंथ के अन्त में अनुक्रमणिका दी गई है, यह पूर्णतया सदोष है। शब्द-स्थापना में स्वरों का ध्यान नहीं रखा गया है। उदाहरण के लिए 'क' वाले शब्दों में क, के, का, कु, कृ, क्ष का क्रम हैं। इस कार्य में थोड़ी सावधानी अपेक्षित थी।

ग्रंथ चार खंडों में विभक्त है—(1) भूमिका (2) सामान्य विवेचन (3) किया गया आचार्य कवि और (4) काव्य कवि।

भूमिका में तीन अध्याय हैं—

(1) परिस्थितियाँ
(2) रीतिकाव्य का शास्त्रीय पृष्ठाधार—इसमें काव्य के विविध सम्प्रदायों का परिचय दिया गया है।
(3) रीति काव्य का साहित्यिक आधार।

सामान्य विवेचन वाले द्वितीय खंड में 6 अध्याय हैं—

(1) सामान्य विवेचन
(2) सीमा निर्धारण
(3) उपलब्ध सामग्री के मूल स्रोत
(4) रीति की व्याख्या
(5) रीतिकालीन कवियों की सामान्य विशेषताएँ
(6) रीति वद्ध कवियों का वर्गीकरण।

आचार्य कवि नामक तृतीय खंड में निम्नांकित सात अध्याय हैं—

(1) लक्षण वद्ध काव्य की सामान्य विशेषताएं

(2) रीतिकालीन रीतिशास्त्र के वर्ग
(3) सर्वांग निरूपक आचार्य
(4) रस निरूपक आचार्य
(5) अलंकार निरूपक आचार्य
(6) पिंगल निरूपक आचार्य
(7) भारतीय काव्य शास्त्र के विकास में रीति आचार्यों का योग

'काव्य कवि' शीर्षक चतुर्थ खंड में तीन अध्याय हैं—
(1) रीति बद्ध काव्य कवियों की विशेषताएँ
(2) कवि परिचय
(3) काव्य कवियों का योगदान

ग्रंथान्त में उपसंहार दिया गया है।

समीक्षा

प्रथम एवं द्वितीय खंडों के संबंध में मुझे कुछ विशेष नहीं कहना है। मुझे केवल तृतीय एवं चतुर्थ खंडों के संबंध में कहना है। इन खंडों के अध्ययन से मुझे लगा कि शायद ही किसी कवि का जीवन चरित इसमें पूरा-पूरा दिया गया हो। कवियों के ग्रंथों की पूर्ण सूची भी नहीं दी गई है। सन्-संवत तथा तथ्यों की अनेक भूलें हैं। अभी तक जितना भी शोध कार्य हुआ है, उसका उपयोग लेखकों ने अज्ञान के कारण नहीं किया है। उन्होंने प्रसिद्ध इतिहासों में प्राप्त सामग्री को ही उठाकर रख दिया है, उसके परिष्कार की आवश्यकता नहीं समझी है। हाँ, जो नए कवि इसमें सन्निविष्ट किये गये हैं, उनके सम्बन्ध में दी गई जानकारी एवं सूचनाएँ प्रामाणिक समझी जा सकती हैं। भिन्न-भिन्न लेखकों ने परस्पर विरोधी बातें कहीं हैं। सम्पादक ने उनका ठीक-ठीक समन्वय नहीं किया है।

नए लेखकों का नाम देने में राग-द्वेष दिखाई पड़ता है, अनुक्रमणिका के अनुसार इस ग्रंथ में डा० नगेन्द्र का नाम पृष्ठ 188, 195, 213, 218, 221-22, 225, 265, 271, 277, 503 पर कम से कम एक दर्जन बार लिया गया है और डा० भगीरथ मिश्र का नाम पृष्ठ 348-49, 371,.442, 450, 455, 461, 465, 470, 471 पर कम से कम दस बार। पृष्ठ 173 पर द्वितीय खंड के तृतीय अध्याय 'उपलब्ध सामग्री के मूल स्रोत' में प्रकाशित रीति-ग्रंथों की तीन स्तंभों में सूची दी गई है। पहले स्तंभ में आचार्य का नाम है, दूसरे में ग्रंथ का और तीसरे में प्रकाशक अथवा सम्पादक अथवा प्राप्ति स्थान का। प्राचीन प्रकाशित ग्रंथों के विवरण में प्रकाशक अथवा प्राप्ति स्थान का उतना महत्व नहीं है, जितना सम्पादक का। इस सूची में किसी एक नियम का निर्वाह नहीं है। केशव ग्रंथावली, भिखारीदास ग्रंथावली, पद्माकर पंचामृत के सम्पादक पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का नाम न देकर प्रकाशक हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, रामरत्न

पुस्तक भवन काशी का, मतिराम ग्रंथावली के सम्पादक पं० कृष्ण बिहारी मिश्र का नाम न देकर प्रकाशक गंगा पुस्तकमाला लखनऊ का, भूषण ग्रंथावली, कविकुल कंठाभरण के सम्पादक मिश्रबन्धुओं का नाम न देकर प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा काशी और दुलारे लाल भार्गव लखनऊ का नाम दिया गया है। प्रकाशक और सम्पादक दोनों का नाम दे देने से और भी अच्छा रहता। एक ही नियम का निर्वाह सर्वत्र किया जाता तो अधिक उपयुक्त होता।

इस ग्रंथ की एक बड़ी त्रुटि यह है कि किसी भी कवि का विवरण इसमें एक स्थान पर पूरा-पूरा नहीं मिलता। कवि के खंड-खंड हो गये हैं; उसका उल्लेख सर्वाङ्ग निरूपक आचार्य वाले प्रकरण में, फिर रस निरूपक आचार्य वाले प्रकरण में, अलंकार वाले एवं पिंगल वाले प्रकरण में बार-बार मिल सकता है। यदि इन विषयों के अतिरिक्त उसने अन्य ग्रंथ भी लिखे हैं, तो उनका विवरण न तो इन प्रकरणों में मिलेगा और न सम्पूर्ण इतिहास में ही अन्यत्र किसी अन्य भाग में। इस प्रकार इन कवियों का विवरण सदैव अधूरा ही बना रहेगा। अच्छा तो होता कि आचार्य शुक्ल की पद्धति अपनाई गई होती। शुक्ल जी ने एक कवि का विवरण एक ही स्थान पर दिया है। एक ही स्थल पर कवि के रीतिबद्ध एवं रीतिमुक्त सभी प्रकार के ग्रंथों का विवरण दे दिया जाना चाहिये था। इससे कवियों का विवरण भी पूरा हो जाता और अनावश्यक पुनरुक्ति भी न होती, जो इस ग्रंथ का एक दूसरा बड़ा दोष है। रस, अलंकार एवं पिंगल आदि के ग्रंथों की कालक्रमानुसारी सूची अलग से दी जा सकती थी।

इस सामान्य विवेचन के अनंतर अब आगे के पृष्ठों में इस वृहत् इतिहास में वर्णित कुछ कवियों के सम्बन्ध में दिये गये अशुद्ध तथ्यों एवं तिथियों पर विचार किया जा रहा है। इससे स्पष्ट हो जायगा कि लेखकों एवं सम्पादक ने अधुनातन शोध-सामग्री का कितने श्रम (?) से और कहाँ तक उपयोग किया है।

वृहत् इतिहास और शिवसिंह सरोज

शिवसिंह सेंगर ने 1878 ई० में शिवसिंह सरोज की रचना की थी। इस ग्रंथ के उत्तरार्द्ध में 1003 कवियों का जीवन चरित्र दिया गया है, जो हिन्दी साहित्य के इतिहास का मूल आधार है। ग्रियर्सन ने 1888 में इसी के आधार पर अंग्रेजी में 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान' नाम से हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास प्रस्तुत किया था। तभी से हिन्दी साहित्य के प्रत्येक इतिहास में इसका उपयोग परोक्ष अथवा प्रत्यक्ष रूप से निरन्तर होता आया है। हिन्दी साहित्य के इस वृहत् इतिहास में भी इसका उपयोग अनेक स्थानों पर हुआ है। अनुक्रमणिका के अनुसार शिवसिंह सरोज का उल्लेख पृष्ठ 313, 342, 374, 479, 529, 534-35, 538-40 एवं शिवसिंह सेंगर का उल्लेख पृष्ठ 168, 313-14, 440, 470 पर हुआ है।

शिवसिंह सरोज में सर्वाधिक महत्व की बात उसके संवत हैं। और इन्हीं का सबसे भ्रांत ढंग से उपयोग किया जाता रहा है। यह अशुद्ध उपयोग ग्रियर्सन के समय (1888 ई०) से ही प्रारम्भ हुआ है। शिवसिंह ने कवियों का उपस्थित काल अथवा रचना काल दिया है, जिसे ग्रियर्सन ने जन्म-संवत स्वीकार किया है। तभी से रचनाकाल जन्मकाल माना जा रहा है और सरोज के संवतों को जन्मकाल स्वीकार कर उनका खण्डन-मण्डन किया जाता रहा है। सरोज के प्रथम दो संस्करणों में कवियों का जीवन चरित निम्नांकित पाँच स्तंभों में दिया गया है—(1) क्रम संख्या, (2) कवि का नाम, (3) संवत, (4) जीवन चरित, (5) पन्ना जिसमें उसकी कविताई है। प्रथम दो संस्करणों में 'में उ०' नाम की कोई वस्तु नहीं है। तृतीय संस्करण (1883 ई०) से इसका प्रवेश प्रेस द्वारा कागज की बचत के लिये हुआ। प्रथम तीन स्तंभों को उन्होंने शीर्षक के ढंग पर एक पंक्ति में छापा और चतुर्थ एवं पंचम स्तंभों को दूसरे अनुच्छेद के रूप में।

इस प्रकार अकबर के सम्बन्ध में लिखा गया—

"1 अकबर बादशाह, दिल्ली, संवत् 1584 में उत्पन्न हुए"

अन्य कवियों के संवतों के साथ 'में उ०' संक्षिप्त रूप में लिखा गया। ग्रियर्सन ने इसी 'उ०' को उत्पन्न मानकर सरोज के संवतों को जन्म-संवत मान लिया और जब एक बार एक अंग्रेज ने कोई बात स्वीकार कर ली, तब उसको बिना छान-बीन किये हिन्दी के सभी विद्वानों ने सहज ही स्वीकार कर लिया और बाद में बेचारे शिवसिंह सेंगर पर व्यर्थ ही दोषारोपण किया जाने लगा। जो संवत रचना काल की दृष्टि से ठीक हैं, उन्हें जन्मकाल मानकर अशुद्ध सिद्ध किया जाने लगा।

इस वृहत् इतिहास में शिवसिंह सेंगर एवं उनके सरोज का उल्लेख कम से कम 15 बार हुआ है, जिनमें से 8 बार अशुद्ध बातें कही गई हैं। इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है :

1—चिंतामणि के सम्बन्ध में लिखा गया है—"शिवसिंह सेंगर ने इनका जन्म-सम्वत् 1729 माना है, पर यह समय यथार्थ नहीं प्रतीत होता, क्योंकि सम्वत् 1723 में तो शाहजहाँ की मृत्यु हो चुकी थी"।

—पृष्ठ 314

शिवसिंह के अनुसार 1729 चिंतामणि का रचनाकाल है और यह ठीक है। इसे जन्मकाल स्वीकार करके इसे अयथार्थ कहना शिवसिंह के साथ अन्याय करना है।

2—प्रताप साहि के विवरण में लिखा गया है—"इनके आश्रयदाता चरखारी (बुंदेलखंड) के महाराज विक्रम साहि थे। शिवसिंह सरोज के अनुसार ये कवि महाराज छत्रसाल परना पुरंदर के यहाँ ी रहे। इनका रचनाकाल सं० 1880 से 1900 तक माना जाता है।"

—पृष्ठ 374

निश्चय ही सरोज में इन्हें पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल का भी आश्रित लिखा है। पर सरोज का उक्त उल्लेख अशुद्ध है। छत्रसाल का समय सम्वत् 1705-88 है। सरोज में छत्रसाल के समय के ही अनुकूल प्रतापसाहि का समय सं० 1760 दिया गया है। वृहत् इतिहास में सरोज में दिया इनका संवत् 1760 स्वीकार नहीं किया गया है; पर छत्रसाल के यहाँ इनके होने का अनावश्यक उल्लेख कर दिया गया है। स्पष्ट है लेखक को छत्रसाल के समय का ठीक पता नहीं।

3. रतन कवि—"शिवसिंह सेंगर ने रतन कवि का जन्म काल सं० 1798 लिखा है जिसके आधार पर शुक्ल जी ने इनका कविता काल सं० 1830 के आसपास माना है।"
—पृष्ठ 470

शिवसिंह सरोज प्रथम एवं द्वितीय संस्करणों में कवि का समय संवत् 1738 दिया गया है, जो बाद के संस्करणों में 1798 हो गया है। यह गढ़वाल नरेश फतहशाह के आश्रित थे। फतहशाह का शासनकाल गढ़वाल गजेटियर के अनुसार सं० 1741-73 है। अतः 1738 कवि का रचना काल है और वृहत् इतिहास का उल्लेख अशुद्ध एवं भ्रामक है।

4. मतिराम—"शिवसिंह सरोज और मिश्रबंधु विनोद में छंद सार पिंगल नाम का उल्लेख है।"
—पृष्ठ 4 9

सरोजकार का कथन है—"छंद सार पिंगल फतेसाहि बुन्देला श्री नगर के नाम से रचा।" सरोजकार ग्रंथ का नाम 'छंदसार' और विषय का नाम 'पिंगल' देता है, न कि सम्पूर्ण ग्रंथ का नाम 'छंदसार पिंगल'। यह ग्रंथ प्रसिद्ध मतिराम का न होकर इसी युग के एक अन्य मतिराम का है।

5-6 बेनी बेंतीवाले और बेनी प्रवीन—"शिवसिंह सरोज में रायबरेली जिले के बेंती गाँव के निवासी बेनी बंदीजन का तथा लखनऊ निवासी बेनी प्रवीन का जन्म सम्वत् 1844 तथा 1876 लिखा है।"
—पृष्ठ 529

शिवसिंह ने बेंती वाले बेनी का रचनाकाल सम्वत् 1844 दिया है। यह जन्मकाल नहीं है। इन बेनी ने 1849-51 में अलंकार प्रकाश या टिकैत राय प्रकाश नामक ग्रंथ रचा था। देखिए खोज रिपोर्ट 1909/14, 1923/38 सी, 1947/243 ख।

इसी प्रकार लखनऊ वाले बेनी प्रवीन का सरोज में दिया सम्वत् 1876 उनका रचना काल है। सम्वत् 1874 में बेनी प्रवीन ने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'नवरस तरंग' प्रस्तुत किया था —

4 7 8 1
समय देखि दिग दीप युत सिद्धि चंद्र बल पाय
माघ मास श्री पंचमी श्री गोपाल सहाय 27

यदि लेखक को इन कवियों के ग्रंथों एवं उनके रचना काल का ठीक-ठीक पता होता, तो उसने सरोज के इन सम्वतों को कदापि जन्मकाल न माना होता, और

यदि माना भी होता तो इनका तत्काल खंडन भी कर दिया होता।

7. नेवाज कवि के सम्बन्ध में लिखा गया है—"शिवसिंह सरोज में सम्वत 1739 जन्म सम्वत लिखा है जो अशुद्ध है क्योंकि इनका लिखा हुआ शकुन्तला नाटक सम्वत 1737 का है।" —पृष्ठ 534

शिवसिंह ने 1739 को उपस्थितिकाल के रूप में ही दिया है न कि जन्मकाल के रूप में। शकुन्तला नाटक की रचना सम्वत 1737 में नहीं हुई। फिदाई खान के पुत्र मुसवी खान के शौर्य और साहस से फर्रुखसियर को फतह मिली थी। अतः मुसवी खान को फर्रुखसियर ने आजम खान की उपाधि दी थी। फर्रुखसियर का शासन काल सं० 1770-76 है। अतः मुसवी खान सं० 1770 में आजमखान हुए रहे होंगे। इन्हीं आजमखान के लिए, न कि मुसवी खान के लिए, नेवाज ने शकुन्तला की रचना की थी। इस ग्रन्थ की रचना सम्वत 1770 के पश्चात किसी समय हुई रही होगी। आचार्य शुक्ल ने न जाने किस आधार पर इसका रचना काल सं० 1737 दिया है, उस समय मुसवी खान का अस्तित्व भले रहा हो, आजमखान का नहीं ही था। शुक्ल जी ने इस आजमखान को संभवतः औरंगजेब का पुत्र प्रसिद्ध आजमशाह समझ कर उक्त सम्वत की कल्पना कर ली है। सरोज में दिया सम्वत सरोजकार की दृष्टि से रचना काल है, पर यह अशुद्ध है और जन्मकाल हो सकता है। तासी के अनुसार उक्त ग्रन्थ की रचना सं० 1773 में हुई। अंक विपर्यय से 1773 का 1737 हो गया है।

8. पजनेस के सम्बन्ध में यह लेख है—

"शिवसिंह सरोज में इनका जन्म सम्वत 1872 लिखा है।"

"शिवसिंह सरोज में इनकी नखशिख और मधुर प्रिया नामक दो पुस्तकों का उल्लेख है किन्तु अभी तक उपलब्ध नहीं हुई हैं।" —पृष्ठ 538

शिवसिंह ने अपनी समझ से 1872 को रचनाकाल के रूप में ही प्रस्तुत किया है जब तक अन्यथा न सिद्ध हो जाय, इसे उपस्थितिकाल ही मानना चाहिए, जन्मकाल नहीं। शिवसिंह ने ग्रन्थ का नाम 'मधुरप्रिया' दिया है, सो खोज से भी सत्य सिद्ध है। आचार्य शुक्ल ने इसे प्रमाद से 'मधुरप्रिया' बना दिया है। 'नखशिख' कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है, 'मधुप्रिया' का एक अंश मात्र है। मधुप्रिया का नखशिख वाला सटीक अंश (31 कवित्त) खोज में मिल चुका है—देखिए खोज रिपोर्ट 1905/93।

केशव के तथाकथित चार पूर्ववर्ती रीति-कवि

1. हिन्दी का तथाकथित प्रथम कवि पुष्प, पुष्य, पुंड या पुषी

'हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास' में पुष्प, पुष्य, पुंड या पुषी इन चार नामों से वर्णित हिन्दी के तथाकथित प्रथम कवि का विवरण शिवसिंह में दो स्थलों पर है। एक तो भूमिका में, दूसरे जीवन चरित खण्ड में। दोनों स्थलों पर कवि का नाम दो-दो बार आया है। सरोज के प्रथम संस्करण में तीन स्थलों पर कवि का नाम 'पुष्प'

है और एक स्थल पर 'पुष्य' (जीवन चरित में दूसरी बार) द्वितीय संस्करण को उपलब्ध प्रति प्रारंभ में खंडित है और उसमें भूमिका नहीं है। इसके जीवन चरित्र खंड में कवि का नाम इस प्रकार लिखा गया है जो 'पुग्प' प्रतीत होता है, यद्यपि है वह 'पुष्प' ही। तृतीय संस्करण की भूमिका में यह 'पुण्ड' हो गया है और जीवन चरित खंड में 'पुष्प' जो 'पुष्य' भी पढ़ा जा सकता है। तृतीय संस्करण के आधार पर ग्रियर्सन ने अपना 'द माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' प्रस्तुत किया और उन्होंने कवि के तीन नाम पुष्प, पुष्य, पुण्ड का उल्लेख किया। सरोज के सप्तम संस्करण में भूमिका के अन्तर्गत कवि का नाम 'पुषी' हो गया है, और जीवन चरित के अन्तर्गत यह 'पुण्ड' बना हुआ है। इस प्रकार वृहत् इतिहास में पुष्प, पुष्य, पुण्ड और पुषी ये चार नाम एक ही व्यक्ति के हो गए। यदि वृहत् इतिहास वालों ने केवल शिवसिंह सरोज के विभिन्न संस्करणों की छान-बीन कर ली होती, तो वे कवि के किसी एक नाम का निर्णय कर सकते थे। सरोज प्रथम संस्करण से कवि का नाम 'पूष्प' या 'पुष्प' सिद्ध होता है। इनमें भी 'पुष्प' शब्द को मान्यता दी जा सकती थी।

डा० नगेंद्र इस कवि के अस्तित्व के सम्बन्ध में कोई निश्चित धारणा नहीं रखते। वे लिखते हैं—"हिन्दी में रीतिकाल की परंपरा लगभग उसके जन्म से ही आरम्भ हो जाती है—पुष्य या पुंड का अस्तित्व चाहे रहा हो या नहीं।"

—पृष्ठ 152

"हिन्दी में रीति परंपरा का आरम्भ तो उसके जन्मकाल से ही मानना पड़ेगा—पुष्य या पुंड कवि विशेष का अस्तित्व चाहे मानें या नहीं।" —पृष्प 155

डा० विजयेंद्र स्नातक इस कवि के सम्बन्ध में यह उल्लेख करते हैं—"शिवसिंह सेंगर द्वारा संकेतित पुष्य नामक कवि का अलंकार ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है।"

डा० सत्यदेव चौधरी इनका उल्लेख केशव के प्रसंग में इस प्रकार करते हैं—

"(केशव ने) हिन्दी का उस काव्य शास्त्रीय परंपरा को पुनर्जीवन प्रदान किया जो पुष्य, कृपाराम, मोहनलाल, रहीम, कर्णेश (करनेस) आदि कवियों अथवा आचार्यों की रचनाओं में पिछली कई शताब्दियों से मन्द गति से बहती चली आ रही थी।"

जहाँ विजयेंद्र स्नातक एवं सत्यदेव चौधरी ने इस कवि के अस्तित्व में असंदिग्ध रहते हुए इसका केवल उल्लेख किया है, वहाँ डा० ओमप्रकाश ने पृष्ठ 440-42 पर इस कवि के सम्बन्ध में विचार भी किया है। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला है—

1. यदि पुष्यकवि के अस्तित्व में सत्यांश है, तो उनके आश्रयदाता राजा मान और उनका काल सं० 770 भी सत्य है।

2. पुष्य कवि की रचना हिन्दी की सम्पत्ति न होकर अपभ्रंश की निधि है।

3. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपभ्रंश के प्रसिद्ध कवि पुष्पदंत और इस कवि की एकता की जो कल्पना की है, यह कष्ट कल्पना है और उपर्युक्त अनुमान अनावश्यक है।

श्री सत्यप्रकाश जी के तीनों निष्कर्ष यद्यपि ठीक हैं, पर वे किसी विशेष गवेषणा के फल नहीं हैं। बहुत कुछ अनुमान पर निर्भर हैं।

सरोजकार ने इस कवि का विवरण टाड से लिया है। टाड में इसका नाम पूष 'Pusha' दिया गया है। सं० 770 में अवन्तीपुरी के राजा मान ने चित्तौर के निकट एक विशाल सरोवर बनवाया था, जिसका नामकरण इसके निर्माता मान के नाम पर 'मान सरवर' किया गया था। इसी सरोवर के तट पर एक शिलालेख उत्कीर्ण किया गया था। इस शिलालेख का रचयिता नाग भट्ट का पुत्र पूष था। यह पूष अलंकार में प्रवीण (Versed in Alankar) था। इसने दोहों में कोई अलंकार ग्रंथ नहीं लिखा था, जैसाकि सरोज में लिखा गया है। शिलालेख का उत्कीर्ण करने वाला खेतड़ी करुग का पौत्र सेवादित था। 'मान सरवर' का निर्माण सम्वत 770 में हुआ—'Seventy had elapsed beyond seven hundred years (Samvatisir), when the lord of men, the king of Malwa, formed this lake.' इस शिलालेख से सिद्ध है कि राजा मान भोज का पुत्र था, न कि पिता, जैसाकि सरोज में प्रमाद से लिखा गया है। यह शिलालेख कीलाक्षरों (Nail headed character) में है और इसकी भाषा संस्कृत या अपभ्रंश ही हो सकती है।

(2) कृपाराम

कृपाराम 'हित तरंगिणी' नामक ग्रंथ के रचयिता हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल इस दोहे के आधार पर स० 1598 माना जाता है—

8 9 5 1
सिद्धि निधि शिवमुख चन्द्र लखि माघ सुद्ध तृतियासु
हित तरंगिणी हौं रची कवि हित परम प्रकासु

इसके अतिरिक्त कृपाराम ने असंदिग्ध शब्दों में अपने पूर्व रचे हुये रीति ग्रन्थों की ओर संकेत किया है—

बरनत कवि सिंगार रस, छंद बढ़े बिस्तारि
मैं बरन्यौं दोहान बिच, यातें सुघर बिचारि

डा० नगेन्द्र हिन्दी के अन्य इतिहासकारों की भाँति कृपाराम को इतना पुराना कवि मान बैठे हैं। (पृष्ठ 152)।

डा० विजयेन्द्र स्नातक पृष्ठ 166 पर हित तरंगिणी का रचनाकाल सं० 1698 देते हैं। संभवत: यह प्रमादवश हो गया है, क्योंकि अगले ही पृष्ठ (167) पर उन्होंने 17 वीं शती के रीति ग्रन्थों की सूची में कृपाराम की हित तरंगिणी का समय सं० 1598 दिया है। पृष्ठ 517 पर की उन्होंने कृपाराम की बिहारी का पूर्ववर्ती कवि स्वीकार किया है। डा० बच्चन सिंह भी डा० नगेन्द्र को दुहाई देते हुये इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० 1598 ही स्वीकार करते हैं। (पृष्ठ 264-65)। डा० सत्यदेव चौधरी भी इसी मत के हैं (पृष्ठ 287/316)। डा० भगीरथ मिश्र ने पृष्ठ 388 पर

हित तरंगिणी का रचनाकाल प्रमादवश सं० 1498 दिया है। पृष्ठ 430 पर उन्होंने सम्वत 1598 ही दिया है।

डा० ओमप्रकाश इस ग्रन्थ के रचनाकाल के सम्बन्ध में डा० नगेन्द्र, डा० विजयेन्द्र स्नातक, डा० बच्चन सिंह, डा० सत्यदेव चौधरी, डा० भगीरथ मिश्र आदि पंच-डाक्टरों से भिन्न मत रखते हैं। इस सम्बन्ध में वे लिखते हैं—

"केशव से पूर्व, पं० रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, सम्वत 1598 में कृपाराम ने नायिका भेद की पुस्तक हित तरंगिणी लिखी, परन्तु आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी उसे पीछे की रचना मानते हैं।[1] यदि यह पुस्तक गोस्वामी हित हरिवंश की प्रेरणा से लौकिक शब्दावली में अलौकिक रस का वर्णन करती है तो भी इसका प्रणयन सम्वत 1590 में सम्भव नहीं। स्वयं हित जी का काव्यकाल सम्वत 1591 से प्रारम्भ होता है।" (पृष्ठ 442)

इस प्रकार इस वृहत् इतिहास में कृपाराम कृत हित तरंगिणी का रचनाकाल 1498, 1590, 1598, 1698 आदि-आदि छपा है। यह विभेद मुख्यतः मुद्रण दोष के मत्थे मढ़ा जा सकता है; पर ऐसे तथाकथित प्रामाणिक एवं वृहत् इतिहास में यह मुद्रण दोष क्या क्षम्य है? क्या इससे अनर्थ नहीं हो सकता? इससे भी विचित्र बात तो यह है कि एक ही ग्रंथ में दो विभिन्न विद्वान एक ही ग्रन्थ के रचनाकाल के सम्बन्ध में दो भिन्न मत रखते हैं और इनका सम्पादन एक विद्वान के प्रधान संपादकत्व में होता है। डा० नगेन्द्र को डा० ओमप्रकाश की बात या तो काट देनी चाहिए थी या फिर सर्वत्र उन्हीं के मतानुकूल सुधार कर देना चाहिये था। यह बात अत्यन्त अनुत्तरदायित्व पूर्ण है। अज्ञानवश कोई भ्रांति हो जाना एक बात है; पर सज्ञान रूप से दो विरोधी तथ्यों को सत्य स्वीकार कर लेना कहाँ तक समीचीन है, इसे या तो प्रज्ञावान समझ सकते हैं अथवा प्रज्ञाचक्षु।

डा० ओमप्रकाश ने डा० हजारी प्रसाद जी के मत का उल्लेख किया है, पर उनका कोई तर्क नहीं दिया है। डा० बच्चन सिंह ने नए मत का खंडन किया है पर नए मत वाले आलोचकों का नाम देना असमीचीन समझा है। खंडन करते समय डा० नगेन्द्र का नाम लेकर अवश्य उनका मत दिया है। सबसे पहले मिश्र बंधु विनोद (61) में इस ग्रन्थ के रचनाकाल के सम्बन्ध में संदेह उठाया गया—

"इस कवि के पद कहीं-कहीं बिहारीलाल से मिल जाते हैं, जिससे यह संदेह किया जा सकता है कि यह कवि बिहारी से पीछे हुआ, परन्तु अन्य प्रमाणों के अभाव में इस ग्रन्थ का ठीक सम्वत अप्रामाणिक नहीं माना जा सकता। और यही कहना पड़ेगा कि या तो बिहारी ने इनकी चोरी की या पद दैवात मिल गये।"

इधर पंडित चंद्रवली पांडेय ने हित तरंगिणी के रचनाकाल पर अपने ग्रंथ केशवदास (पृष्ठ 408-10) में विचार किया है। उन्होंने इसका रचना काल सम्वत 1798 स्वीकार किया है। उनका कहना है कि रचनाकाल सूचक दोहे में 'शिव मुख'

1. हिंदी साहित्य, पृ० 295

के स्थान पर 'सब सुख' पाठ रहा होगा, जो लिपिकर्ता के अज्ञान के कारण 'शिवमुख' हो गया। हस्त लेख में 'सुख' का 'मुख' हो जाना सहज है और जब 'सुख' का 'मुख' हो गया, तब अर्थ विचार से 'सब' का 'सिव' कर लिया गया। सब सुख से सात का बोध होता है। सातों सुख ये हैं—

तन, तिय, तनय, धाम, धन, धरनी
मित्र सहित सुख सातौं बरनी

महाकवि केशव ने भी 'कवि प्रिया' में 'सप्त वर्णन' के अंतर्गत सात सुखों का उल्लेख किया है—

सात छंद, सातों पुरी, सात तुचा, सुख सात
चिरंजीव मुनि सात नर सप्त मातृका तात

— एकादश प्रभाव छंद 18

महाकवि वृन्त ने 'यमकालंकार सतसैया' या 'वृन्द विनोद' में 'सुख' का प्रयोग सात संख्या के लिये किया है—

3 6 7 1
गुन रस सुख अमृत बरस, बरस सुकुल नभ मास
दूज सुकवि कवि वृंद ये दोहा किए प्रकाश 14

—खोज रिपोर्ट 1944/396

पांडेय जी ने अपनी बात के समर्थन में 'आज' में भी एक लेख कृपाराम की हिततरंगिणी पर लिखा था। पांडेय जी के मत का उपयोग डा० हजारी प्रसाद जी द्विवेदी ने अपने 'हिन्दी साहित्य' में किया है, जिसका मंडन इस वृहत् इतिहास में डा० ओम प्रकाश जी ने एवं खंडन (?) डा० बच्चन सिंह ने किया है।

पांडेय जी की बात स्वीकार कर लेने पर बड़े छंदों में शृंगार रस वर्णन करने की प्रचलित रीति और बिहारी के दोहों से मेल की बात ठीक सध जाती है। सम्वत 1798 के आस-पास कृपाराम नामक एक कवि जयपुर दरबार में थे। मेरा अनुमान है कि हित तरंगिणी इन्हीं जयपुरी कृपाराम की रचना है। जयपुर दरबार से सम्बन्धित होने के कारण इनका अपने पूर्ववर्ती एवं उसी दरबार से सम्बन्धित बिहारी से प्रभावित होना सहज ही समीचीन प्रतीत होने लगता है। जयपुरी कृपाराम ने सं० 1772 में 'समय बोध' नामक ग्रंथ की रचना की थी।

इस वृहत् इतिहास के प्रणेताओं ने यह स्वीकार किया है कि बड़े छंदों में शृंगार रस वर्णन करने वाले जिन कवियों एवं ग्रंथों की ओर कृपाराम ने संकेत किया है, वे अभी तक नहीं मिले हैं। वे मिलें कैसे, हों भी तो। कृपाराम ने वस्तुतः कवित्त एवं सवैयों की ओर संकेत किया है, जिनका प्रचुर प्रचलन संवत 1798 से पहले हो चुका था।

इतने प्रमाणों की उपेक्षा करना इन इतिहासकारों के लिए कहाँ तक उचित है यह विचारणीय है। हो सकता है इनमें से बहुतों को इस सारी विचारणा का पता भी न हो।

(3) गोपा या गोप

शिवसिंह सरोज के जीवन चरित प्रकरण में जिस कवि को 'गोपा' कहा गया है, उसी को उदाहरण खंड में 'गोप' कहा गया है और उदाहृत कविता में भी कवि छाप 'गोप' ही है। अतः गोपा और गोप एक ही कवि हैं तथा कवि का असल नाम गोप है न कि गोपा।

विनोद में शिवसिंह सरोज के आधार पर 121 संख्या पर 'गोपा' का एवं खोज रिपोर्टों के आधार पर 115 एवं 663/3 संख्याओं पर गोप का विवरण दिया गया है। 'हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास' (पृष्ठ 51) में डा० भगीरथ मिश्र ने गोपा और गोप का अभेद स्वीकार किया है, जो ठीक है।

'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' में गोपा और गोप का झगड़ा बना हुआ है। डा० सत्यदेव चौधरी पृष्ठ 74, 287 पर 'गोपा' को केशव का पूर्ववर्ती स्वीकार करते हैं और पृष्ठ 175-76 पर गोप कवि के रामचन्द्र भूषण और रामचन्द्राभरण के सवाई महेन्द्र पुस्तकालय ओरछा में उपलब्ध होने का उल्लेख करते हैं। स्पष्ट है कि वे गोपा और गोप को दो कवि मानते हैं।

डा० ओमप्रकाश ने भी कवि को पृष्ठ 442 एवं 445 पर गोपा ही कहा है। पृष्ठ 442 पर वे गोपा को अलंकार चन्द्रिका का कर्ता कहते हैं और इसे केशव की पूर्ववर्ती रचना स्वीकार करते हुये डा० भगीरथ मिश्र द्वारा स्वीकृत गोपा और गोप के अभेदत्व एवं गोप के सं० 1615 के स्थान पर सं० 1773 में उपस्थित होने का उल्लेख करते हैं। पृष्ठ 445 पर वे 'गोपा' की कृतियों के अनुपलब्ध होने का संकेत करते हैं और पृष्ठ 455-56 पर गोप का विस्तृत विवरण देते हैं। स्पष्ट है कि यह भी गोपा और गोप को दो समझते हैं। अनुक्रमणिका में भी गोपा और गोप अलग-अलग दो व्यक्ति माने गये हैं।

डा० विजयेन्द्र स्नातक पृष्ठ 168 पर कवि का नाम गोप एवं उसके अलंकार चन्द्रिका नामक ग्रंथ का रचनाकाल सं० 1670 देते हैं तथा पृष्ठ 169 पर उसकी कृतियों के अनुपलब्ध होने का उल्लेख करते हैं।

वृहत् इतिहास के सम्पादकों में से एक ने गोपा और गोप के अभेत्व को बहुत पहले स्वीकार कर लिया था, पर इस वृहत् इतिहास में वे दो कवियों के रूप में स्वीकृत हैं। शिवसिंह सरोज ने 'गोपा' की सृष्टि की थी, पर उसीसे उसका 'गोप' होना भी सिद्ध हो जाता है, जैसाकि ऊपर लिखा जा चुका है। सरोज में गोपा का समय सं० 1590 दिया गया है। ग्रियर्सन ने इसी को (1533 ई०) जन्मकाल माना है। सरोज में राम भूषण और अलंकार चन्द्रिका नामक इनकी दो कृतियों का उल्लेख हुआ है। विजयेन्द्र जी ने जाने किस आधार पर अलंकार चन्द्रिका का रचनाकाल सं० 1670 दिया है। गोप बहुत परवर्ती कवि हैं। गोपा की भी कृतियों के अनुपलब्ध होने का उल्लेख इन विद्वान लेखकों ने किया है। स्नातक जी ने गोप की भी कृतियों के अनुपलब्ध होने का उल्लेख किया है, जबकि पृष्ठ 175-76 पर गोप की

दो कृतियों के हस्तलेखों का ओरछा राज्य के पुस्तकालय में उपलब्ध होने का स्पष्ट उल्लेख है। स्पष्ट है कि इस खंड के प्रधान सम्पादक डा० नगेन्द्र ने अपने उत्तर-दायित्व का पूर्ण निर्वाह नहीं किया है, नहीं तो विभिन्न लेखकों के परस्पर विरोधी कथनों का समावेश इस वृहत् इतिहास में न होने पाता।

डा० ओम प्रकाश ने पृष्ठ 455-56 पर गोप का जो विवरण दिया है, वह भी अद्यतन नहीं है। सभा की खोज रिपोर्टों में इस कवि के सम्बन्ध में जितनी सूचना दी गई है, उसका भी समावेश इसमें नहीं हो सका है। लगता है इसको सम्पादक ने देखा ही नहीं। खोज में गोप की दो कृतियाँ मिली हैं। एक का नाम है 'पिंगल प्रकरण'। इस ग्रंथ का विवरण 1906 ईस्वी की खोज रिपोर्ट में 39वीं संख्या पर है। यह ग्रंथ 6 उल्लासों में विभक्त है। गोप के इस ग्रंथ का उल्लेख इस वृहत् इतिहास में नहीं हुआ है। दूसरा ग्रंथ है 'रामालंकार'। इसका विवरण खोज रिपोर्ट 1906/39 ए एवं 1947/77 पर हुआ है। वृहत इतिहास में गोप के तीन ग्रंथ स्वीकृत हैं—रामालंकार, रामचन्द्र भूषण और रामचन्द्राभरण। इनमें रामचन्द्रभूषण एवं रामचन्द्राभरण की हस्तलिखित प्रतियाँ टीकमगढ़ ओरछा के राज पुस्तकालय में हैं। रामचन्द्राभरण के प्रारम्भ में कवि ने अपनी वंशावली और अपने आश्रयदाता ओरछा नरेश पृथ्वी सिंह का वर्णन किया है। इस वंशावली एवं आश्रयदाता के विवरण का उपयोग वृहत् इतिहास में नहीं किया गया है। खोज में प्राप्त रामालंकार के भी प्रारम्भ में कवि वंशावली एवं आश्रयदाता वर्णन है—

दच्छिन ते दीक्षित प्रगट नंदनाथ अवतार
रामकृष्ण तिनके तनय गोकलस्थ सरदार 2
तिनके सुत बलभद्र जू जप तप जज्ञ सुभाइ
बल्लभ कुल प्रभु जगत गुरुपूजो जिनके पाइ 3
कंचन के पंचहड़ दई अरु लदाउ को ठाम
भट्टनि मनि सबते सरस महापात्र तुव नाम 4
तिनके सुत जदुनाथ कवि पंडित परम प्रवीन
राम विलास प्रकास कर सदा भागवत लीन 5
तिनके प्रगटे तीन सुत जेठे केसवराय
मझले सुत कवि गोप जू, बालकृष्ण लघु भाय 6
नगर ओरछे आइके, पृथीसिंह नृप पास
बैठि जज्ञशाला सरस कीन्हें ग्रंथ प्रकास 7

रामालंकार, रामचन्द्र भूषण और रामचन्द्राभरण एक ही ग्रंथ के तीन नाम हैं। दोहे के पूर्वार्द्ध में अलंकार लक्षण है और उत्तरार्द्ध में रामचरित के आधार पर उदाहरण। इसीसे ग्रंथ के ये नाम हैं। हो सकता है अलंकार चन्द्रिका भी इस ग्रंथ का एक अन्य नाम हो।

वृहत् इतिहास में रामालंकार का रचनाकाल सं० 1773 दिया गया है। पृथ्वी सिंह का शासन काल सं० 1793-1809 है। यही गोप का रचनाकाल है। ग्रंथ की रचना 1793 के पश्चात ही किसी समय हुई। अतः सं० 1773 अशुद्ध है।

करनेस

करनेस अकबरी दरबार के कवि हैं। सरोज के अनुसार इन्होंने कर्णाभरण, श्रुति भूषण और भूप भूषण नामक ये तीन ग्रन्थ बनाये हैं। इन तीनों ग्रन्थों को आज तक किसी ने नहीं देखा। डा० सत्यदेव चौधरी ने भी पृष्ठ 74 पर इन ग्रन्थों के अनुपलब्ध होने की चर्चा की है। इसी ग्रन्थ में पृष्ठ 443, 445 पर डा० ओमप्रकाश ने भी इनके अनुपलब्ध होने की बात लिखी है। पर पृष्ठ 166 पर डा० विजयेन्द्र स्नातक इनका वर्णन इस ढंग से करते हैं जैसे उन्होंने इन्हें देखा हो। वे लिखते हैं—

"करनेस कवि रचित 'करणाभरण' श्रुति भूषण' और 'भूप भूषण' अलंकार शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले ग्रंथ हैं, जो रीति परम्परा का निर्वाह करते हुये भी रीतिशास्त्र की किसी प्रभावशाली शैली का प्रवर्तन नहीं करते। इनकी शैली संस्कृत की छायानुवादमयी एवं अपूर्ण ही बनी रही।"

डा० स्नातक ने आगे पृष्ठ 167 पर अकबरी दरबार के कवियों की सूची प्रस्तुत करने वाला यह सवैया उद्धृत किया है—

पाय प्रसिद्ध पुरंदर ब्रह्म सुधारस अमृत अमृत बानी
गोकुल गोप गोपाल करनेस गुनी, गुन सागर गंग सुजानी
जोध जगन्न जगे जगदीश जगामग जैन जगत्त है जानी
कोरे अकबर सों न कथी, इतने मिलि के कविता जू बखानी

इस छंद के पाय, करनेस, सुजानी, जगे, जैन शब्दों का पाठ भ्रष्ट हो गया है। 'पाय' तो प्रसिद्ध कवि 'पूषी' के नाम का भ्रष्ट रूप है। 'करनेस' के स्थान पर 'गनेस' पाठ है। स्नातक जी ने 'करनेस' को अकबरी दरबार का कवि सिद्ध करने के लिये 'गनेस' के स्थान पर रखकर छंदोभंग भी कर दिया है। 'सुजानी' के स्थान पर 'सुज्ञानी' पाठ है, जो सम्भवतः मुद्रण दोष है। इसी प्रकार 'जगे' और 'जैन' के स्थान पर मूल पाठ 'जमे' और 'जैत' है। ये भी मुद्रण दोष प्रतीत होते हैं।

आगे स्नातक जी पुनः स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं—

"अलंकारों का वर्णन करने वाले करनेस कवि ने 'करणाभरण' 'श्रुतिभूषण' और 'भूप भूषण' की रचना इन्हीं ग्रंथों ('चन्द्रालोक' और 'कुवलयानंद') के आधार पर की थी।" —पृष्ठ 167

इन दोनों स्थलों पर वृहत् इतिहास में 'करणाभरण' 'श्रुतिभूषण' के स्थान पर 'करणाभरण श्रुतिभूषण' छपा है। यदि यह मुद्रण दोष नहीं है तो क्या डा० स्नातक 'करणाभरण श्रुतिभूषण' को किसी एक ग्रंथ का नाम मानते हैं। यदि ऐसा है, तो

घोर अनुचित है, ठीक वैसे ही जैसे किसी एक व्यक्ति का नाम 'विश्वनाथ जगपति' नहीं हो सकता। अनुक्रमणिका में भी 'करणाभरण श्रतिभूषण' को एक नाम समझा गया है। धन्य है। पृष्ठ 167 पर 17 वीं शती के रीतिग्रंथों की सूची में भी करणा-भरण श्रतिभूषण के बीच विराम नहीं दिया गया है। इस सूची में करनेस के इन ग्रंथों का रचनाकाल सं० 1637 दिया गया है। आज तक ये ग्रन्थ नहीं देखे गये, फिर भी न जाने किस आधार पर इनका यह रचनाकाल दे दिया गया है।

करनेस केशव से पूर्ववर्ती हैं। यह कथन हिन्दी साहित्य के इतिहासों में निराधार किया जाता रहा है और इस वृहत् इतिहास में भी किया गया है। डा० स्नातक ने तो इनका रचनाकाल ही न जाने कहाँ से सं० 1637 दे दिया है। डा० सत्यदेव चौधरी ने पृष्ठ 303 पर एवं डा० ओम प्रकाश ने पृष्ठ 442 पर करनेस की रचनाओं को केशव की रचनाओं का पूर्ववर्ती माना है। डा० ओम प्रकाश ने अवश्य कर्णाभरण और श्रुति भूषण के बीच अल्प विराम लगाकर उनकी पृथकता स्वीकार की है।

मेरा अनुमान है कि करणाभरण, श्रुति भूषण और भूप भूषण एक ही ग्रन्थ के तीन नाम हैं। करणाभरण का प्रर्याय श्रति भूषण है। करणाभरण में करण कवि का नाम सूचित करता है और 'श्रति भूषण' में श्रुति भी इसी कार्य को गूढ़ ढंग से संके-तित करता है। किसी भूप, सम्भवत: अकबर से सम्बन्धित होने के कारण ग्रंथ का नाम 'भूप भूषण' पड़ा। करनेस को एक ही विषय पर तीन-तीन ग्रंथ रचने की ऐसी कौन-सी आवश्यकता थी।

मेरा यह भी अनुमान है कि करनेस का यह ग्रन्थ केशव की रसिक प्रिया (सं० 1648) एवं कवि प्रिया (सं० 1658) का परवर्ती है और सम्भवत: केशव के ग्रन्थ की विशेष कद्र देखकर ही प्रस्तुत किया गया। इस ग्रन्थ को तब तक केशव की पूर्ववर्ती रचना न माना जाना चाहिये, जब तक वैसा मानने के लिये कोई पुष्ट आधार न हो।

रीतिकाल के पूर्ववर्ती एक अन्य कवि—सेनापति

सेनापति जी का केवल एक काव्य ग्रन्थ 'कवित्त रत्नाकर' मिलता है। इसकी रचना सं० 1706 में हुई थी :

संवत सत्रह सौ छ में, सेइ सियापति पाइ
सेनापति कविता सजी, सज्जन सजौ सहाइ

शिवसिंह सरोज में 'कवित्त रत्नाकर' का उल्लेख नहीं हुआ है। इसमें सेना-पति के एक अन्य ग्रन्थ 'काव्य कल्पद्रुम' का उल्लेख हुआ है। हो सकता है यह 'कवित्त रत्नाकार' का ही अन्य नाम हो। यदि यह 'काव्य कल्पद्रुम' से भिन्न काव्य ग्रन्थ है, तो इसे आज तक किसी ने देखा नहीं। परन्तु डाक्टर नगेन्द्र इसका उल्लेख इस प्रकार करते हैं, जैसे उन्होंने इसे देखा हो अथवा उन्हें इसकी जानकारी हो। वे लिखते हैं :

"केशव के उपरांत दूसरा महत्वपूर्ण नाम प्रसिद्ध कवि सेनापति का है, जिन्होंने 'कल्पद्रुम' में काव्य के अंग-उपांगों का विवेचन किया है। 'काव्य कल्पद्रुम' अप्राप्त है परन्तु उसके नाम और एकाध स्थान पर उसके प्रति किये गए संकेतों से अनुमान किया जाता है कि वह काव्य प्रकाश की शैली का काव्य की सम्पूर्ण रीतियों पर प्रकाश डालने वाला ग्रन्थ होगा।" —पृष्ठ 154-55

ग्रन्थ अप्राप्त है, इसलिए डा० नगेन्द्र ने उसे देखा हो यह तो असम्भव है; पर उसके प्रति किये गए जिन संकेतों से उन्होंने इसके सम्बन्ध में जो भी अनुमान कर रखा है, उन संकेतों का हवाला तो सर्वसाधारण के लिए सुलभ कर ही देना चाहिए था। योजना में स्पष्ट लिखा गया है कि, 'प्रत्येक निष्कर्ष के लिए प्रमाण तथा उद्धरण आवश्यक होंगे।"

इस ग्रन्थ के पृष्ठ 167-68 पर सत्रहवीं शती के 18 रीति कवियों का कालक्रम से नामोल्लेख हुआ है। सूची के अन्तिम कवि सेनापति हैं। इनके ग्रन्थ का नाम 'षट् ऋतु वर्णन' और उसका रचनाकाल सं० 1700 दिया गया है। सेनापति ने 'षट् ऋतु वर्णन' नामक कोई ग्रन्थ नहीं लिखा। हाँ, कवितरत्नाकर की तीसरी तरंग में षड् ऋतु वर्णन अवश्य हुआ है। जैसाकि ऊपर उल्लेख हुआ है, इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० 1706 है, न कि 1700। अतः इस ग्रन्थ का उल्लेख सत्रहवीं शती की रचनाओं में न होना चाहिए। इस प्रकरण को डा० विजयेन्द्र स्नातक ने लिखा है। इसे उनका ग्रन्थ-सूची को विस्तृत करने का अति उत्साह ही कहा जायगा।

डा० बच्चन सिंह ने 'रीतिकालीन कवियों की सामान्य विशेषताएँ' प्रकरण प्रस्तुत किया है। इस प्रकरण के 'ऋतु वर्णन' वाले विभाग में वे लिखते हैं—

"निरपेक्ष ऋतु वर्णन के लिए आवश्यक है कि कवियों में चित्रोल्लेखन की पूर्ण क्षमता हो। भक्तिकालीन कवि सेनापति के ऋतु वर्णन की भी यही विशेषता है। —पृष्ठ 205

इस सम्बन्ध में यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि सेनापति के सम्बन्ध में व्यक्त उक्त मंतव्य अति व्याप्ति दोष से युक्त है। सेनापति के कुछ इने-गिने कवित्त ही ऐसे हैं जिनमें निरपेक्ष ऋतु वर्णन हुआ है, उनके भी अधिकांश कवित्त उद्दीपन विभाव की दृष्टि से लिखे गए हैं अथवा वे अलंकरण प्रधान हैं।

इसी अध्याय में डा० बच्चन सिंह कवित्त छंद के विकास का विवरण प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं "सवैया की भाँति कवित्त का प्रयोग पहले पहल अकबर के समकालीन कवियों—नरोत्तम दास, गंग, बीरबल, तुलसीदास आदि की रचनाओं में मिलता है। केशव और सेनापति ने—विशेष रूप से सेनापति ने कवित्त को विकसित किया।" —पृष्ठ 223

सेनापति को पुनः यहाँ अनावश्यक महत्व दिया गया है। सेनापति के कवित्त निश्चय ही बहुत साफ सुथरे हैं, पर कवित्त को विशेष रूप से विकसित करने का श्रेय उन्हें नहीं दिया जा सकता। सेनापति ने सं० 1706 में कवित्त रत्नाकार रचा था,

केशव की रसिक प्रिया की रचना उससे 58 वर्ष पूर्व सं० 1648 में हो चुकी थी और इसी समय के लगभग गंग और बीरबल 'ब्रह्म' अपने कवित्तों के लिए परम प्रख्यात हो रहे थे। ऐसी स्थिति में सेनापति को कवित्त के विकसित करने का श्रेय कत्तई नहीं दिया जा सकता।

सर्वांग निरूपक आचार्य

इस अध्याय में 1. केशव, 2. चिन्तामणि, 3. कुलपति मिश्र, 4. पदुमनदास, 5. देव, 6. सूरत मिश्र, 7. कुमार मणि शास्त्री, 8. श्रीपति, 9. सोमनाथ, 10. भिखारीदास, 11. जनराज, 12. जगतसिंह, 13. रसिक गोविन्द, 14. प्रताप साहि, 15. ग्वाल का विवरण है। इनमें से पदुमनदास और जनराज नए कवि हैं।

1. केशवदास—केशव के सम्बन्ध में लिखा है कि 'ओरछा नरेश महाराज इंद्रजीत सिंह केशव को अपना गुरू मानते थे।' इन्द्रजीत सिंह ओरछा नरेश रामसिंह के अनुज और कछौआ के जागीरदार थे, न कि ओरछा-नरेश। तुंगारण्य को मुद्राराक्षसों ने 'तुंगार राय' बना दिया है, जो अनभिज्ञों के लिए प्रमाण बन सकता है।

प्रवीण राय को दुनिया केशव की शिष्या एवं इन्द्रजीत सिंह की प्रिया के रूप में जानती है, पर वृहत् इतिहास में उसे केशव की 'प्रेयसी एवं शिष्या' कहा गया है (पृष्ठ 306)। यह विद्वानों की सम्भवतः हिन्दी संसार को नई सूचना है।

आचार्य चन्द्रबली पांडेय कृत 'केशवदास' की रचना के पश्चात समझा गया था कि केशव के कुदिन गए, पर वृहत् इतिहास वालों की अकृपा अब भी उन पर बनी हुई है। उनके काव्य पर अनेक दोष मढ़े गए हैं :

1. इनका रचयिता रसिक होता हुआ भी रस का समुचित परिपाक करने में पूर्ण रीति से समर्थ नहीं हो पाया।

2. अभिव्यंजना की दृष्टि से केशव का समग्र साहित्य शिथिल ही कहा जायगा। उसमें न तो भावों के अनुकूल गुण और रीति का उपयोग किया गया और न शब्दों का ही यथार्थ प्रयोग हुआ है।

3. छंदों में अनगढ़पन है।

4. न्यून पदत्व और अधिक पदत्व दोषों से इनमें और भी भोंड़ापन आ गया है।

2. चिन्तामणि—परम्परा के अनुसार चिन्तामणि को नागपुर के भोंसला राजा मकरन्दशाह का आश्रित कहा गया है। (पृष्ठ 311)। चिन्तामणि के समय तक नागपुर पर मराठों का आधिपत्य नहीं हो पाया था और न नागपुर में उस समय इस नाम का कोई राजा था। चिन्तामणि ने अपना पिंगल ग्रन्थ साहि मकरन्द के आदेश से बनाया था। यह इस ग्रन्थ से सिद्ध है। यह साहि मकरन्द नागपुर के राजा थे, इसका कोई प्रमाण नहीं। मेरा खयाल है कि यह साहि मकरन्द वही हैं, जिन्हें इतिहास मालो जी के नाम से जानता है और भूषण ने 'शिव भूषण' में जिनका नाम माल मकरन्द दिया है।

भूमिमाल तिनमें भयो बड़ौ मकरन्द

यह माल मकरन्द शिवाजी के पितामह थे।

खोज (1920/31) में 'चिन्तामणि का 'कवित्त विचार' नामक एक और ग्रंथ मिला है, जिसका उल्लेख वृहत् इतिहास में नहीं हो पाया है।

3. कुलपति मिश्र—कुलपति मिश्र के पाँच ग्रन्थों का नाम दिया गया है—

1. द्रोणपर्व, 2. संग्राम सार, 3. नखशिख, 4. मुक्तितरंगिणी, 5. रस रहस्य

द्रोणपर्व कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है, संग्राम सार का एक अंश है, उसका सोलहवाँ परिच्छेद है, 'मुक्तितरंगिणी'। यह अशुद्ध नाम है। इसका ठीक नाम 'युक्ति-तरंगिणी' है। यह नव रस सम्बन्धी ग्रन्थ है। इसकी रचना सं० 1743 में हुई थी—

3 4 7 1
गुण रु वेद रिषि ससि बरस, सावन सुदि की तीज
कीनी 'जुगति तरंगिनी' तन मन हरि रस भीज

खोज में (1912/100, 1941/480) इनका एक ग्रन्थ 'दुर्गा भक्ति चन्द्रिका' (रचनाकाल सं० 1749) मिला है। इसका उल्लेख इस वृहत् इतिहास में नहीं हो सका है।

संग्रामसार से कुलपति के पिता परशुराम, पितामह हरिकृष्ण, प्रपितामह मयलाल, प्रप्रपितामह तारापति और प्र प्र प्र पितामह अभयराज मिश्र के नाम ज्ञात होते हैं। इस सारी सूचना का भी समावेश इस वृहत् इतिहास में नहीं हो पाया है।

'नखशिख' को मूलतः नायक-नायिका भेद का ग्रन्थ कहा गया है, जो किसी भी तरह मान्य नहीं—

"कुलपति ने 'नखशिख' नामक एक अन्य ग्रन्थ का भी निर्माण किया है, जो मूलतः नायक-नायिका भेद का ही ग्रन्थ है।" —पृष्ठ 320

4. देव—देव के ग्रन्थों में 'देव माया प्रपंच' नाटक की गणना की गई है। यह किसी दूसरे देव की रचना है। ग्रन्थ के निम्नांकित दोहे में आया 'व्यास' संदेह बढ़ाने के लिए पर्याप्त है :

भ्रमत फिर्‌यो हौं आजु लौं, जग मृगतृष्णा प्यास
श्री धन सोभा सिन्धु की लहरि पियाई व्यास
जय जय जय राधा रमन, जय जय श्री जदुराइ
हृदै बसौ कवि देव के सतसंगति के पाइ

पृष्ठ 337 पर जाति विलास में वर्णित पथिक तिय, बनजारिन, जोगिन, नटनी और 'कुघेरनी' का उल्लेख है। 'कुँदेरिनी' मुद्रा दोष से 'कुघेरनी' बन गई है।

5. सूरति मिश्र—सूरति मिश्र के निम्नांकित 11 ग्रंथों का नाम इस ग्रंथ में दिया गया है :

1. अलंकार माला, 2. रस माला, 3. सरस रस, 4. रस गाहक चंद्रिका, 5. नखशिख, 6. काव्य सिद्धांत, 7. रस रत्नाकर, 8. अमर चंद्रिका (बिहारी सतसई

की टीका), 9. कविप्रिया की टीका, 10. रसिक प्रिया की टीका, 11. वैताल पंचविंशति का ब्रज भाषा अनुवाद।

इनमें से 4 और 10 संख्यक ग्रंथ एक ही हैं। रसिक प्रिया की टीका सं० 1791 में जहानाबाद (दिल्ली) के नसरुल्ला खाँ, उपनाम रस ग्राहक, के लिए हुई थी, इसीलिए इसका यह नाम है। इसी का एक नाम जोरावर प्रकाश भी है। इसी प्रकार 'रस माला' और 'रस रत्नाकर' भी एक ही ग्रंथ है। 'सरस रस' सूरति मिश्र की रचना नहीं है। इनके शिष्य जयपुर निवासी राय शिव सहाय दास की रचना है।

इन ग्रंथों के अतिरिक्त सूरति मिश्र के निम्नांकित ग्रंथ और भी खोज में मिले हैं :

1. छंद सार 1941/293 ख, 2. प्रबोध चन्द्रोदय नाटक 1941/293 क, 3. भक्त विनोद 1917/189 बी, 4. शृंगार सार 1932/213, 5. श्रीनाथ विलास, 6. कृष्ण चरित्र, 7. भक्तमाला, 8. कामधेनु, 9. रास लीला, 10. दान लीला।

इनमें से 5-8 का उल्लेख शृंगार सार (रचना काल सं० 1785) में हुआ है।

सूरति मिश्र वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी थे, क्योंकि इन्होंने भक्तमाल में वल्लभाचार्य के शिष्य भक्तों का ही विवरण दिया है।

खोज में सूरति मिश्र के कुल 15 ग्रंथ मिल चुके हैं और वृहत् इतिहास के विद्वान लेखक लिखते हैं—"इनके ग्रंथों में से संप्रति एक भी उपलब्ध नहीं है। केवल एक छंद आचार्य शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में उद्धृत किया है जिसके आधार पर किसी प्रकार का निर्णय देना हमारे लिए कठिन है। आचार्यत्व के संबंध में भी यही स्थिति है।" —पृष्ठ 341

इस ग्रंथ में सूरति मिश्र के सम्बन्ध में सबसे अधिक दिवालियापन दिखाया गया है। इस कवि का केवल एक छंद इसके विद्वान लेखक और उससे भी विद्वान सम्पादक को मिला। खोज रिपोर्टों में इस कवि के अनेक छंद देखे जा सकते हैं। शिवसिंह सरोज में इनके चार छंद हैं, प्राचीन संग्रहों में भी इनके छंद विकीर्ण हैं। बहुत पहले प्रो० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र ने सरस्वती में सूरति मिश्र पर एक विस्तृत परिचयात्मक एवं समीक्षात्मक लेख लिखा था. उसका भी सदुपयोग किया जा सकता था।[1] पर लगता है जैसे पहले के शोध निबंधों एवं लेखों का सदुपयोग न करने की सौगंध इन विद्वान लेखकों ने खा ली है।

6. कुमार मणि—'रसिक रंजन' को 'कतिपय आर्या सप्तशतियों' का संकलन कहा गया है। यह 700 आर्याओं का संकलन है, न कि 'कतिपय आर्या सप्तशतियों' का।

7. सोमनाथ—वृहत् इतिहास में सोमनाथ जी के निम्नांकित 9 ग्रंथों का उल्लेख हुआ है :

---

1. "हिन्दी साहित्य का अतीत', भाग 2 में संकलित, पृष्ठ 445-54।

1. रस पियूषनिधि, 2. शृंगार विलास, 3. कृष्ण लीलावती, 4. पंचाध्यायी, 5. सुजान विलास, 6. माधव विनोद।

इनके अतिरिक्त इन्होंने रामचरित्र रत्नाकर (1917/179 डी ई) नाम से वाल्मीकि रामायण का और ब्रजेंद्र विनोद नाम से श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध का अनुवाद (1917/179 ए) तथा ध्रुव चरित्र (1917/179 बी), रामकलाधर (1917/179 सी) आदि अन्य ग्रंथ भी लिखे थे जिनका समावेश सोमनाथ जी की ग्रंथ सूची में अवश्य होना ही चाहिए था।

8. जगतसिंह—जगतसिंह के तीन ग्रंथों का नाम दिया गया है—1. साहित्य सुधानिधि, 2. चित्र मीमांसा, 3. रस मृगांक। इनमें भी परिचय केवल प्रथम का दिया गया है। खोज में इनके निम्नांकित 9 ग्रंथ और मिले हैं, जिनकी नामावली का समावेश यहाँ होना चाहिए था :

1. अलंकार साठि दर्पण 1923/179 ए—60 अलंकारों का वर्णन
2. उत्तम मंजरी 1923/179 ओ—विहारी के 18 दोहों की टीका
3. जंगत प्रकाश (नखशिख वर्णन) 1923/179 सी
4. जगत विलास 1926/192 ए, रसिक प्रिया की टीका
5. नायिकादर्श 1923 179 ई, नखशिख
6. नखशिख 1923/179 सी
7. भारती कंठाभरण 1923/179 बी, 1949/106 क। पिंगल।
8. रत्नमंजरी कोष 1923/179 एल।
9. रामचन्द्र चन्द्रिका 1923/179 एफ। रामचन्द्रिका की टीका।

9. प्रतापसाहि—प्रतापसाहि के ग्रन्थों में 'जयसिंह प्रकाश' नामक एक ग्रन्थ का उल्लेख हुआ है। इनका रचना काल सं० 1880-1900 स्वीकार किया गया है। जयसिंह प्रकाश की रचना सं० 1852 में हुई थी—

1 8 5 2
संबत ससि बसु सर नयन, माघ मास सित वार
सुकुल पच्छ तिथि पंचमी यहै ग्रन्थ अवतार

खोज रि० 1906/91 ए

यह साहित्यिक ग्रन्थ न होकर ज्योतिष का ग्रंथ है और मुझे इसके प्रसिद्ध प्रतापसाहि की रचना होने में पूर्ण सन्देह है। चरखारी में भी एक जयसिंह हुए हैं, जो प्रतापसाहि के आश्रयदाता विक्रमसाहि तथा रतनसिंह के पश्चात 1937-63 में चरखारी के शासक रहे और उक्त ग्रंथ के रचनाकाल के प्राय: 100 वर्ष बाद हुए।

10. ग्वाल—ग्वाल के 9 ग्रंथों का उल्लेख वृहत् इतिहास में हुआ है। पर जिस ग्रंथ के कारण ग्वाल सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं, उस यमुना लहरी की यहाँ चर्चा ही नहीं है। यहाँ तो केवल 'अलंकार भ्रम भंजन' और 'रस रंग' पर जूठे विचार हैं।

सर्वांग निरूपक आचार्यों के न तो सम्पूर्ण ग्रंथों का परिचय दिया गया है और न उनकी पूर्ण तालिका ही। मुझे इस बात का भी विश्वास नहीं कि इन कवियों का विवरण पुनः सातवें भाग (रीति मुक्त) में प्रस्तुत किया जायगा। इस प्रकार इन कवियों का विवरण अधूरा जा रहा है। इसमें इनका दोष केवल इतना ही है कि इन्होंने कुछ रीति बद्ध ग्रंथ भी लिख दिए।

रस निरूपक आचार्य

1. लाल कवि—लाल कवि के विष्णु विलास का रचनाकाल शृंगार निरूपक ग्रंथों की सूची में पृष्ठ 387 पर सम्वत 1850 दिया गया है और पृष्ठ 428 पर सं० 1860। विनोद एवं शुक्ल जी के इतिहास में विष्णु विलास को छत्र प्रकाश के रचयिता ओरछा नरेश प्रसिद्ध छत्रसाल के पुरोहित गोरेलाल उपनाम लाल कवि की रचना माना गया है।

लाल कवि का जन्म सं० 1715 के लगभग हुआ था और उन्होंने छत्र प्रकाश की रचना सं० 1764 के आसपास की। अतः इनका समय सं० 1800 के पूर्व ही है। ऐसी दशा में विष्णु विलास का रचनाकाल सं० 1850 कदापि नहीं हो सकता। यदि विष्णु विलास किसी अन्य लाल की रचना है, तो इसका रचनाकाल सं० 1850 भी हो सकता है। पर इसके किसी अन्य लाल की रचना होने का प्रमाण दिया जाना चाहिए। गोरे लाल का बरवै नामक एक ग्रन्थ खोज रिपोर्ट 1906/48 ए में उल्लिखित है और शुक्ल जी के अनुसार विष्णु विलास बरवै में विरचित नायिका भेद का ग्रन्थ है। ऐसी स्थिति में विणु विलास सुप्रसिद्ध गोरे लाल उपनाम लाल की ही कृति है और वृहत् इतिहास में दिया इसका समय सं० 1850 लगभग 100 वर्षों से अशुद्ध है।

2. सुखदेव मिश्र—सुखदेव मिश्र के केवल वृत्त विचार का रचनाकाल सं० 1728 दिया गया है। इनके अध्यात्म प्रकाश का रचनाकाल सं० 1755 एवं फाजिल अली प्रकाश का 1733 है। शृंगार लता सुखदेव जी के ग्रन्थों में परिगणित है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार यह सुखदेव मिश्र के किसी वंशज की रचना है। संस्कृत में भी किसी सुखदेव मिश्र ने शृंगार लता नामक एक ग्रन्थ रचा है। कुछ पता नहीं दोनों शृंगार लताएँ एवं दोनों सुखदेव मिश्र अभिन्न हैं अथवा भिन्न भिन्न।

3. करन कवि—रस कल्लोल के रचयिता करन कवि को शुक्ल जी के इतिहास के आधार पर षटकुल भरद्वाज गोत्रीय पांडेय कहा गया है। करन तैलंग ब्राह्मण थे। इनके काव्य गुरु निहाल थे। यह निहाल षटकुल भरद्वाज गोत्रीय पांडेय थे, न कि स्वयं करन भट्ट—

षट कुल पांड़े पहितिया, भारद्वाजी बंस
गुननिधि पांइ निहाल के बंदौं जगत प्रसंस

इसी प्रकार करन भट्ट के बाप का नाम श्रीधर दिया गया है। यह भी अशुद्ध

है। इनके बाप का नाम बंशीधर था। करन ने सम्वत 1794 में 'साहित्य चन्द्रिका' नाम से बिहारी सतसई की टीका की थी।

4 9 7 1
वेद खंड गिरि चंद्र गनि भाद्र पंचमी कृष्ण
गुरु बासर टीका करन पूर्यो ग्रन्थ कृतष्ण

वृहत् इतिहास में रस-कल्लोल का रचनाकाल सं० 1757 के आसपास स्वीकृत है, जो एकदम भ्रांत है। इस इतिहास में छत्रसाल की मृत्यु-सम्बन्धी करुण रस के एक छंद होने का उल्लेख है। छत्रसाल की मृत्यु सं० 1788 में हुई। अतः यह ग्रन्थ 1788 के बाद रचा गया। इस इतिहास में करन को पन्ना नरेश हिन्दू पति का आश्रित कहा गया है। हिन्दूपति का शासनकाल संवत 1813-34 है। फिर रस कल्लोल का रचनाकाल सं० 1757 के आसपास कैसे हो सकता है ?

4. कृष्णभट्ट देवऋषि—कृष्ट भट्ट के सम्बन्ध में लिखा गया है "कृष्ण भट्ट देवऋषि के सम्बन्ध में अधिक विवरण प्राप्त नहीं हो सका।" यह सम्पादक एवं लेखक का और उससे बढ़कर हिन्दी साहित्य के इस वृहत् इतिहास एवं इससे लाभ उठाने वाले अध्येताओं का दुर्भाग्य है। अक्तूबर 1925 की माधुरी में "कवि चर्चा" के अन्तर्गत 'कवि कलानिधि श्री कृष्णभट्ट (लाल)' शीर्षक निबंध है। इसके लेखक कवि के वंशज देवर्षि भट्ट मनमोहन शर्मा हैं। इस कवि के 16 ग्रन्थ खोज में मिल चुके हैं, पर केवल एक 'शृंगार रस माधुरी' का नाम एवं विवरण इस इतिहास में दिया गया है। यह ग्रन्थ बूँदी नरेश रावराजा बुद्ध सिंह के लिए सं० 1769 में प्रस्तुत किया था। इस इतिहास में 'बिंदवती' नाम दिया गया है, जो बूँदी का सूचक है। बूँदी लिख देने से सभी जान जाते, बिंदवती को कौन समझता है ? पर उद्धृत छंद में बिंदवती ही है :

'गुन सौं अगरी सगरी नगरी अधिराज विराजत बिंदवती

बेचारा लेखक क्या करता। उसने मक्षिका स्थाने मक्षिका रख दिया।

इनके अन्य ग्रन्थ हैं—राम रासा, अलंकार कलानिधि, साँभर युद्ध, जयसिंह गुण सरिता, श्री मद्भागवत की अनन्यानन्दिनी टीका, बिहारी सतसई की विश्व प्रकाश टीका नखशिख, वृत्तचन्द्रिका, राधा गोविन्द संगीत सार, रामायण सूचनिका, राम चन्द्रोदय, दुर्गाभक्ति तरंगिणी, नवसई, फुटकर कवित्त, समस्या पूर्ति।

इस इतिहास में कवि का परिचय तो नहीं के बराबर है।

5. रसलीन—रसलीन का जन्म सं० 1747 के लगभग माना जाना चाहिए, ऐसा वृहत् इतिहास का मत है। रसलीन का जन्म 1111 हिजरी में 2 मोहर्रम, (20 जून 1699 ई० सं० 1756 ज्येष्ठ) को हुआ था। स्पष्ट ही जन्मकाल में 10 वर्ष की भूल है। उक्त तिथि रसलीन के चचेरे मामा मीर जलील द्वारा लिखित 'नूर चश्मे बाकरे अब्दुल हमीदम' से निकलती है। इनका मृत्युकाल सन् 1163 हि० (1807 वि०) दिया

गया है, जो ठीक है। इनकी मृत्यु उक्त हिजरी सन् में, 13 सितम्बर 1750 ई॰ को हुई थी।

6. अमेठी नरेश राजा गुरुदत्त सिंह 'भूपति'—भागवत भाषा इनका ग्रन्थ स्वीकार किया गया है, जो ठीक नहीं। यह गुरुदत्त कायस्थ की रचना है।

7. रघुनाथ बंदीजन बनारसी—इनके सम्बन्ध में एक वाक्य है—"इनके बनाए ग्रन्थ रसिक मोहन (अलंकार), जगत मोहन और इश्क महोत्सव भी माने जाते हैं।" यह वाक्य बड़ा लचर है, जैसे लेखक को विश्वास नहीं है कि ये ग्रंथ रघुनाथ के हैं।

8. समनेस—समनेस के तीन ग्रंथ माने गये हैं—काव्य भूषण, रसिक विलास, पिंगल। इनमें पिंगल ग्रंथ का नाग है 'पिंगल काव्य विभूषण'। इसी एक नाम को तोड़ कर दो ग्रन्थ स्वीकार कर लिया गया है। इस ग्रन्थ की रचना 1879 में हुई। ग्रंथ का नाम और रचनाकाल इस छन्द में है—

9 7 8 1

सम्वत निधि मुनि सिधि अवनि, राम नौमि रविवार।
पिंगल काव्य विभूषनहिं, किय समनेस तयार।

इतिहास में लिखा है—"इनका रचनाकाल 1879 तक रहा।" यह 1879 वस्तुतः पिंगल काव्य विभूषण का रचनाकाल है, जिसका उल्लेख वृहत् इतिहास में नहीं हुआ है।

9. बेनी प्रवीन—"बेनी प्रवीन वल्लभ सम्प्रदायी बंशीलाल के शिष्य थे, यह उल्लेख वृहत् इतिहास में हुआ है। बंशीलाल जी बल्लभ सम्प्रदाय के नहीं थे, राधा बल्लभ सम्प्रदाय के थे।

10. मंडन—न जाने किस आधार पर मण्डन का जन्मकाल 1690 दिया गया है। प्रमाण आवश्यक है।

11. मतिराम—शिवसिंह सरोज के अनुसार मतिराम ने "छंद सार पिंगल फतेसाहि बुन्देला श्रीनगर के नाम रचा।" छंदसार न तो प्रसिद्ध मतिराम की ही कृति है और न किसी फतेसाहि बुन्देला श्रीनगर नाम पर बना। यह मतिराम के ही सम-कालीन एक अन्य मतिराम की रचना है, जो सं॰ 1758 में सरूप सिंह बुन्देला के लिए रचा गया। सरोज के आधार पर वृहत् इतिहास में लिखा गया है कि श्रीनगर के फतेसाहि बुन्देला भी मतिराम के आश्रयदाता थे। उक्त वृहत् इतिहास का यह कथन भ्रमपूर्ण है।

पृष्ठ 440/51 पर अलंकार पंचाशिका (रचनाकाल सं॰ 1747) को किसी अन्य मतिराम की रचना माना गया है। यह अन्य मतिराम ही 'छन्दसार पिंगल' के भी रचयिता हैं।

12. यशोदा नन्दन—वृहत् इतिहास में बरवै में नायिका भेद लिखने वाले यशोदा नंदन का जन्मकाल सं॰ 1828 एवं नायिका भेद का रचना काल सं॰ 1872

दिया गया है। दोनों सम्वत भ्रष्ट हैं। सरोज में इनका समय सं० 1828 दिया गया है। इसे यहाँ जन्मकाल मान लिया गया है। यह वस्तुतः उपस्थितिकाल है। सरोज में रचनाकाल सूचक यह बरवै भी दिया गया है—

मैं लिखि लीनों चैतहि तेरसि पाइ
7 2 8 1
संवत हय बिधि करि कै ब्रह्म मिलाइ

इस बरवै से रचनाकाल सं० 1827 निकलता है। वृहत् इतिहास में जाने कहाँ से यह 1872 आ गया।

13. गिरिधर दास—भारतेंदु ने अपने पिता गिरिधर दास कृत अपूर्ण रस रत्नाकर को पूर्ण करने का असफल प्रयास किया था। इसमें उन्होंने नायिका के तीन भेद स्वकीया, परकीया, गणिका के स्थान पर कन्यका, स्वकीया, परकीया, कुलटा और गणिका ये पाँच भेद माने हैं। जो स्वकीया हो, वही बाद में परकीया हो सकती है। कन्यका स्वकीया नहीं है, अतः वह परकीया भी नहीं हो सकती। परकीया में किसी एक पर-पुरुष के प्रति दृढ़ानुराग होता है, कुलटा की दृष्टि अनेक की ओर होती है। अतः कुलटा को परकीया में नहीं सम्मिलित करना चाहिए। कुलटा सामान्या भी नहीं है, क्योंकि कुलटा का प्रेम पैसे पर नहीं बिकता। भारतेंदु की सूझ मौलिक ही नहीं है अकाट्य भी है। उनकी सूझ को निम्नांकित शब्दों में काटने का असफल प्रयत्न किया गया है—

"कुमारी का प्रिय रूप में अनुराग करना, बिना यह जाने कि वह उसका पति होगा या नहीं, उसे परकीयापन के लक्षण से युक्त कर देता है। इसी प्रकार सामान्या का उद्देश्य धन प्राप्ति होता है, प्रेम नहीं। कुलटा का उद्देश्य यह नहीं है। अतः कुलटा सामान्या नहीं। यदि उसमें प्रेम और आकर्षण नहीं, तो नायिका ही न होगी और यदि ये बातें हैं तो परकीया के भीतर आ जाती है, जैसा प्राचीन आचार्यों की धारणा है।"

अलंकार निरूपक आचार्य

1. भूषण—पृ० 451—भूषण को 'भूषण' की उपाधि चित्रकूट नरेश सोलंकी राजा हृदय राम से प्राप्त हुई थी, जो कि रुद्र के पुत्र थे। वृहत् इतिहास में रुद्र के द्वारा उपाधि मिलने का भ्रामक उल्लेख है—

कुल सुलंक, चित्रकूट पति, साहस सील समुद्र
कवि भूषन पदवी दई, हृदयराम सुत रुद्र

'हृदय राम सुत रुद्र' का अर्थ है 'हृदय राम ने, जो कि रुद्र के सुत हैं।' वृहत् इतिहास वालों ने संभवत इसका अर्थ 'हृदय राम के सुत रुद्र ने' कर लिया है।

भूषण की तीन रचनाओं का नाम दिया गया है—शिवराज भूषण, शिवा बावनी, छत्रसाल दशक। इनमें से शिवाबावनी और छत्रसाल दशक बहुत बाद के

सग्रह हैं जैसाकि 'भूषण' में प्रो० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने यह सिद्ध किया है। भूषण के ग्रंथों में इनकी गणना न होनी चाहिए। पुराने कवियों की रचनाओं के विविध नामों से जो संग्रह आज प्रकाशित हो रहे हैं, क्या हम पुराने कवियों की ग्रंथ-सूची में इनका नाम दे सकते हैं ?

2. दलपति राय वंशीधर—अलंकार रत्नाकर का रचना काल सं० 1792 दिया गया है, क्योंकि विनोद एवं शुक्ल जी के इतिहास में भी यही तिथि है। वस्तुतः इसका रचनाकाल सं० 1798 है, जैसाकि राजस्थानी भाषा और साहित्य में दिया गया है। दलपतिराय के आश्रयदाता उदयपुर नरेश जगत सिंह का शासनकाल सं० 1791-1808 है। एक हस्तलिखित प्रति में ग्रंथ का रचनाकाल सं० 1758 दिया गया है :

सतरे सै अंठावने माः पच्छ सित वार
सुभ वसन्त पांचैं भयो यहै ग्रन्थ अवतार

खोज रि० 1912/45

शोध निरीक्षक मिश्रबंधुओं ने जगत सिंह के शासन से मेल मिलाने के लिए 'अंठावने' का 'अठानवे' पाठ स्वीकार किया है, फिर भी वे विनोद में प्रमाद से 1798 न देकर 1792 दे गए हैं और उसी का यहाँ तक अंधानुकरण होता आया है।

3. बोधा—रघुनाथ बंदीजन के इश्क महोत्सव के प्रसंग में इश्क नामा के रचयिता प्रेमी कवि बोधा का जन्मकाल सं० 1804 दिया गया है। यह सम्वत सरोज से लिया गया है और कवि का रचनाकाल है। बोधा के आश्रयदाता पन्ना नरेश खेतसिंह का राज्यकाल सं० 1809-15 है। फिर 1804 बोधा का जन्मकाल कैसे हो सकता है ?

4. दत्त—दत्त के सम्बन्ध में लिखा गया है कि "दत्त ने सं० 1830 के आसपास लालित्यलता नाम की एक पुस्तक लिखी।"

लालित्यलता का रचनाकाल पौष सुदी 5 सं० 1791 है :

सम्वत सत्रह सै परे एकानवे प्रमान
यह लालित्यलता ललित रची पौस सुदि बान

खोज रि० 1903/55

5. ऋषिनाथ—ऋषिनाथ की अलंकार-मणि-मंजरी का रचनाकाल सं० 1831 दिया गया है। इस ग्रंथ की रचना सं० 1830 की वसंत पंचमी को सोमवार के दिन हुई थी :

0 3 8 1
सम्वत नभ संकर नयन सिद्धि बहुरि निसिकन्त
वार सोम, सुभ माघ सुदि तिथि पंचमी बसन्त

खोज रि० 1920/166

6. **रतन कवि**—रतन कवि के सम्बन्ध में निम्नांकित अशुद्ध सूचनाएँ दी गई हैं :

1. 'सरोज में इनका जन्मकाल सं० 1798 दिया गया है।' सरोज के प्रथम एवं द्वितीय संस्करणों में 1738 उपस्थिति काल दिया है। बाद के संस्करणों में 1798 हो गया है। इनके आश्रयदाता गढ़वाल नरेश फतहसाहि का शासनकाल सं० 1741-73 है।

2. शुक्ल जी ने इनका कविता काल 1830 माना है। शुक्ल जी का अनुमान भ्रमपूर्ण है। रतन का रचनाकाल सं० 1741-73 है।

3. इन्होंने सं० 1827 (शुक्ल जी के अनुसार) में अथवा सं० 1843 में (डा० भगीरथ मिश्र के अनुसार) अलंकार दर्पण नामक ग्रंथ रचा। अलंकार दर्पण के रचयिता रतन गढ़वाल वाले रतन से भिन्न हैं। अलंकार दर्पण वाले रतन ने पन्ना नरेश हिन्दू पति (शासनकाल सं० 1813-34) के लिए इस ग्रन्थ की रचना सं० 1827 में की थी :

7 2 8 1
सम्वत रिस भुज बसु परमेश्वर चरन चारु उर धारो
फागुन सुदि राका गति भद्रन सुर गुरुवार निवारो

खोज रि० 1906/103

7. **देवकी नन्दन शुक्ल**—देवकी नंदन के श्रृंगार चरित्र का रचनाकाल सं० 1841 दिया गया है। इसकी रचना सं० 1840 में वसन्त पंचमी को हुई थी :

सम्वत युग-निधि सैंकरा, वेद सुन्य सम जानि
माघ मास तिथि पंचमी रच्यो ग्रन्थ रसखान

खोज रि० 1909/65 ए

इसी प्रकार 'अवधूत भूषण' का रचनाकाल सं० 1857 दिया गया है। इनकी रचना सं० 1856 में हुई थी :

सम्वत जुग निधि सैंकरा, छप्पन बरस निहारि
क्वार मास सित पंचमी रच्यो ग्रन्थ बिसतारि

खोज रि० 1909/65 बी

8. **चन्दन**—शुक्ल जी के आधार पर चन्दन के एक ग्रन्थ 'तत्व संग्रह' का उल्लेख किया गया है। इसे दार्शनिक ग्रन्थ समझा गया है। वस्तुतः ग्रन्थ का नाम तत्व संज्ञा' है और यह एक प्रकार का कोष है। इसमें विभिन्न वस्तुओं की नाम सूची हैं यथा—पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय इत्यादि।

9. **रणधीरसिंह**—सिगरामऊ नरेश रणधीर सिंह के निम्नांकित 5 ग्रन्थों का नाम दिया गया है—1. काव्य रत्नाकर, 2. भूषण कौमुदी, 3. पिंगल, 4. नामार्णव, 5. रस रत्नाकर। इनमें से किसी का रचनाकाल नहीं दिया गया है। इनमें से 'पिंगल' और 'नामार्णव' वस्तुतः एक ही ग्रन्थ हैं। ग्रन्थ का नाम है 'पिंगल नामार्णव'। यह

एक साथ छन्दशास्त्र और कोष दोनों है । इसकी रचना सं० 1894 में हुई । (देखिए खोज 1906/316 ए, 1923/352 सी) । काव्य रत्नाकर खोज में नहीं मिला है । इनके अन्य दो ग्रन्थ शालिहोत्र और रागमाला हैं ।

10. गिरिधरदास—भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के पिता बाबू गिरिधरदास का जन्म पौष कृष्णा 15, सम्वत 1890 वि० को हुआ था । इस वृहत् इतिहास में भारती-भूषण का रचनाकाल सं० 18 0 दिया गया है । भारतीभूषण में रचनाकाल नहीं दिया गया है । गिरिधर दास जी का देहान्त सं० 1917 में 27 वर्ष की उम्र में हुआ था । यह रचना 1910- 17 के बीच किसी समय प्रस्तुत की गई रही होगी ।

काव्य कवि

1. बिहारीलाल—बिहारी सतसई की प्रथम टीका पर विचार करते समय वृहत् इतिहास में लिखा गया है :

"बिहारी के प्रथम टीकाकार कृष्ण कवि उनके पुत्र कहे जाते हैं । रत्नाकरजी ने भी कृष्ण कवि को बिहारी का ही पुत्र माना है । इस टीका में रचनाकाल सं० 1719 दिया हुआ है । किन्तु शोध से इसका निर्माणकाल 1780 के आसपास स्थिर होता है ।"

—पृष्ठ 515

1719 में टीका प्रस्तुत करने वाले कृष्ण बिहारी के पुत्र थे । 1780 के आस-पास (सं० 1782 में) कवित्तों वाली टीका प्रस्तुत करने वाले कृष्ण कवि से यह भिन्न हैं । यहाँ दोनों टीकाओं को एक समझ लिया गया है । यही भ्रांति पृष्ठ 530 पर पुनः की गई है ।

"दूसरी टीका विजयगढ़ के मान कवि (मान सिंह) की है ।"

—पृष्ठ 515

"विजयगढ़" अशुद्ध है । मान किसी 'विजयगढ़' नामक स्थान के रहने वाले नहीं थे । वे 'विजयगछ' थे, जो जैनों का एक सम्प्रदाय है जैसे 'तपागच्छ' ।

2. (शृंगारी) बेनी—पुराने इतिहासों के आधार पर असनीवासी शृंगारी बेनी को वंदीजन कहा गया है । वस्तुतः यह उपमन्यु गोत्र के कान्यकुब्ज वाजपेयी ब्राह्मण थे । इनके फुटकर छन्द ही नहीं मिलते, इनके नायिका भेद सम्बन्धी एक ग्रंथ का भी उल्लेख शिवसिंह ने किया है । खोज में भी (1903/62, 122, 1904/22) इनका 'रसमय' नामक नायिका भेद का ग्रंथ मिला है । इसमें 450 छन्द हैं । इसका रचनाकाल सं० 1817 है । अतः परम्परा से मान्य इनका रचनाकाल सं० 1700 ठीक नहीं । ये सारी सूचनाएँ 'रसमय' से मिलती हैं :

रचनाकाल सूचक दोहा :

अष्टादस सत वर्ष गत सत्रह औरौ जानि
फागुन दसमी सित सुभग चंद्रवार अनुमानि 439

परिचय सम्बन्धी दोहा :

लसत वंस उपमन्य वर वाजपेउ करि जज्ञ
सुकृती साधु कुलीन वर नवरस में सरवज्ञ 436
बेनी कवि कौ बासु ह असनी बर सुभ थान
बसत सबै षटकुल जहाँ करैं वेद को गान 437

आश्रयदाता :

कीनो निहचल सिंह जू बेनी कविसों नेहु
लीला राधा कान्ह की भाषा में करि देहु
—ग्रंथारंभ में

निहचल सिंह सुजान वर को अनुसासन पाइ
कीनों 'रसमय' ग्रन्थ यह बरनि नाइका भाइ 438

3. रसनिधि—रसनिधि का रचनाकाल सं० 1660 से 1767 माना गया है। स्पष्ट ही 1660 अशुद्ध है, यह मुद्राराक्षसों की भी कृपा से हो सकता है। इसे 1760 होना चाहिए।

4. नृपशंभु—नृपशंभु का जन्मकाल सं० 1738 माना गया है। यह संवत सरोज से लिया गया है और कवि का उपस्थिति काल है।

5. नेवाज—'शकुन्तला नाटक' के रचयिता नेवाज औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के यहाँ रहते थे, ऐसा उल्लेख इस वृहत् इतिहास में हुआ है। यह पूर्णतया भ्रामक है। फिदाई खाँ के पुत्र मुसवी खान या मुसलेखान थे। मुसवी खान के शौर्य से सम्राट फर्रुखसियर को फतह मिली थी। उसने इन्हें आजम खान की उपाधि दी। फर्रुखसियर का शासनकाल सं० 1770-76 है। अतः मुसवी खान सं० 1770 के आसपास आजमखान हुए होंगे। इन्हीं मुसवी खान या आजमखान के आश्रय में नेवाज ने शकुन्तला की रचना की। शकुन्तला में ये सारी सूचनाएँ कवि ने स्वयं दी हैं (खोज रि० 1917।126 ए) शुक्ल जी के आधार पर शकुंतला का रचनाकाल सं० 1737 दिया गया है, जो भ्रष्ट है। शुक्ल जी की मान्यता औरंगजेब के पुत्र आजमशाह को इनका आश्रयदाता समझ कर है। अथवा शुक्ल जी के यहाँ अंक विपर्यय से 73 का 37 हो गया है। इस ग्रंथ का रचनाकाल सं० 1773 है।

वृहत् इतिहास में विलग्रामवासी मुसलमान एवं श्रृंगारी नेवाज को अंतर्वेदीय ब्राह्मण नेवाज से मिला दिया गया है। परिचय ब्राह्मण का है। कविता के उदाहरण मुसलमान के हैं।

6. हठी—हठी का कोई सन-संवत नहीं दिया गया है। इनके राधा सुधा शतक का रचना काल सं० 1847 है।

7 4 8 1
ऋषि सु वेद वसु ससि सहित, निरमल मधु को पाय
माधव तृतिया भृगु निरखि रच्यौ ग्रन्थ सुखदाय 10

'वेद' के स्थान पर 'देव' भी मिलता है। ऐसी स्थिति में इसका रचनाकाल सं० 1837 होगा।

7. **रामसहाय दास**—रामसहाय दास के वाणी भूषण, वृत तरंगिणी, ककहरा ग्रंथों को अनुपलब्ध कहा गया है। तीनों ग्रंथ खोज में मिल चुके हैं, देखिए क्रमशः 1904/23, 1907/27, 1909/256। इस कवि के सम्बन्ध में जो बातें संदिग्ध ढंग से कही गई हैं, सबका प्रमाण इन ग्रन्थों से मिल जाता है।

कुछ मुद्रण दोष

अन्त में मुद्रण सम्बन्धी कुछ दोषों की भी चर्चा अप्रासंगिक न होगी। यद्यपि यह ग्रन्थ पर्याप्त शुद्ध छपा है, पर इसमें मुद्रण सम्बन्धी तीन तरह की भयानक भूलें हैं। इनमें से कुछ भूलें प्रेस की न होकर, प्रेस कापी की भूलें हो सकती हैं। पहली तरह की भूलें सन-सम्वत से सम्बन्ध रखती हैं। इतिहास ग्रन्थों में यदि सन-सम्वत ही अशुद्ध छपेंगे, तब उसमें शुद्ध क्या रहेगा ? इस ग्रन्थ में दूसरे ढंग की अशुद्धियाँ उद्धृत कविताओं में मिलती हैं। शब्दों के गलत छप जाने से कविता का सारा रस मारा जाता है। अशुद्धियाँ यहाँ बहुत-सी हैं। यहाँ कुछ ही उदाहरण दिये जा रहे हैं—शुद्ध पाठ कोष्ठक में दे दिया जा रहा है।

1. जिहि मग दो रत (दौरत) निरदई, तेथे (तेरे) नैन कजाक
2. बाल कहा लाली भई लोचन (लोयन) माँह
3. ढीठि परोसिन ईठ ह्वै, कहै (कहे) जु गहे समान (सयान)
4. मरन (मरत) प्यास पिंजरा पर्‌यो सुआ समै के फेर
5. मूड़ चढ़ाए ऊ (चढ़ाएऊ) रहैं, पर्‌यो पीठि कच मार (भार)

इस इतिहास में तीसरे प्रकार की छापे की भद्दी भूलें कुछ संज्ञाओं की हैं, जिन्हें अनभिज्ञ लोग शुद्ध समझकर सहज ही ग्रहण कर ले सकते हैं। ऐसी कुछ अशुद्धियाँ नीचे दी जा रही हैं :

1. तुंगारण्य—यह बेतवा के तट पर स्थित एक वन है। महाकवि केशव ने इसका उल्लेख किया है। यह 'तुंगार राय' (पृष्ठ 302) हो गया है।

2. कुंदेरनी—देव ने 'जाति विलास' में इस जाति की नायिका का वर्णन किया है। इस इतिहास में यह 'कुघेरनी' (पृष्ठ 337) हो गई है।

3. तिरवा—फर्रुखाबाद जिले में तिरवा प्रसिद्ध कसवा है। यहाँ पर राजा जसवन्त सिंह बघेले नामक कवि हुए हैं। यहाँ 'तिरवा' 'तेरवा' हो गया है। (पृष्ठ 428)

4. अनंग शेखर—यह एक प्रकार का वर्णिक दंडक है। यह 'अभंग शेखर' हो गया है। (पृष्ठ 481)

5. गायत्री—यह तीस चरणों का वैदिक छंद है। यहाँ 'गायत्री' 'गायश्री' में बदल गया है। (पृष्ठ 482)

6. सिगरामऊ—जौनपुर में प्रसिद्ध कसबा है। यहाँ के राजा रणधीर सिंह सुकवि थे। यह 'सिंहरामऊ' हो गया है। (पृष्ठ 475)

7. निधुबन—वृन्दावन का एक भाग है। यहाँ राधा कृष्ण निधु (रति) किया करते थे। स्वामी हरिदास यहीं रहा करते थे। वृहत् इतिहास में यह 'विधुवन' बन गया है।

8. पठान सुलतान—यह राजगढ़ (भूपाल) के नवाब थे। इनके नाम पर और इन्हीं की छाप से चन्द कवि ने बिहारी सतसई की कुण्डलियाँ-बद्ध टीका प्रस्तुत की है। पठान सुलतान को 'पवन सुल्ताना' बना दिया गया है, (पृष्ठ 516)। अनुक्रमणिका में भी 'पवन सुलताना' ही है, (पृष्ठ 561)।

'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' के छठे भाग में जो भूलें की गई हैं या हुई हैं, उनका विस्तृत निर्देश यहाँ किया गया है। यदि अन्य भागों में ऐसी भूलों से लेखक एवं सम्पादक लोग बचें, तो लेखक अपने श्रम को सफल समझेगा। यह लेख छिद्रान्वेषण के लिए नहीं लिखा गया है, सुधार के लिए लिखा गया है।

————

5

आचार्य शुक्ल का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' : कुछ आवश्यक टिप्पणियाँ

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल कृत 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठतम इतिहास है। उसकी श्रेष्ठता काल-विभाजन, कालों के प्रवृत्ति निरूपण और एक-एक कवि पर की गई आलोचना में निहित है। कवियों के काव्य के सम्बन्ध में शुक्ल जी ने जो कुछ कह दिया है, वह कभी पुराना नहीं हो सकता, वह सदा अद्यतन बना रहेगा। तथ्यों के सम्बन्ध में शुक्ल जी ने विशेष चिन्ता नहीं की है, विशेषकर रीतिकाल के तथ्य उन्होंने मिश्रबन्धु विनोद से लिए हैं और कवियों के परिचयात्मक वृत्तों की छानबीन में अधिक नहीं प्रवृत्त हुए हैं, क्योंकि उनका उद्देश्य हिंदी साहित्य का एक पक्का और व्यवस्थित ढाँचा खड़ा करना था न कि कवि-कीर्तन करना। ऐसा उन्होंने प्रथम संस्करण के वक्तव्य में स्वीकार किया है। ऐसी स्थिति में अनेक स्थलों पर तथ्य एवं तिथि सम्बन्धी भूलें हो गई हैं, यदि इन स्थलों पर संशोधनात्मक टिप्पणियाँ जोड़ दी जायँ, तो यह इतिहास अद्यतन हो जाय और इसकी उपयोगिता और भी बढ़ जाय। इसी उद्देश्य से यह लेख लिखा जा रहा है। इसका उद्देश्य छिद्रान्वेषण नहीं है, बल्कि शुक्ल जी के उक्त सुप्रसिद्ध इतिहास को अद्यतन बनाकर और भी उपयोगी बना देना है। यहाँ सम्वत 2007 में हुए छठे संशोधित और परिवर्धित संस्करण का उपयोग टिप्पणियाँ लगाने के लिए किया जा रहा है। सारे पृष्ठ-निर्देश उसी संस्करण के अनुसार हैं।

आगे कुल 178 टिप्पणियाँ दी जा रही हैं। ये टिप्पणियाँ तीन प्रकार की हैं :

(1) संशोधनात्मक टिप्पणियाँ—अधिक संख्या इन्हीं की है।

(2) पूरक टिप्पणियाँ—शुक्ल जी ने जो तथ्य दिये हैं, वे ठीक हैं, पर लगता है कि यदि उस समय तक और भी तथ्य सुलभ होते तो वे उन्हें भी दे देते। जहाँ-जहाँ ऐसी प्रतीति हुई है, पूरक टिप्पणियाँ दी गई हैं।

(3) प्रेस की भूलों को सुधारने वाली टिप्पणियाँ—प्रेस वाले कुछ का कुछ कर देने में समर्थ हैं और उनकी भूल से अर्थ का अनर्थ हो जाता है।

इन टिप्पणियों का उद्देश्य छापे की सारी भूलों को ठीक करना नहीं है बल्कि उन्हीं भूलों को ठीक कर देना है जिन्हें सामान्य जन ठीक नहीं कर सकते और जिनके ठीक न करने से अर्थ का अनर्थ हो सकता है और भविष्य में जिन्हें प्रूफ रीडर भी ठीक नहीं कर सकते तथा जो प्रत्येक संस्करण में बनी रह जायेंगी। ऐसी टिप्पणियाँ कुल 15 दर्जन के लगभग हैं।

(1) प्रथम संस्करण का वक्तव्य, पृष्ठ 1, प्रथम वाक्य—'हिन्दी कवियों का एक वृत्त संग्रह ठाकुर शिवसिंह सेंगर ने 1883 ई० में प्रस्तुत किया था।'

शिवसिंह सरोज का प्रथम संस्करण 22 अप्रैल 1878 को हुआ था। 18 नवम्बर 1883 को इसका तीसरा संस्करण हुआ। ग्रियर्सन ने इसी तीसरे संस्करण का उपयोग किया था, न कि दूसरे का जैसाकि उन्होंने लिखा है। यह 1883 ई० ग्रियर्सन से ली गई है।

(2) वही पृष्ठ 4—5। मिश्रबंधुओं ने आदिकाल के भीतर 10 पुस्तकों की नामावली और दी है, जिनमें से छठी पुस्तक अन्य योग' है। यह न तो साहित्यिक रचना है और न आदि काल की रचना। इसके सम्बन्ध में शुक्ल जी लिखते हैं—"नं० 6 योग की पुस्तक है।" इस पर इतना और जोड़ लिया जाय—

"साथ ही यह अठाहरवीं शती की रचना है। इसके रचयिता सुप्रसिद्ध अक्षर अनन्य हैं।"

(3) वही पृष्ठ 5-6। आचार्य शुक्ल जी ने पृष्ठ 5 के अन्तिम अनुच्छेद में कहा है कि "रीतिकाल के उपविभाग करने का कोई संगत आधार मुझे नहीं मिला है। रीतिबद्ध ग्रंथों की बहुत गहरी छानबीन और सूक्ष्म पर्यालोचना करने पर आगे चलकर शायद विभाग का कोई आधार मिल जाय।"

आचार्य शुक्ल के सुयोग्य शिष्य आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने रीति-साहित्य का मंथन करके रीतिकाल का उपयुक्त नामकरण 'शृंगार काल' किया है और इसके तीन उपविभाग भी उन्होंने किये हैं—(1) रीतिबद्ध (2) रीति सिद्ध (3) रीति-मुक्त या स्वच्छंद।

(4) पृष्ठ 3, प्रथम अनुच्छेद, अन्तिम अंश। पूष के सम्बन्ध में शुक्ल जी लिखते हैं:

"यद्यपि जन श्रुति इस काल का आरम्भ और पीछे ले जाती है और संवत 770 में भोज के पूर्व पुरुष राजा मान के सभासद पुष्य नामक किसी बन्दीजन का दोहों में एक अलंकार ग्रंथ लिखना बताती है (दे० शिवसिंह सरोज), पर इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।"

कवि का नाम पूष (Pushh) है। सं० 770 में चित्तौर के मोरी वंशीय अन्तिम राजा मान ने चित्तौर में मानसरवर नामक एक विशाल तालाब बनवाया। यह मान दूसरे भोज का बेटा था, न कि उसका पूर्व पुरुष। मानसरवर के किनारे

राजा मान के एक प्रस्तर स्तम्भ खड़ा किया, जिस पर कीलाक्षरों में एक लेख खुदा है। इस शिलालेख का रचयिता पूष है। शिलालेख किस भाषा में है, ज्ञात नहीं। यह सम्भवत: संस्कृत में होगा। पूष न तो बन्दीजन था, न मान का सभासद, न उसने दोहों में कोई ग्रलंकार ग्रंथ ही लिखा। हाँ, वह ग्रलंकार विद्या में प्रवीण (Versed in Alankar) ग्रवश्य था।

(5) पृष्ठ 32, ग्रनुच्छेद 2। ग्राचार्य शुक्ल ने कहा है कि कुछ लोगों के ग्रनुसार 'रहस्य' से रासो शब्द बना है। स्वयं ग्राचार्य शुक्ल इसे बीसलदेव रास में बारंबार प्रयुक्त शब्द 'रसायण' से निकला मानते हैं।

मूल शब्द वस्तुत: 'रासक' है जिसका ग्रर्थ है काव्य। इस 'रासक' शब्द से खड़ी बोली का 'रासा' ब्रजी का 'रासो' ग्रौर ग्रवधी का 'रास' बना है। राजपूताना में बने इस प्रकार के ग्रंथ पिंगल की रचना होने के कारण 'रासो' ही हैं।

(6) पृष्ठ 32-33। ग्राचार्य शुक्ल ने 'खुमान रासो' में दूसरे खुमान (वि० सं० 870-900) का वर्णन माना है ग्रौर सभी लोग इसे वीर गाथा काल की रचना मानते ग्रा रहे हैं। पर यह सब ठीक नहीं।

खुमान रासो के रचयिता तपागच्छीय जैन कवि दौलत विजय हैं, जिनका दीक्षापूर्व नाम दलपत था। यह शांति विजय के शिष्य थे। ग्रंथ की भाषा राजस्थानी है। इस ग्रंथ में बाप्पा रावल से लेकर राणा प्रताप तक ही नहीं, राणा प्रताप के भी बाद के सात राजाग्रों संग्राम सिंह द्वितीय तक का वर्णन है। इस ग्रंथ का नाम 'खुमान रासो' इसलिए नहीं है कि इसमें खुमान द्वितीय (वि० सं० 870-900) के खलीफा ग्रलमामू से हुए युद्धों का वर्णन है ग्रथवा इसमें इन खुमान का प्रसंग कुछ ग्रधिक विस्तार से है ग्रौर ग्रौरों का कम विस्तार से, बल्कि यह नाम इसलिए है कि इसमें चित्तौर के राजाग्रों का ग्राख्यान है, जिनकी एक उपाधि खुमान (खुमाणां) भी है। ग्रन्य उपाधियाँ राणा, महाराणा, दीवान, सीसोदा, केलपुरा, चीत्तौड़ा ग्रादि है। इस ग्रंथ का रचना काल सन् 1767 और 1790 विक्रमी के बीच है। यही ग्रमर सिंह के पुत्र संग्राम सिंह का राज्य काल है। ग्रत: खुमान रासो न तो वीरगाथा काल का सर्वप्रथम ग्रंथ है, न इसका रचयिता राजस्थान का ग्रादि कवि है, न इसमें प्रताप सिंह तक का ही वर्णन है, न इसका रचना काल 16 वीं शताब्दी है, न यह प्राचीन पुस्तक का परिवर्द्धित संस्करण है, न 800 वर्षों का परिमार्जित ग्रंथ, न पीछे के राजाग्रों का वर्णन इसमें परिशिष्ट रूप से जोड़ा गया है ग्रौर न उपलब्ध रूप से 17 वीं शताब्दी में ही प्राप्त हुग्रा।

(7) पृष्ठ 66, पंक्ति 12। 'नामदेव का जन्मकाल शक सम्वत् 1192 ग्रौर मृत्युकाल सम्वत् 1272 प्रसिद्ध है।'

शक सम्वत् में 78 जोड़ देने से ईस्वी सन् ग्रौर ईस्वी सन् में 57 या 56 जोड़ देने से विक्रम सम्वत् बन जाता है। नामदेव का जन्मकाल 1192+78+56=1326 वि० एवं मृत्युकाल 1272+78+56=1406 वि० है।

(8) पृष्ठ 71, पंक्ति 7। शुक्लजी लिखते हैं 'इस (निर्गुनिया) शाखा की रचनाएँ साहित्यिक नहीं हैं—फुटकल दोहों या पदों के रूप में हैं।

निर्गुनिया लोग 'पद' रचना नहीं करते, 'सबद रचना करते हैं।' 'पद' और 'सबद' में सांस्कृतिक भेद है। पद और सबद के इस अन्तर की ओर किसी भी पूर्ववर्ती आलोचक ने ध्यान नहीं दिया है। शुक्ल जी ज्ञानाश्रयी शाखा विवेचन में प्रायः प्रत्येक निर्गुनिया कवि के विवरण में यह भूल करते गये हैं।

(9) पृष्ठ 92, पंक्ति 7-8। 'दादू दयाल की शिष्य परम्परा में जगजीवन दास या जगजीवन साहब हुए जो सम्वत् 1818 के लगभग वर्तमान थे। ये चंदेल ठाकुर थे।"

हिन्दी में अनेक जगजीवन हुए हैं। दादू के शिष्य जगजीवन एक व्यक्ति हैं, उनका क्षेत्र राजस्थान है, उनका समय 17वीं शती है। कोटवा जिला बाराबंकी के चंदेल ठाकुर जगजीवन साहब सतनामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं, यह दादू की शिष्य-परम्परा में नहीं है। इनका जन्मकाल भौमवार माघ शुक्ल 7 सम्वत 1727 एवं मृत्युकाल भौमवार वैशाख कृष्ण 7 सम्वत 1817 है। अतः शुक्ल जी का दिया संवत 1818 अशुद्ध है।

(10) पृष्ठ 92, पंक्ति 12। जगजीवन साहब के शिष्य का नाम दूलमदास दिया गया है। शुद्ध नाम 'दूलनदास' है।

(11) पृष्ठ 92, पंक्ति 11। पहलवान दास और तोंवरदास को 'दूलमदास' का शिष्य कहा गया है, जो ठीक नहीं। दूलनदास के शिष्य सिद्धादास थे और सिद्धादास के शिष्य पहलवान दास थे। अतः पहलवान दास शिष्य न होकर पोता शिष्य थे।

(12) पृष्ठ 95, मंझन। शुक्ल जी ने मंझन की 'मधुमालती' की एक खंडित प्रति मिलने का उल्लेख किया है। अब मधुमालती की पूरी प्रति मिल गई है और इसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं, एक का सम्पादन डॉ० शिव गोपाल मिश्र ने एवं प्रकाशन हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी ने किया है; दूसरे का सम्पादन डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने एवं प्रकाशन मित्र प्रकाशन इलाहाबाद ने किया है।

(13) पृष्ठ 97। "इसके आगे प्रति खण्डित है। पर कथा के झुकाव से अनुमान होता है कि प्रेमा और ताराचंद का भी विवाह हो गया होगा।"

शुक्ल जी का अनुमान ठीक है। प्रेमा और ताराचन्द का विवाह हो गया। कुछ दिनों के अनन्तर चारों साथ ही विदा हुए। कुछ दूर जाने पर मधुमालती और मनोहर एक दिशा में गये और प्रेमा और ताराचन्द दूसरी दिशा में। घर पहुँचने पर मनोहर का राजतिलक हो जाता है।

(14) पृष्ठ 98। आचार्य शुक्ल को मंझन कृत मधुमालती का ठीक-ठीक रचनाकाल ज्ञात नहीं हो सका है। इनका अनुमान है कि रचना सं० 1550 और 1595 के बीच किसी समय हुई।

मधुमालती की रचना 952 हिजरी (1545 ई० या 1602 वि०) में हुई—

संवत नौ सै बावन भयऊ सती पुरुष कलि परिहर गयऊ

(15) पृष्ठ 101, जायसी। शुक्ल जी ने जायसी के तीन ग्रंथों पदमावत, अखरावट और आखिरी कलाम का उल्लेख किया है। इनके तीन और ग्रंथ प्रकाशित हो गये हैं—

1. चित्ररेखा—सम्पादक शिवसहाय पाठक, प्रकाशक हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।
2. महरी बाईसी या महरी नामा—डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित एवं हिन्दुस्तानी अकेडमी द्वारा प्रकाशित 'जायसी ग्रंथावली' में।
3. मसलानामा—'हिन्दुतानी' पत्रिका में।

(16) पृष्ठ 105, जायसी। 'तन चितउर मन राजा कीन्हा' आदि पंक्तियाँ जायसी कृत नहीं हैं। किसी प्रतिलिपि कर्ता की है। प्राचीनतम प्राप्त प्रतियों में ये नहीं हैं। डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित जायसी ग्रंथावली में इन्हें स्थान नहीं दिया गया है।

(17) पृष्ठ 110, कासियशाह। शुक्ल जी के पास कासियशाह के 'हंस जवाहिर' की फारसी अक्षरों में नामी प्रेस लखनऊ की छपी एक प्रति थी। यह पुस्तक नागरी अक्षरों में नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से छपी है। इसके कई संस्करण हो चुके हैं और यह आज भी सुलभ है।

(18) पृष्ठ 120, अन्तिम अनुच्छेद। कृष्णदास पयहारी के गलता आश्रम की स्थिति 'अजमेर' राज्य राजपूताना कही गई है। संभवतः शुक्ल जी ने 'आमेर' लिखा था, प्रमाद से यह 'अजमेर' हो गया है। आमेर जयपुर से पुराना शहर है और जयपुर से प्रायः 10-12 मील दूर है। गलता या गालवाश्रम जयपुर से कुछ ही दूर है।

(19) पृष्ठ 126, द्वितीय अनुच्छेद, गोसाईं चरित। भवानीदास ने संवत् 1825 के आस पास 'गोसाईं चरित' की रचना की थी। इसी को महेशदत्त शुक्ल ने बेनीमाधव दास को गोसाईं जी का सदा साथ रहने वाला शिष्य कहा। ग्रंथ सन् 1889 ई० में ग्रियर्सन द्वारा सम्पादित एवं खड्ग विलास प्रेस, बाँकीपुर पटना से प्रकाशित 'रामचरित मानस' के प्रारम्भ में संलग्न है। पर आज तक उसकी पहचान नहीं हो पाई थी। मैंने इसकी पहचान मार्च 1961 में की। इस ग्रंथ की अनुपलब्धि के कारण ही 'मूल गोसाईं चरित' का जाल रचा गया था। भवानीदास कृत उक्त गोसाईं चरित अब वाणीवितान, वाराणसी द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

(20) पृष्ठ 132, अनुच्छेद 2, गोसाईं जी की गुरु परम्परा।

शुक्ल जी का ख्याल है कि गोसाईं तुलसीदास रामानन्द सम्प्रदाय के वैरागी नहीं थे। जीवाराम कृत रसिक प्रकाश भक्तमाल के टीका कवित्त 104 के अनुसार गोसाईं जी की गुरु परम्परा यह है—

रामानन्द—सुरसुरानंद—गोपालदास—रघुनाथदास—नरहरिदास—तुलसी-दास ।

(21) पृष्ठ 133, प्रथम अनुच्छेद ।

"अवधी की सबसे पुरानी रचना ईश्वरदास की 'सत्यवती कथा' है ।"

'सत्यवती कथा' दिल्ली के लोदी सुलतान सिकन्दर शाह (सं० 1546-74वि०) के समय में रची गई । यह अवधी में रचित प्रथम रचना नहीं है । मुल्ला दाऊद ने 'चंदायन' नामक प्रेमाख्यान 781 या 779 हिजरी (सं० 1437 या 1535 वि०) में रचा था । अब चंदायन के दो संस्करण हो चुके हैं । एक का सम्पादन डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त ने किया है, दूसरे का डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने । 'सत्यवती कथा' भोजपुरी में रची गई, जिस पर अवधी का भी प्रभाव है ।

(22) पृष्ठ 144, द्वितीय अनुच्छेद । 'हनुमद्वाहुक को पंडित राम गुलाम ने दोहावली के अन्तर्गत ही लिया है ।"

शुक्ल जी असावधानी से 'दोहावली' लिख गए हैं, होना चाहिए 'कवितावली' ।

(23) पृष्ठ 146, स्वामी अग्रदास की रचनाएँ । शुक्ल जी ने अग्रदास के चार ग्रँथों के नाम दिये हैं :

1. हितोपदेश उपखाणां बावनी
2. ध्यान मंजरी
3. राम ध्यान मंजरी
4. कुंडलियाँ

ये वस्तुतः चार ग्रंथ नहीं हैं, दो ही हैं । 'हितोपदेश उपखाणाँ बावनी और कुंडलियाँ' एक ग्रंथ के दो नाम हैं । इसी तरह 'ध्यान मंजरी' और 'राम ध्यान मंजरी' भी एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं ।

(24) पृष्ठ 147, प्रथम अनुच्छेद—भक्तमाल की छप्पय संख्या ।

शुक्ल जी के अनुसार भक्तमाल में 200 भक्तों के चमत्कार चरित्र 316 छप्पयों में लिखे गए हैं, यह ठीक नहीं । भक्तमाल में कुल 244 छंद हैं, जिसमें 1-4, 29 और 203-14 संख्यक 17 छंद दोहे हैं । अतः कुल 197 छप्पय ही हैं, 316 नहीं ।

(25) पृष्ठ 159, सूरदास ।

'पूरनमल खत्री ने गोवर्धन पर्वत पर सम्वत् 1576 में (श्रीनाथ जी के मन्दिर को) पूरा बनवाकर खड़ा किया ।'

उक्त मन्दिर का निर्माण सम्वत 1556 वैशाख सुदी 3 को प्रारम्भ हुआ था और इसकी समाप्ति वैशाख सुदी 3 सम्वत 1576 को ठीक 20 वर्ष बाद हुई थी ।

(26) 159, अन्तिम परिच्छेद ।

शुक्ल जी के अनुसार सूरदास सम्वत् 1580 के आस-पास बल्लभाचार्य के शिष्य हुये होंगे । वस्तुतः सूरदास सम्वत् 1567 में बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित हुये थे

और श्रीनाम मन्दिर के पूर्ण होने से पहले ही वहाँ कीर्तन आदि चलता था। पहले कुंभदास अकेले थे। 1567 में सूरदास भी यहाँ आ गए।

(27) पृष्ठ 160, अन्तिम अनुच्छेद।

शुक्ल जी का कथन है कि "67 वर्ष के कुछ पहले ही वे सूरसागर समाप्त कर चुके थे। सूरसागर समाप्त होने के थोड़े ही पीछे उन्होंने सूर सारावली लिखी होगी।"

सूरसागर सूरदास की समस्त रचनाओं का संकलन है। उसे पूरा नहीं कहा जा सकता, अधूरा भी नहीं, क्योंकि यह मुक्तकों का संग्रह है। अतः यह कहना कि सूर की 67 वर्ष की वय के कुछ पहले ही सूरसागर पूरा हो गया, ठीक नहीं। 'सूर सारावली' को अब विद्वान सूरदास की रचना नहीं मानते। इस सम्बन्ध में सबसे पहले डॉ० व्रजेश्वर वर्मा ने 'सूरदास' में लिखा; फिर डॉ० प्रेमनारायण टंडन ने 'सूरसारावली, एक अप्रामाणिक रचना' में इस पर विस्तार से विचार किया है।

(28) पृष्ठ 161, प्रथम अनुच्छेद।

शुक्ल जी के अनुसार सूरदास का जन्म काल सम्वत 1540 के आस-पास तथा मृत्युकाल सम्वत 1620 के आस-पास अनुमित होता है।

सूर निर्णय (प्रभु दयाल मीतल) के अनुसार सूरदास का जन्म वैशाख सुदी 5 संवत 1535 को हुआ और इनकी मृत्यु अनुमान से सम्वत 1640 के आस-पास हुई।

(29) पृष्ठ 162, प्रथम अनुच्छेद।

'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' के सम्बन्ध में शुक्ल जी का अभिमत है—"रंग-ढंग से यह वार्ता गोकुलनाथ के पीछे उनके किसी गुजराती शिष्य की रचना जान पड़ती है।"

वस्तुतः वार्ताओं के कर्ता गोकुलनाथ जी ही हैं। इनका जन्म सं० 1608 में मार्ग शीर्ष शुक्ल 7 को एवं देहावसान सं० 1697 में फाल्गुन कृष्ण 9 को 90 वर्ष की आयु में हुआ था। इनका सम्पादन एवं भाव प्रकाशन गोसाईं विट्ठलनाथ के द्वितीय पुत्र गोविन्द राम के पौत्र श्री हरिराम जी ने संवत 1750 के आसपास किया। हरिराम जी का जन्म संवत 1647 में भाद्रपद कृष्ण पक्ष 5 को एवं देहावसान संवत 1772 में 125 वर्ष की वय में हुआ था।

(30) पृष्ठ 172, पंक्ति 8—"मनोरंजक वृक्षों की कल्पना सूर ने की है।"

प्रेस की भूलों ने 'दृश्यों' के स्थान पर 'वृक्षों' को खड़ा कर दिया है।

(31) पृष्ठ 174, द्वितीय अनुच्छेद।

शुक्ल जी का कथन है कि गोस्वामी जी का नंददास जी से कोई सम्बन्ध नहीं था, यह बात पूर्णतया सिद्ध हो चुकी है।'

सोरों सामग्री तुलसी एवं नंददास को परस्पर चचेरा भाई मानती है; पर दोनों 'गुरु भ्राता' थे ऐसा कथन भवानीदास कृत गोसाईं चरित एवं तथाकथित बेनी

माधव दास कृत मूल गोसाईं चरित' का है। इस सम्बन्ध में अभी और शोध की आवश्यकता है।

(32) पृष्ठ 175, द्वितीय परिच्छेद।

शुक्ल जी ने नन्ददास के ग्रन्थों की जो सूची दी है, उसमें 'अनेकार्थ मंजरी' और अनेकार्थ नाममाला (कोस) नामक दो ग्रन्थ हैं। वस्तुतः ये दोनों एक ही ग्रन्थ के दो नाम हैं।

(33) पृष्ठ 175, द्वितीय अनुच्छेद।

शुक्ल जी के अनुसार नन्ददास की चार पुस्तकें रासपंचाध्यायी, भ्रमरगीत, अनेकार्थ मंजरी और अनेकार्थ नाममाला प्रकाशित हैं। ये वस्तुत: तीन ही पुस्तकें हुईं। अब नन्ददास की सम्पूर्ण ग्रन्थावली प्रकाशित हो गयी है। इसका एक संस्करण प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी परिषद द्वारा दो भागों में प्रकाशित हुआ है, सम्पादक हैं श्री उमाशंकर शुक्ल। दूसरा संस्करण श्री ब्रजरत्नदास द्वारा संपादित होकर काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुआ है।

(34) पृष्ठ 176, कृष्णदास।

"एक बार गोसाईं विठ्ठलनाथ जी से किसी बात पर अप्रसन्न होकर उनकी ड्योढ़ी बन्द कर दी।"

बल्लभाचार्य की मृत्यु के अनन्तर सम्प्रदाय की गद्दी के लिए जो गृह-कलह हुआ, उसमें कृष्णदास अधिकारी ने पुरुषोत्तमदास का पक्ष लिया था, जो विट्ठलनाथ के दिवंगत बड़े भाई के अल्प वयस्क पुत्र थे। संवत् 1605 पौष शुक्ल 5 से संवत् 1606 आषाढ़ शुक्ल 5 तक कुल 6 महीने विट्ठलनाथ जी को, अधिकारी होने के नाते; कृष्णदास ने श्री नाथ जी के मन्दिर में नहीं घुसने दिया था। पुरुषोत्तम दास की अकाल मृत्यु से गृह-कलह स्वयं शांत हो गया।

(35) पृष्ठ 177।

शुक्ल जी के अनुसार कृष्णदास अधिकारी का 'कविताकाल संवत् 1600 के आगे-पीछे माना जा सकता है।'

कृष्णदास का जन्म संवत् 1553 में गुजरात में चिलोतरा नामक गाँव में एक कुनबी पटेल के घर हुआ था, संवत् 1567 में यह बल्लभ संप्रदाय में दीक्षित हुए। इनकी मृत्यु संवत् 1636 के लगभए हुई।

(36) पृष्ठ 177, परमानन्द दास।

'ये संवत् 1605 के आस-पास वर्तमान थे।'

परमानन्द का जन्म सम्वत् 1550 में मार्गशीर्ष 7 सोमवार को कन्नौज में एक कान्य-कुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। सम्वत 1577 में ज्येष्ठ शुक्ल 12 को प्रयाग में इन्होंने बल्लभाचार्य जी से दीक्षा ली। सम्वत् 1641 में भाद्रपद कृष्ण 9 को 91 वर्ष की वय में इनका गोलोकवास हुआ।

(37) पृष्ठ 177।

'इनके 835 पद परमानन्द सागर में हैं।'

अब परमानन्द सागर प्रकाशित हो गया है। इसका एक संस्करण अलीगढ़ से प्रकाशित हुआ है, दूसरा विद्या विभाग कांकरोली से। कांकरोली वाले संस्करण में लगभग 1387 पद हैं, अलीगढ़ वाले में 930 हैं।

(38) पृष्ठ 178, कुंभन दास।

'इनका न तो कोई ग्रन्थ प्रसिद्ध है और न अब तक मिला है। फुटकल पद अवश्य मिलते हैं।'

विद्या विभाग कांकरोली ने इनके 401 पदों का संग्रह 'कुम्भनदास' नाम से फरवरी 1954 में प्रकाशित किया है। इनका जन्म सम्वत् 1525 एवं देहावसान संवत् 1640 में हुआ। यह अष्टछापी कवियों में ज्येष्ठतम थे।

(39) पृष्ठ 178, चतुर्भुज दास।

चतुर्भुज दास के तीन ग्रन्थ कहे गये हैं—द्वादश यश, भक्ति प्रताप, हित जू को मंगल। ये तीन ग्रंथ नहीं हैं। भक्ति प्रताप और हित जू को मंगल वस्तुत: 'द्वादश यश' का क्रमश: तीसरा (भक्ति प्रताप यश) और ग्यारहवाँ (मंगल सार यश) यश हैं। साथ ही यह द्वादश यश इन अष्टछायी चतुर्भुज की रचना नहीं है। यह हित हरिवंश के राधा वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी गोसाईं वनचन्द के शिष्य चतुर्भुज दास की रचना है।

अष्टछापी चतुर्भुज की पदावली 'चतुर्भुज दास' नाम से विद्या विभाग कांकरोली द्वारा अक्टूबर 1957 में प्रकाशित हुई है। इसमें 365 पद हैं। इनका जन्मकाल सम्वत् 1587 एवं मृत्यु काल सम्वत् 1642 है।

(40) पृष्ठ 179, छीत स्वामी।

"इनकी रचनाओं का समय सम्वत् 1612 के इधर मान सकते हैं। इनके फुटकल पद ही लोगों के मुँह से सुने जाते हैं या इधर-उधर संकलित मिलते हैं।"

छीत स्वामी का जन्म मथुरा में सम्वत् 1567 में हुआ। इन्होंने सम्वत् 1592 में वल्लभ सम्प्रदाय की दीक्षा ली। 75 वर्ष की आयु में इनका देहावसान सम्वत् 1642 में हुआ। इनके पदों का संग्रह 'छीत स्वामी' नाम से जून 1955 में विद्या विभाग कांकरोली से प्रकाशित हुआ है। इसमें 201 पद हैं।

(41) पृष्ठ 179, गोविन्द स्वामी।

"इनका रचनाकाल सम्वत् 1600 और 1625 के भीतर ही माना जा सकता है।"

गोविन्द स्वामी का जन्म संवत् 1552 में भरतपुर राज्य के आंतरी गाँव में हुआ। इन्होंने संवत् 1592 में वल्लभ सम्प्रदाय की दीक्षा ली। इनका देहावसान संवत् 1642 में फाल्गुन कृष्ण 7 को हुआ। विद्या विभाग कांकरोली ने 'गोविन्द स्वामी' नाम से इनके 574 पदों का एक संग्रह सम्वत् 2008 में प्रकाशित किया है।

(42) पृष्ठ 180, हित हरिवंश।

शुक्ल जी के अनुसार हरिराम व्यास सम्वत् 1622 के लगभग हित हरिवंश जी के शिष्य हुए थे। हित हरिवंश का देहावसान सम्वत् 1609 में आश्विन पूर्णिमा (शरद पूर्णिमा) को हुआ था। हरिराम से इनकी भेंट सम्वत् 1591 में हुई थी। हरिराम व्यास ने अपने पिता समोखन शुक्ल से दीक्षा ली थी। वे हित हरिवंश सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे या नहीं, यह विवादास्पद है। इस सम्बन्ध में अभी और शोध की आवश्यकता है।

(43) पृष्ठ 180, हित हरिवंश।

पुन: शुक्ल जी लिखते हैं कि केशवदास मिश्र इनके पिता थे। शुक्ल जी का यह कथन भी ठीक नहीं। हित हरिवंश के पिता का नाम व्यास मिश्र था। केशवदास मिश्र के व्यास मिश्र अग्रज थे, जो सन्यासी होने पर नृसिंहाश्रम कहलाए। इन्हीं नृसिंहाश्रम की भविष्यवाणी पर हित हरिवंश का जन्म हुआ था।

(44) पृष्ठ 180, हित हरिवंश।

"कहते हैं हरिवंश जी पहले मध्वानुयायी गोपाल भट्ट के शिष्य थे।"

यह 'कहते हैं' 'कहते' ही है। हित हरिवंश को राधा ने स्वप्न में मन्त्र दिया था।

(45) पृष्ठ 180, हित हरिवंश।

"हित हरिवंश ने संवत् 1582 में श्री राधा वल्लभ जी की मूर्ति वृन्दावन में स्थापित की और वहीं विरक्त भाव से रहने लगे।"

हित हरिवंश जी संवत् 1591 में फाल्गुन की 11 को वृन्दावन पहुँचे। इसी वर्ष सेवा कुंज में इन्होंने राधा वल्लभ जी के विग्रह की प्राण-प्रतिष्ठा की और इसी वर्ष यह वृन्दावन में आ रहे।

(46) पृष्ठ 180, हित हरिवंश।

"170 श्लोक का राधा सुधानिधि आप का ही रचा कहा जाता है।"

सम्भवत: प्रेस की भूल से 170 हो गया है। इस संस्कृत ग्रंथ में 270 श्लोक हैं।

(47) पृष्ठ अन्तिम पंक्ति, हित हरिवंश।

'ध्रुवदास को हित हरिवंश का शिष्य कहा गया है।' ध्रुवदास ने गोस्वामी हरिवंश के तृतीय पुत्र गोस्वामी गोपीनाथ से जो देवबन्द जिला सहारनपुर में ही रहते थे, देवबंद में ही सम्प्रदाय की दीक्षा ली थी।

(48) पृष्ठ 181, हित हरिवंश।

शुक्ल जी हित हरिवंश जी का रचनाकाल सम्वत् 1600 से 1640 तक मानते हैं, जो ठीक नहीं। हरिवंश जी का देहावसान सम्वत् 1609 में ही शरद् पूर्णिमा को हो गया था। अत: 1640 तक इनके रचना काल के होने की बात ही नहीं आती।

(49) पृष्ठ 183, गदाधर भट्ट का रचना काल।

शुक्ल जी ने गदाधर भट्ट का रचना काल सम्वत 1580-1600 माना है और

कहा है कि "इनकी रचना का प्रादुर्भाव सूरदास जी के रचना काल के साथ-साथ अथवा उससे भी कुछ पहले से मानना होगा।"

गदाधर भट्ट का रचनाकाल सूर से पहले नहीं हो सकता। सूर संवत् 1567 में वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे और दीक्षित होने से पहले से वे पद रचना करते आ रहे थे।

(50) पृष्ठ 184, मीराबाई।

शुक्ल जी ने मीराबाई का जन्मकाल सम्वत् 1573 माना है, जो ठीक नहीं। मीराबाई का जन्म संवत् 1555 में हुआ। सम्वत् 1573 में इनका विवाह हुआ।

(51) पृष्ठ 185—मीराबाई।

मीरा के कहे जाने वाले चार ग्रन्थों में एक 'गीत गोविंद टीका' का नाम लिया गया है। पहले मीरा को राणा कुंभा की पत्नी समझा जाता था। राणा कुम्भा ने 'रसिक प्रिया' नाम से गीत गोविंद की टीका संस्कृत में की है। संभवतः वही टीका मीरा की मान ली गई है। मीरा की लिखी हुई गीत गोविंद की कोई टीका मिलती नहीं।

(52) पृष्ठ 186, स्वामी हरिदास।

स्वामी हरिदास के सम्बन्ध में लिखा गया है कि "इनका जन्म संवत् आदि कुछ ज्ञात नहीं।" स्वामी हरिदास का जन्मकाल सं० 1537 एवं मृत्युकाल संवत् 1632 स्वीकार किया गया है।

(53) पृष्ठ 187, सूरदास मदन मोहन।

"सूरदास मदन मोहन के कुछ फुटकल पद लोगों के पास मिलते हैं।"

इनके 185 पदों का संकलन 'सूरदास मदन मोहन: जीवनी और पदावली' नाम से प्रभुदयाल मीतल द्वारा संपादित होकर वैशाखी पूर्णिमा संवत् 2015 को अग्रवाल प्रेस, मथुरा से प्रकाशित हुआ है।

(54) पृष्ठ 188, श्री भट्ट।

'युगल शतक' के अतिरिक्त इनकी एक और छोटी-सी पुस्तक 'आदिबानी' भी मिलती है।

वस्तुतः "युगल शतक" और "आदिबानी" एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं। इसमें 100 पद हैं, प्रत्येक पद के साथ उसी भाव का दोहा भी है। निम्बार्क संप्रदाय की पहली हिन्दी कृति होने के कारण युगल शतक को आदि वाणी कहते हैं।

(55) पृष्ठ 189, (हरिराम) व्यास जी।

"पहले ये गौड़ सम्प्रदाय के वैष्णव थे, पीछे हित हरिवंश जी के शिष्य हो राधा बल्लभी हो गए।"

इन्होंने अपने पिता समोखन शुक्ल से दीक्षा ली थी। साधना पथ में इन्हें हित वंश से अवश्य सहायता मिली थी। भगवत मुदित के रसिक अनन्य माल के

अनुसार हित हरिवंश द्वारा बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे। व्यास जी के वंशज इसे स्वीकार नहीं करते। प्रश्न विवादास्पद है।

(56) पृष्ठ 192।

"विट्ठलनाथ का गोलोकवास सं० 1643 में हुआ।" विठ्ठलनाथ का गोलोक-वास वस्तुतः 1642 में फाल्गुन कृष्ण 7 को हुआ।

(57) पृष्ठ 192, रसखान।

"इनकी दो छोटी-छोटी पुस्तकें अब तक प्रकाशित हुई हैं—प्रेम वाटिका (दोहे) और सुजान रसखान (कवित्त सवैया)।"

आचार्य पंडित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने रसखान की समस्त उपलब्ध रचनाओं का संपादन प्रकाशन 'रसखान' नाम से वाणी वितान. वाराणसी से किया है। इसमें सुजान रसखान में 214 छंद, दानलीला में 11 छंद, प्रेमवाटिका में 53 दोहे, प्रकीर्णक में 55 छंद. एवं 5 पद हैं (द्वितीय संस्करण संवत 2021)।

(58) पृष्ठ 193, ध्रुवदास।

"ये श्री हित हरिवंश जी के शिष्य स्वप्न में हुए थे।"

वस्तुतः ध्रुवदास जी ने हित हरिवंश के तृतीय पुत्र गोपीनाथ जी से देवबन्द में दीक्षा ली थी।

(59) पृष्ठ 194, पंक्ति 10।

'रस मंजरी' नाम सही नहीं है; 'रहस्य मंजरी' नाम है।

(60) पृष्ठ 198, लालचदास।

"इन्होंने संवत् 1585 में 'हरिचरित्र' और संवत् 1587 में 'भागवत दशम स्कन्ध भाषा' नाम की पुस्तक अवधी मिली भाषा में बनाई।"

वस्तुतः 'भागवत दशम स्कन्ध भाषा' का ही अन्य नाम 'हरि चरित्र' है। ये दो भिन्न ग्रंथ नहीं हैं। भिन्न-भिन्न प्रतियों में रचनाकाल वाले छंदों में पाठान्तर के कारण भिन्न-भिन्न संवत् इसके रचना काल के मिलते हैं।

(61) पृष्ठ 198, कृपाराम।

"इन्होंने संवत् 1598 में रस रीति पर 'हित तरंगिणी' नामक ग्रन्थ दोहों में बनाया।"

अब इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० 1798 स्वीकार किया जाने लगा है—'सिधि निधि सिवमुख चन्द्र लखि माघ सुद्धि तृतीयासु' के सिवमुख' की 'सब मुख' का विकृत रूप समझा जाने लगा है।

(62) पृष्ठ 202, बीरबल।

शुक्ल जी के अनुसार "बीरबल के कुल का निश्चय नहीं होता।" बीरबल का उपनाम 'ब्रह्म' था। इसी में उनका कुल छिपा हुआ है। यह 'ब्रह्मभट्ट' थे। अपनी जाति के नाम का पूर्वार्द्ध ही यह अपने उपनाम या छाप के रूप में प्रयुक्त करते थे। इनका जन्म संवत् 1582 में एवं मृत्यु माघ सुदी 12 को संवत् 1642 में हुई।

(63) पृष्ठ 203, गंग ।

"किसी नवाब या राजा की आज्ञा से ये हाथी से चिरवा डाले गए थे ।"

गंग बहुत निर्भीक होकर बात करते थे । जहाँगीर की बेगम नूरजहाँ इनके एक छंद पर इनसे रुष्ट हो गयी । जहाँगीर तो शराब में मस्त रहता था, हुकूमत नूरजहाँ ही करती थी । इसी नूरजहाँ के हुक्म से गंग हाथी के पैरों के तले कुचलवा दिये गए थे ।

(64) पृष्ठ 204, गंग ।

"पुराने संग्रह ग्रन्थों में इनके बहुत से कवित्त मिलते हैं ।"

इनके समस्त उपलब्ध कवित्तों का संग्रह 'गंग कवित्त' नाम से श्री बटेकृष्ण द्वारा सम्पादित होकर नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा आकर ग्रन्थमाला में प्रकाशित हुआ है । इसमें 440 छंद हैं ।

(65) पृष्ठ 208, मनोहर कवि ।

"इन्होंने शत प्रश्नोत्तरी नाम की किताब बनाई है ।"

शत प्रश्नोत्तरी अकबरी दरबार के मनोहर की रचना नहीं है । यह मनोहर दास निरंजनी की रचना है ।

(66) पृष्ठ 206, प्रथम कवित्त ।

बलभद्र के पहले कवित्त के तुक 'बाल मैं,' 'काल मैं,' 'ताल मैं' एवं 'डोर मैं' हैं । स्पष्ट ही चौथा तुक किसी प्रकार भ्रष्ट हो गया है । यह 'डोर मैं' वस्तुत: 'जाल मैं' है । यह बलभद्र 'नखशिख' का कवित्त 11 है ।

(67) पृष्ठ 207, जमाल ।

"इनका कोई ग्रन्थ तो नहीं मिलता, पर कुछ संग्रहीत दोहे मिलते हैं ।"

जमाल के 275 दोहों, 2 सोरठों एवं 1 छप्पय का संकलन महावीर सिंह गहलौत द्वारा 'जमाल दोहावली' नाम से 1945 ई० में सम्पादित प्रकाशित हुआ है ।

(68) पृष्ठ 208, केशवदास प्रथम अनुच्छेद ।

इस अनुच्छेद में केशव से पहले के समझे जाने वाले तीन रीति कवियों का उल्लेख हुआ है । इनमें से कृपाराम की रचना हित तरंगिणी 1598 की न होकर 1798 की है । करनेस कवि के कर्णाभरण, श्रुति भूषण, भूप भूषण नामक तीन अलंकार ग्रन्थ कहे जाते हैं । ये सम्भवत: किसी एक ही ग्रन्थ के तीन नाम हैं । ये मिलते नहीं । करनेस कवि अकबरी दरबार में थे और केशव के समकालीन थे । इनके ग्रन्थ केशव कृत रसिक प्रिया (सं० 1648) और कवि प्रिया (सं० 1658) से पहले के हैं, इनका कोई भी प्रमाण नहीं है । अत: केशव के पूर्ववर्तियों में इनकी गणना करना व्यर्थ ही है । हो सकता है महाकवि केशव से प्रभावित होकर ही इन्होंने अपना अलंकार ग्रन्थ लिखा है । हाँ, मोहनलाल मिश्र कृत 'शृंगार सागर' (सं० 1616) केशव से पहले की रचना है ।

(69) पृष्ठ 209, प्रथम अनुच्छेद ।

केशव के सात ग्रन्थों की सूची शुक्ल जी ने दी है । इनके दो और ग्रन्थ 'नख

शिख' और 'छंद नाम माला' हैं। इन नवों का सम्पादन आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने किया है जो तीन भागों में 'केशव ग्रन्थावली' नाम से हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद से प्रकाशित हुए हैं। प्रथम भाग में रसिक प्रिया और कवि प्रिया हैं, द्वितीय भाग में रामचन्द्रिका, नख शिख और छंदनाम माला हैं, तृतीय भाग में रतन बावनी; जहाँगीर जस चन्द्रिका, वीरसिंह देव चरित और विज्ञानगीता हैं।

(70) पृष्ठ 213, द्वितीय अनुच्छेद।

'केसव केसनि अस करि' यह दोहा केशव की मौलिक रचना नहीं है, संस्कृत के एक श्लोक का अनुवाद है। इसके प्रसंग की जो बात कही गई है, वह शुद्ध कल्पना प्रसूत है।

(71) पृष्ठ 216, रहीम।

रहीम का जन्मकाल संवत् 1610 दिया गया है, जो ठीक नहीं। रहीम का जन्म माघ महीने में कृष्ण पक्ष में गुरुवार को संवत् 1613 में हुआ था।

(72) पृष्ठ 222, बनारसीदास।

'ये जौनपुर के रहने वाले एक जैन जौहरी थे जो आमेर में भी रहा करते थे।"

सम्भवत: मुद्रा राक्षसों की कृपा से 'आगरे' का 'आमेर' हो गया है। बनारसी दास आगरा में रहते थे, आमेर में नहीं।

(72 अ) पृष्ठ, 222।

शुक्ल जी ने 'नाटक समय सार' को 'कुंद कुंदाचार्य कृत ग्रन्थ का सार' कहा है। यह ठीक नहीं।

कुन्द कुन्दाचार्य के ग्रन्थ का नाम है 'समय पाहुड़।'

श्री अमृत चन्द्राचार्य ने इसकी 'आत्मख्याति' नामक टीका लिखी है। कहीं-कहीं गाथाओं की टीका कसे के अनन्तर अमृत चन्द्राचार्य ने उसी विषय सम्बन्धी कुछ स्वरचित श्लोक भी लिख दिये हैं। इन श्लोकों को 'कलसा' कहते हैं। इनकी संख्या 277 है। बनारसीदास ने इसी 'कलसा' का भावानुवाद किया है। कलसा का यह भावानुवाद ही 'समय सार नाटक' नाम से प्रसिद्ध है।

वस्तुत: यह एक तत्व ग्रन्थ है। यह नाटक नहीं है, यह प्रबंध भी नहीं है।

अमृत चंद्राचार्य ने टीका में नाटक का रूपक बाँधा है, इसी से 'समय पाहुड़' और 'समय सार' नाटक नाम से प्रख्यात हो गए।

कुन्द कुन्दाचार्य के तीन ग्रंथ हैं—1. पंचास्ति काय, 2. प्रवचन सार, 3. समय पाहुड़। ये तीनों जैन सम्प्रदाय में 'सार त्रय' नाम से प्रसिद्ध हैं। इसीलिए 'समय पाहुड़', समय सार नाम से भी प्रसिद्ध हो गया।

(73) पृष्ठ 223, सेनापति, प्रथम वाक्य।

"ये अनूप शहर के रहनेवाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे।"

यह कथन 'गंगा तीर बसति अनूप जिन पाई है' के ही आधार पर किया गया

है। 'अनूप' 'बसति' का विशेषण हो सकता है। अनूप शहर ही सेनापति का जन्म स्थान है, इसका कोई अन्य प्रमाण नहीं है।

(74) पृष्ठ 225, द्वितीय अनुच्छेद।

'इनका एक ग्रंथ काव्य कल्पद्रुम भी प्रसिद्ध है।'

यह ग्रंथ प्रसिद्ध ही भर है। संभवतः यह कवित्त रत्नाकर का ही एक अन्य नाम है, कोई अन्य ग्रंथ नहीं।

(75) पृष्ठ 228, पुहकर कवि।

"ये परतापपुर (जिला मैनपुरी) के रहनेवाले थे। पर गुजरात में सोमनाथजी के पास भूमिगाँव में रहते थे।"

खोज रिपोर्ट 1920/128 पृष्ठ 349 के अनुसार अंतर्वेद में पाँचाल देश के अंतर्गत 'सोमतीर्थ' है, जो भोगाँव जिला मैनपुरी के पास है। यह 'सोमतीर्थ' है, यह न सोमनाथ है और न यह गुजरात में है।

(76) पृष्ठ 229, सुन्दर।

'सुन्दर शृंगार' का रचनाकाल मुद्राराक्षसों की कृपा से 1688 के स्थान पर 1388 छप गया है—केवल 300 वर्ष पूर्व।

(77) पृष्ठ 232, प्रथम अनुच्छेद।

कृपाराम, मोहनलाल और करनेस को यहाँ भी केशव का पूर्ववर्ती माना गया है। इसमें केवल मोहनलाल केशव के पूर्ववर्ती हैं; कृपाराम परवर्ती हैं; करनेस सम-कालीन परवर्ती।

(78) पृष्ठ 238।

'ब्रज मागधी मिलै अगर नाग भवन भारवानि'

'अगर' नहीं 'अमर'। यह छापे की भूल है। अमर भाषा से अभिप्राय संस्कृत से है।

(79) पृष्ठ 242, चिन्तामणि त्रिपाठी।

'शिवसिंह सरोज' से शुक्ल जी ने यह उद्धरण दिया है :

"बहुत दिन तक नागपुर में सूर्यवंशी मकरंदशाह के यहाँ रहे और उन्हीं के नाम पर 'छंद विचार' नामक पिंगल का बहुत भारी ग्रंथ बनाया।"

चिंतामणि ने 'सूरजवंशी' भोंसला लसतसाह 'मकरंद' के लिए छंद विचार नामक पिंगल ग्रंथ रचा। इसमें संदेह नहीं। पर उक्त मकरंद शाह नागपुर के थे, यह ठीक नहीं। उस समय तक मराठों का अधिकार ही नागपुर पर नहीं हो पाया था। यह वह 'माल मकरंद' या मालो जी हैं, जो शिवा जी के पितामह और शाह जी के पिता थे तथा जिनका उल्लेख भूषण ने भी शिवराज भूषण में किया है।

(80) पृष्ठ 242 चिंतामणि त्रिपाठी।

चिंतामणि त्रिपाठी कभी-कभी 'मणि लाल' छाप भी रखते थे। छापे की भूल से 'माणि माल' हो गया है।

(81, 82, 83) पृष्ठ 243, बेनी।

बेनी के सम्बन्ध में तीन भूलें हैं :

(क) इन्हें असनी का वन्दीजन कहा गया है। यह असनीवासी उपमन्यु गोत्र के वाजपेयी (कान्यकुब्ज ब्राह्मण) थे।

(ख) इनको 1700 के आसपास विद्यमान कहा गया है। यह सम्वत् 1817 में विद्यमान थे।

(ग) कहा जाता है कि इनका कोई ग्रंथ नहीं मिलता। इनका 'रसमय' नामक नायिका भेद का ग्रंथ खोज में मिला है। इसमें 450 छंद हैं। इसी का रचनाकाल सं० 1817 वि० है। कवि ने अपने को असनीवासी कहा है। ग्रंथ निहचल सिंह के लिए बना।

(84) पृष्ठ 245 अन्त में, जसवन्त सिंह।

अलंकार रत्नाकर नामक टीका का रचना काल सम्वत् 1793 कहा है। यह 1798 है। यह छापे की भूल है।

(85) पृष्ठ 246, बिहारी।

बिहारी सतसई की टीकाओं में 45 टीकायें तो बहुत प्रसिद्ध हैं। यह छापे की भूल है। 45 नहीं, 4-5 (चार-पांच)।

(86) पृष्ठ 252, मतिराम।

'इनका छंदसार नामक पिंगल का ग्रंथ महाराज शंभुनाथ सोलंकी को समर्पित है।

'छंदसार' का एक अन्य नाम 'वृत्त कौमुदी' भी है। इसकी रचना सम्वत् 1758 में हुई। यह सुप्रसिद्ध मतिराम की रचना नहीं है। यह एक अप्रसिद्ध मतिराम की रचना है। इसकी रचना इन अप्रसिद्ध मतिराम ने सरूपसिंह बुन्देला के लिए की थी। यह ग्रंथ शम्भुनाथ सोलंकी के लिए नहीं रचा गया।

(87) पृष्ठ 254, भूषण।

"चित्रकूट के सोलंकी राजा रुद्र ने इन्हें 'कवि भूषण' की उपाधि दी थी।"

रुद्र ने नहीं, रुद्र के सुत हृदयराम ने 'कवि भूषण' की उपाधि दी थी।

(88) पृष्ठ 256, भूषण, पंक्ति 3।

भूषण के तीन ग्रंथ—शिवराज भूषण, शिवा बावनी, छत्रसाल दशक के मिलने का उल्लेख शुक्ल जी ने किया है। भूषण ने शिवराज भूषण नामक ग्रंथ लिखा था। शिवा बावनी और छत्रसाल दशक में यद्यपि भूषण की ही रचनाएँ संकलित हैं, पर इन नामों से भूषण ने कोई ग्रंथ नहीं लिखे थे। ये दोनों संकलन इन नामों से 1946 वि० में कच्छभुज के एक पुस्तक विक्रेता भाटिया गोवर्द्धन दास लक्ष्मीदास द्वारा संकलित प्रकाशित हुए।

(89) पृष्ठ 258, कुलपति मिश्र।

शुक्ल जी ने एक बार लिखा है कि "इनके रस रहस्य का रचनाकाल कार्तिक

कृष्णा 11 सम्वत् 1727 है।'' शुक्ल जी का यह कथन ठीक है। पर खोज में इनके और प्राप्त ग्रंथों में 'रस रहस्य' का पुनः उल्लेख करते हैं और तारीफ की बात तो यह है कि यहाँ उसका रचनाकाल सम्वत् 1724 दे देते हैं।

(90, 91, 92) पृष्ठ 261, कालिदास त्रिवेदी।

छापे की दो भ्रष्ट भूलें हैं। कालिदास के आश्रयदाता का नाम 'जोगाजीत सिंह' है, छपा है 'जोगजीत सिंह।' इसी प्रकार ग्रंथ का नाम है 'वार वधू विनोद,' छपा है 'वर वधू विनोद', 'राधामाधव बुध मिलन विनोद' को 'वार वधू विनोद' ग्रंथ से भिन्न समझा गया है। वस्तुतः दोनों एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं और ग्रंथ का ठीक नाम है—'वधू विनोद।'

(93) पृष्ठ 261, कालिदास हजारा।

जिसे शिवसिंह ने कालिदास हजारा समझा था, वह वस्तुतः कोई अन्य संग्रह है जो सम्वत् 1875-1900 के बीच किसी समय प्रस्तुत किया गया। शिवसिंह सेंगर ने इस संग्रह के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम खड़ा कर दिया है।

(94) पृष्ठ 262, राम।

जिस रामजी कवि की कविता हजारा में थी, सरोज में उनका समय सम्वत् 1692 दिया गया है, न कि 1703। हाँ, शृंगार सौरभ के रचयिता राम भट्ट फर्रुखाबादी का ठीक समय 1803 दिया गया है (1703 नहीं); पर इनकी कविता के हजार होने का उल्लेख इसमें नहीं किया गया है। अतः शुक्ल जी ने जो सम्वत् 1730 दिया है, यह भी अशुद्ध है। साथ ही सरोज में उपस्थिति काल दिया गया है, न कि उत्पत्ति काल। जिस 'उ०' शब्द का 'उत्पंन्न' अर्थ लोगों ने किया है, वह सरोज के प्रथम एवं द्वितीय संस्करणों में है ही नहीं। यह नवम्बर 1883 ई० में होने वाले तृतीय संस्करण से घुस आया है।

(94 अ) पृष्ठ 262, कवि रान।

शुक्ल जी के अनुसार "खोज में एक 'हनुमान नाटक' भी इनका पाया गया है।" यह ठीक नहीं। यह ग्रंथ हृदय राम का है जो अपनी छाप 'राम' रखते थे। इस सम्बन्ध में ब्रजरत्नदास जी का यह विचार द्रष्टव्य है :

"सन् 1909-11 की रिपोर्ट में इस नाटक की दो प्रतियां मिली थीं, जिनमें एक में अन्त का भाग नहीं है और दूसरे में आरम्भ का नहीं है। प्रथम (संख्या 119) में 'हिरदेराम' नाम आरम्भ में दिया है और द्वितीय में (संख्या 243) अन्त में कवि राम दिया है। बस दो कवि और दो अनुवाद मान लिए गए और 'विनोद' में भी यह भूल पहुँच गई। यदि रिपोर्ट लेखक जरा कष्ट उठाकर प्रथम का मध्य अंश और द्वितीय का प्रारम्भ अंश मिलान कर लेते, तो एक ही कवित्त दोनों में पाते तथा यह भ्रम न फैलता।" —हिन्दी नाटक साहित्य, पृष्ठ 54।

(95, 96, 97, 98) पृष्ठ 263, नेवाज।

नेवाज के सम्बन्ध में चार भूलें हैं :

(क) शिवसिंह ने नेवाज का उपस्थिति काल सं० 1739 दिया है, इन्होंने जन्म-काल नहीं दिया है।

(ख) 'शकुन्तला' का रचनाकाल सम्वत् 1737 नहीं है, यह अंक विपर्यय का परिणाम है। इसका रचनाकाल सम्वत् 1773 वि० है।

(ग) ग्रंथ का नाम 'सुधा तरंगिणी' अथवा 'शकुन्तला—नाटक-कथा' है; 'शकुन्तला नाटक' नहीं। यह नाटक है भी नहीं; प्रबन्ध है।

(घ) नेवाज औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के यहाँ नहीं थे। यह फर्रुखशियर को दिल्ली का सम्राट बनने में सहायता देने वाले (सं० 1770 वि०) मोसवी खाँ के आश्रय में थे। इसी मोसवी खाँ को फर्रुखशियर ने सं० 1770 में आजम खाँ उपाधि दी थी। इसी आजम खाँ के लिए नेवाज ने उक्त ग्रंथ रचा। ग्रंथ के आरम्भ में सभी सूचनाएं दी गई हैं।

(99) पृष्ठ 270, कवीन्द्र उदयनाथ।

उदयनाथ कवीन्द्र का एक ही ग्रंथ सुलभ है, जिसके सात नाम हैं। इन सातों में से दो हैं—'रस चंद्रोदय' और 'विनोद चन्द्रिका'। ये दो ग्रंथ नहीं हैं। ग्रथ का रचनाकाल सं० 1804 है शुक्ल जी ने विनोद चन्द्रिका का रचनाकाल सम्वत् 1777 और रस चन्द्रोदय का सं० 1804 दिया है :

(100, 101, 102), पृष्ठ 274, कृष्ण कवि।

कृष्ण कवि के सम्बन्ध में तीन भूलें हैं।

(क) बिहारी सतसई की कवित्तबद्ध टीका करने वाले कृष्ण कवि मथुरा के रहने वाले ककोर कुल के माथुर ब्राह्मण थे। यह बिहारी के पुत्र 'कृष्ण' से भिन्न हैं और उत्तरकालीन हैं।

(ख) कृष्ण कवि के आश्रयदाता आयामल्ल सवाई जयसिंह (शासनकाल सं० 1756-1800 वि०) के मंत्री थे, न कि बिहारी के आश्रयदाता मिर्जा राजा जयसिंह (शासनकाल सं० 1678-1724 वि०) के। मिर्जा राजा जयसिंह-रामसिंह-कृष्णसिंह-विष्णुसिंह-सवाई जयसिंह।

(ग) उक्त टीका अगहन सुदी 5 रविवार सम्वत् 1782 को पूर्ण हुई। इसके लिए यह अनुमान करना कि यह 1785 और 1790 के बीच बनी होगी, व्यर्थ है।

(103, 104) पृष्ठ 277, भिखारीदास।

'नाम प्रकाश' और 'अमर प्रकाश' एक ही ग्रन्थ के दो नाम हैं। यह संस्कृत अमर कोष की पद्यबद्ध टीका है। इसी प्रकार 'छन्द प्रकाश' कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है। यह 'छंदोर्णव' का परिशिष्ट है जिसे काशी नरेश महाराज उदित नारायण सिंह के किसी दरबारी कवि ने प्रस्तुत किया था।

(105) पृष्ठ 279, प्रथम पंक्ति।

'उपादान लक्षणा' के स्थान पर 'उपादान लक्षण' छप गया है।

(106) पृष्ठ 282, तोष ।

तोष निधि कंपिला के रहने वाले थे । यह राजा दौलत सिंह जिला एटा राज्य राजौर के दरबारी कवि थे । इन्होंने निम्नांकित 9 ग्रन्थ रचे थे :

1—भारत पंचासिका या महाभारत छप्पनी 2—दौलत चन्द्रिका, 3—राजनीति, 4—आत्मशिक्षा, 5—दुर्गा पच्चीसी या भैयालाल पचीसी, 6—नायिका भेद (अपूर्ण), 7—व्यंग्य शतक या विनय शतक, 8—नख शिख, 9—रति मंजरी ।

इनमें रति मंजरी का रचनाकाल सम्वत् 1794 है ।

'तोष' के नाम से जो कवि प्रसिद्ध हैं, उनका पूरा नाम तोषमार्ग शुक्ल है । यह तोषनिधि से 100 वर्ष पहले हुए हैं । यह इलाहाबाद जिले में सिंगरौर के रहने वाले थे । इन्होंने 'सुधानिधि' नामक श्रृंगार रस एवं नायिका भेद का ग्रंथ सम्वत् 1691 लिखा था । इन्होंने यह सारी सूचना सुधा निधि में दे दी है ।

आचार्य शुक्ल ने इन दोनों कवियों को एक कर दिया है और सुधानिधि का रचनाकाल सम्वत् 1791 दे दिया है ।

(107) पृष्ठ 283, दलपतिराय वंशीधर ।

अलंकार रत्नाकर का रचनाकाल सम्वन् 1798 है, न कि सम्वत् 1792, जैसाकि शुक्ल जी ने दिया है ।

(108) पृष्ठ 284, सोमनाथ ।

शुक्ल जी के अनुसार "माधव विनोद नाटक शायद मालती माधव के आधार पर लिखा हुआ प्रेम प्रबन्ध है ।"

शायद नहीं, यह निश्चित रूप से मालती माधव के आधार पर है ।

(109) पृष्ठ 286, रसलीन, दूसरा अनुच्छेद ।

शुक्ल जी के अनुसार "रसलीन ने अपने को दोहों की रचना तक ही रखा ।" रसलीन ने दोहों के अतिरिक्त 98 कवित्त सवैये भी लिखे हैं । काशी नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित 'रसलीन ग्रंथावली' में संकलित है ।

(110) पृष्ठ 292, कुमारमणि भट्ट ।

'रसिक रसाल' की रचना सम्वत् 1776 में हुई थी, न कि 1803 के लगभग किसी अनिश्चित काल में । यह ग्रन्थ कंठमणि शास्त्री द्वारा संपादित होकर 1994 वि॰ में विद्या विभाग कांकरोली द्वारा प्रकाशित हो चुका है ।

(111, 112) पृष्ठ 293, रूपसाहि ।

(क) कवि का नाम 'रूपसाहि' है, 'रूपसाही' नहीं ।

(ख) रूप विलास का रचनाकाल सम्वत् 1813 हैं, 1811 नहीं ।

(113) पृष्ठ 293, ऋषिनाथ ।

ऋषिनाथ कृत अलंकार मणिमंजरी का रचनाकाल सम्वत् 1830 बसंत पंचमी सोमवार है, न कि सम्वत् 1831 वि० ।

(114) पृष्ठ 294, बैरीलाल ।

'दोहे बहुत सरल हैं और अलंकारों के गुच्छे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।'

'गुच्छे उदाहरण' नहीं, 'अच्छे उदाहरण'। यह प्रेस की कृपा है।

(115) पृष्ठ 294, दत्त ।

दत्त 'माढ़ी' के रहने वाले नहीं थे, 'साढ़ि' के रहने वाले थे, इनकी 'लालित्य लता' का रचनाकाल सम्वत् 1791 वि० है।

(116) पृष्ठ 294-95, रतन कवि ।

शुक्ल जी ने दो रतन नामक भिन्न कवियों को मिला दिया है :

(1) रतन-श्री नगर गढ़वाल के राजा फतहसाह (शासनकाल सम्वत् 1741-73) के लिए इन्होंने फतह भूषण नामक अलंकार ग्रंथ लिखा था।

(2) रतन-पन्ना नरेश सभासिंह के पुत्र हिंदूपति (शासनकाल सम्वत् 1813-34 वि०) के लिए इन्होंने सम्वत् 1827 वि० में अलंकार दर्पण की रचना की थी।

फतह भूषण के रचयिता रतन का समय सरोज में सम्वत् 1798 दिया गया है। यह जन्मकाल नहीं है। सरोज में जन्मकाल देने की पद्धति नहीं है।

(117) पृष्ठ 296, चंदन ।

चंदन के कुछ ग्रन्थों के नाम अशुद्ध दे दिये गये हैं, जैसे 'शृंगार सार' के स्थान पर 'शृंगार सागर', तत्व संज्ञा के स्थान पर 'तत्व संग्रह'। शुक्ल जी ने एक ग्रंथ का नाम 'पथिक बोध' और एक का 'पत्रिका बोध' दिया है, सम्भवतः ये दोनों एक ही ग्रंथ हैं।

(118) पृष्ठ 297, देवकीनंदन ।

देवकीनंदन के पिता का नाम शिवनाथ था; शरवली तो इनके पितामह थे (पिता नहीं) शृंगार चरित्र का रचनाकाल सम्वत् 1840 (1841 नहीं) और अवधूत भूषण का सम्वत् 1856 (1857 नहीं) है।

(119) पृष्ठ 298, भान कवि ।

भान कवि का पूरा नाम हरिभानु था, छाप भान थी। शिवसिंह सरोज में 979 संख्या पर हरिभानु और उनके नरेन्द्र भूषण का उल्लेख है। खोज रिपोर्ट 1923/152 पर उक्त ग्रन्थ का विवरण है। प्रति शिवसिंह सेंगर के पुस्तकालय की है। स्वयं भान कवि राजा जोरावर सिंह के पुत्र नहीं थे। इनके आश्रयदाता रनजोर सिंह जोरावर सिंह के पुत्र थे। ये मूलक मिश्रबन्धु विनोद (91) की भूलें हैं।

(120) पृष्ठ 300, बेनी वंदीजन ।

टिकैत राय प्रकाश 1849 में नहीं बना। इसका प्रारम्भ भादो सुदी 5 सम्वत् 1849 को हुआ। इसकी समाप्ति संवत् 1851 में हुई।

(121) पृष्ठ 305, यशोदानन्दन ।

सरोज में इनका उपस्थितिकाल सं० 1828 दिया गया है, यह जन्मकाल नहीं है। 1827 में इन्होंने 'बरवै नायिका भेद' की रचना की थी।

(122, 123) पृष्ठ 305, करन कवि।

(क) "ये षट्कुल कान्यकुब्जों के अन्तर्गत पांडे थे।"

यह पांडे नहीं थे, यह तो भट्ट थे। उक्त विवरण इनके गुरु निहाल का है—

षटकुल पांड़े पहितिया, भारद्वाजी बंस
गुननिधि पाँड निहाल के, वंदौं जगत प्रसंस

(ख) बिहारी सतसई की साहित्य चन्द्रिका टीका का रचनाकाल सम्वत् 1794 वि० है। अतः सं० 1860 को इनका रचनाकाल मानना ठीक नहीं।

(124) पृष्ठ 306, गुरदीन पांड़े।

गुरदीन पांड़े के ग्रन्थ का नाम 'बाग मनोहर' नहीं है; 'वाक मनोहर' है।

(125) पृष्ठ 313, ग्वाल।

हम्मीर रासो का रचनाकाल सं० 1883 है; 1881 नहीं।

(126) पृष्ठ 315, प्रतापसाहि।

प्रतापसाहि के ग्रन्थों में एक 'जयसिंह प्रकाश' चढ़ा हुआ है। इसका रचना काल संवत् 1851 दिया गया है, जिसे 1852 होना चाहिए। यह साहित्य का ग्रन्थ न होकर ज्योतिष का ग्रन्थ है। जयसिंह ने प्रसन्न होकर फादिलपुर गाँव कवि को दिया था। विक्रमाजीत और रतनसिंह के पश्चात् चरखारी में एक जयसिंह नामक राजा अवश्य हुए हैं; पर इनका शासनकाल 1937-63 वि० है। जयसिंह प्रकाश वाले जयसिंह से भिन्न और उनसे प्रायः 100 वर्ष बाद हुए हैं। मुझे इस ग्रन्थ के इन प्रतापसाहि का होने में पूरा संदेह है।

(127) पृष्ठ 328, छत्रसिंह कायस्थ।

छत्रसिंह के आश्रयदाता कल्याण सिंह किसी 'अमरावती' के राजा नहीं थे। भदावर राज्य (ग्वालियर) की राजधानी अँटेर थी, यह पुरी अमरावती के सदृश थी, यहाँ के निवासी विबुध सदृश थे और राजा कल्याण सिंह आखंडल (इंद्र) के सदृश—

नग्गर आहि अमरावती, वासी विवुध समान
आखंडल सौं लसत तहँ; भूपति सिंह कल्यान

(128) पृष्ठ 328, वैताल।

सरोज में वैताल का उपस्थितिकाल, न कि जन्मकाल, संवत् 1734 दिया गया है, जो अशुद्ध है। यह चरखारी नरेश विक्रमसाहि (शासनकाल 1839-86) के आश्रित थे। इनका भी रचनाकाल 1839-86 होना चाहिए।

(129) पृष्ठ 329, आलम।

शुक्ल जी ने 'माधवानल काम कंदला' के रचयिता आलम को प्रसिद्ध प्रेमी आलम से भिन्न मान लिया है और इसीलिए उसका वर्णन भक्तिकाल के ही अन्तर्गत होना चाहिए। माधवानल काम कंदला का रचनाकाल सन् 911 हिजरी (संवत् 1639-40 वि०) है। सरोज में उद्धृत जिस छंद के आधार पर आलम का समय सं 1740-60 किया जाता है, वह आलम का नहीं है और न इसके आधार पर यह कहा जा

सकता है कि आलम औरंगजेब के दूसरे बेटे मुअज्जम के आश्रय में रहते थे जो सन् 1707 ई० (संवत् 1764 वि०) में गद्दी पर बैठा था। उक्त छंद उक्त मुअज्जम के दरबारी कवि लाला जैतसिंह महापात्र का है और मुअज्जम के नाम पर लिखे गए उनके अलंकार ग्रन्थ 'माजम प्रभाव' (रचनाकाल संवत् 1727 वि०) की जो प्रति नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में सुरक्षित है, उसके पहले जैनसिंह के ही स्वरचित प्रशस्ति सम्बन्धी सैकड़ों संलग्न छंदों में से प्रथम है। इस छंद की रचना संवत् 1762 के आसपास हुई होगी।

(130) पृष्ठ 332, श्रीधर मुरलीधर।

इस कवि का वर्णन एक बार रीति कवियों में भी पृष्ठ 269 पर हो चुका है।

(131) पृष्ठ 336, घनआनन्द।

शुक्ल जी के अनुसार घनानन्द संवत् 1796 में नादिरशाही में मारे गए। यह ठीक नहीं। वस्तुतः ये अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण में संवत् 1817 में मारे गए।

(132) पृष्ठ 336, प्रथम अनुच्छेद।

"संवत् 1796 में जब नादिरशाह" के स्थान पर "संवत् 1817 में जब अहमदशाह अब्दाली" होना चाहिए।

(133, 134) पृष्ठ 337, द्वितीय पंक्ति।

'कोकसार' प्रसिद्ध घनानंद की रचना नहीं है, यह हिसार पंजाब निवासी आनंद नामक कवि की रचना है।

'कृपाकांड' कोई ग्रन्थ नहीं है। यह वस्तुतः 'कृपाकंद' है। रोमन लिपि ने 'कंद' को 'कांड' में बदलने का यह कुकांड किया है।

(135) पृष्ठ 344, रसनिधि।

शुक्ल जी के अनुसार रसनिधि दतिया के जमींदार थे और इनका संवत् 1717 तक वर्तमान रहना पाया जाता है

रसनिधि का असल नाम पृथ्वीसिंह था, यह दतिया के राजा दलपत राव के छोटे पुत्र थे। दलपतराव का शासनकाल संवत् 1740-64 वि० है। पृथ्वीसिंह को सेनुहड़ा की जागीर मिली थी। राज्य इनके बड़े भाई रामचंद्र को मिला था। पृथ्वीसिंह को सं० 1769 वि० में आजमशाह के आक्रमण के समय जहाँदारशाह के सेनापति के रूप में ख्याति मिली थी। अतः इनका कम से कम संवत् 1770 तक वर्तमान रहना पाया जाता है। 1717 में तो शायद यह उत्पन्न भी न हुए रहे हों।

(136, 137, 138) पृष्ठ 344-45, रीवांनरेश विश्वनाथ सिंह जू देव।

(1) विश्वनाथ सिंह का शासनकाल संवत् 1870- 1911 दिया गया है। यह सं० 1892 में सिंहासनासीन हुए थे।

(2) कुछ ग्रन्थों के नाम गलत दिए गए हैं—

	अशुद्ध दिए नाम		**शुद्ध नाम**
(क)	गीता रघुनन्दन शतिका	—	गीत रघुनन्दन सटीक

(ख) गीता रघुनन्दन प्रामाणिक — गीत रघुनन्दन प्रामाणिक

(ग) वेदांत पंचक शतिका — वेदांत पंचक सटीक

'गीत रघुनंदन' 'गीत गोविन्द' के ढंग का सीताराम सम्बन्धी श्रृंगारी गीति काव्य है। 'शतिका' तो रोमन अक्षरों की कृपा से हो गया है—मूलतः यह 'सटीक' है।

(3) शुक्ल जी के अनुसार भारतेन्दु हरिश्चन्द ने 'आनन्द रघुनन्दन' की हिंदी का प्रथम नाटक माना है। भ्रम से शुक्ल जी ने ऐसा लिख दिया है। भारतेन्दु ने इसका उल्लेख किया है, पर नाटक नहीं माना है। इन्होंने अपने पिता गिरिधर दास के 'नहुष नाटक' को हिन्दी का पहला नाटक माना है।

(139) पृष्ठ 348-49, नागरीदास।

नागरीदास के कुछ ग्रन्थों के अशुद्ध नाम दे दिए गये हैं :

अशुद्ध नाम	**शुद्ध नाम**
(1) गोधन आगमन दोहन	(1) गोधन आगम
(2) आनंद लग्नाष्टक	(2) दोहनानंद अष्टक
(3) आनन्द लग्नाष्टक	(3) लग्नाष्टक
(4) नैन रूप रस	(4) नैन रूपारस
(5) इश्क चलन	(5) इश्क चमन
(6) सुजानानंद	(6) सजनानंद
(7) वैराग्य वल्ली	(7) वैराग्य वटी
(8) छूटक विधि	(8) छूटक पद
(9) पारायण विधि प्रकाश	(9) श्री मद्भागवत पारायण विधि प्रकाश।
(10) चचरियाँ	(10) चर्चरियाँ
(11) रसानुक्रम के दोहे	(11) रस अनुक्रम के दोहा
(12) साँझी फूल वीनन संवाद	(12) साँझी फूल वीनन समै संवाद अनुक्रम
(13) बसंत वर्णन	(13) बसंत वर्णन के कवित्त
(14) रसानुक्रम के कवित्त	(14) रास अनुक्रम के कवित्त
(15) फाग खेलन समेतानुक्रम के कवित्त	(15) फाग खेल समै अनुक्रम

(140) पृष्ठ 352, बख्शी हँसराज।

शुक्ल जी के अनुसार "इनका जन्म संवत् 1799 में पन्ना में हुआ था।"

यह राठ जिला हमीरपुर में उत्पन्न हुए थे। इनका रचनाकाल संवत् 1789-1811 वि० है। इनका जन्मकाल संवत् 1760 के आस-पास होना चाहिए।

(141) पृष्ठ 356, गिरिधर कविराज।

शुक्ल जी के अनुसार "शिवसिंह ने इनका जन्म संवत् 1770 दिया है।" शिवसिंह ने उपस्थिति संवत् दिया।

(142) पृष्ठ 353, भगवत रसिक।

भगवत रसिक का रचना काल सं० 1830-50 दिया गया है। इनके गुरु ललित-मोहिनी दास की मृत्यु संवत् 1858 में हुई थी। भगवत रसिक ने आचार्यत्व नहीं स्वीकार किया है और टट्टी सम्प्रदाय की आचार्य परम्परा समाप्त हो गई। अतः यह 1858 में और उसके बाद में भी उपस्थित रहे।

(143) पृष्ठ 359, गुमान।

शुक्ल जी ने दो गुमानों को मिला दिया है :

1. गुमान मिश्र—इन्होंने संवत् 1824 में (1800 में नहीं) श्री हर्ष के नैषध चरित का अनुवाद 'काव्य कलानिधि' नाम से किया था। इसके अन्य ग्रन्थ हैं—गुलाल चन्द्रोदय (सं० 1820) और अलंकार दर्पण (सं० 1818)। यह साँड़ी जिला हरदोई के रहने वाले मिश्र थे और पिहानी के अली अकबर खाँ के यहाँ थे।

2. गुमान तिवारी—यह छतरपुर बुन्देलखंड के निवासी थे। गोपाल मणि त्रिपाठी के पुत्र थे। इसके अन्य तीन भाई दीपसाहि, खुमान और अमान थे। इन्होंने रामचरित मानस की पद्धति पर 'कृष्णायन' लिखा। कृष्ण चन्द्रिका का रचनाकाल सं० 1838 है। 'छंटाटबी' इनका पिंगल ग्रन्थ है।

प्रेस के भूतों ने 'खुमान' को 'सुमान' बना दिया है।

(144) पृष्ठ 362, भगवंत राम खीची।

भगवन्त राय के ग्रन्थ का नाम है 'हनुमान जी के कवित्त' या 'हनुमान पचासा', (हनुमान पचीसी नहीं)। यह ग्रन्थ 1923।43, 1926।49 ए बी खोज रिपोर्टों में विवृत हैं। इनमें कहीं भी रचलाकाल नहीं दिया गया है। साथ ही इनके दरबारी कवि सदानन्द के 'भगवन्त राय रासा' के अनुसार इनकी मृत्यु सं० 1797 वि० में कार्तिक शुक्ल 9 मंगलवार को अवध के नवाब सआदत के युद्ध में हो गई थी। ऐसी स्थिति में 'हनुमान पचासा' का रचनाकाल सं० 1817 ठीक नहीं।

(145) पृष्ठ 369, गोकुलनाथ पंक्ति 1, 2।

'नाम रत्नमाला' और 'अमरकोष भाषा' को दो ग्रन्थ कहा गया है। दोनों एक ही ग्रन्थ के दो नाम हैं।

(146) पृष्ठ 371, बोधा।

शुक्ल जी के अनुसार सरोज में दिया संवत् 1804 बोधा का जन्मकाल है। यह ठीक नहीं। सरोज के सम्वत् जन्मकाल न होकर उपस्थिति काल हैं और यह बोधा का उपस्थिति काल ही है।

(147) पृष्ठ 372, रामचन्द्र।

शुक्ल जी के अनुसार इन्होंने अपना कुछ भी परिचय नहीं दिया है। परन्तु यह परिचय-हीन नहीं हैं। श्री परशुराम चतुर्वेदी ने इनका परिचय उत्तरी भारत की सन्त परंपरा में दिया है।

यह बलिया जिले के चन्दाडीह गाँव के रहने वाले थे। इनका जीवन काल

सम्वत् 1820-90 वि० है। यह सीतारामीय पंथ के प्रवर्तक थे। यह पंथ बलिया जिले तक ही सीमित है। इनके गुरू का नाम झामदास कबीर पंथी है। यह चनरू पंडित भी कहे जाते थे।

(148) पृष्ठ 376, मनियार सिंह।

भाषा महिमा का रचनाकाल सं० 1849 है, 1841 नहीं। संभवत: प्रमाद से 1841 छप गया है।

(149) पृष्ठ 379, असनी वाले प्राचीन ठाकुर।

वस्तुतः दो ही ठाकुर हुए हैं—असनी वाले रीतिबद्ध ठाकुर और बुन्देलखंडी रीतिमुक्त ठाकुर। कालिदास हजारा के सम्बन्ध में मेरी जो नवीन शोध है उसके अनुसार उक्त हजारा 1750 के आसपास की रचना न होकर 1875 के आसपास की रचना है और प्राचीन ठाकुर का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

(150-151) पृष्ठ 386, खुमान।

(क) खुमान के ग्रंथ का नाम 'नीति विधान' नहीं है, 'नीति विधान' है।

(ख) नृसिंह चरित्र का रचना काल सम्वत् 1839 वि० है न कि 1879 वि०। इसकी तीन प्रतियाँ खोज में मिली हैं (1904/45, 1906/70 एच, 1926/237 सी) 1904/45 में 'मुनि' पाठ है; शेष में 'गुन'। यदि 'मुनि' पाठ ही ठीक हो तो रचना काल 1879 ही है

(152) पृष्ठ 389, चन्द्रशेखर।

इनके ग्रंथ का नाम 'गुह पंचालिका' नहीं है, 'गुरू पंचाशिका' है।

(153-154) पृष्ठ 395, पजनेस।

(क) शिवसिंह ने पजनेस के ग्रंथ का नाम 'मधु प्रिया' दिया है। शुक्लजी ने इसे 'मधुर प्रिया' बना दिया है।

(ख) 'नख शिख' कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है; मधु प्रिया का एक अंश मात्र है।

(155) पृष्ठ 399, द्विजदेव।

"ऋतुओं के वर्णन इनके बहुत ही मनोहर हैं।"

द्विजदेव ने 'शृंगार लतिका' के प्रारम्भ में केवल बसन्त ऋतु का वर्णन किया है। 'शृंगार बतीसी' में पावस वर्णन है। बसन्त एवं वर्षा को छोड़ द्विजदेव ने और किसी ऋतु का वर्णन नहीं किया है।

(156) पृष्ठ 405, अंतिम अनुच्छेद।

"सूरति मिश्र ने (सम्वत् 1767) संस्कृत से कथा लेकर वैताल पचीसी लिखी।"

वैताल पचीसी का यह अनुवाद पद्यवद्ध है और इसका यहाँ वर्णन अनस्थान है।

(157) पृष्ठ 409, अंतिम अनुच्छेद।

"अकबर के समय में गंगकवि ने 'चन्द छंद वरनन की महिमा' नामक एक

गद्य पुस्तक खड़ी बोली में लिखी थी ।"

बटेकृष्ण जी ने 'गंग कवित्त' की भूमिका में सिद्ध किया है कि यह सब चंद के रासो को परम प्राचीन सिद्ध करने के लिए जाल है; वस्तुत: गंग ने कोई ऐसा ग्रंथ नहीं लिखा। गंग के नाम पर बहुत बाद में किसी ने इसकी रचना की।

(158-159) पृष्ठ 412, पंक्ति 4-6 और पृष्ठ 414 पंक्ति 3-4।

(क) "अत: यह कहने की गुंजाइश अब जरा भी नहीं रही कि खड़ी बोली गद्य की परम्परा अंग्रेजों की प्रेरणा से चली।"

(ख) "अत: यह कहना कि अंग्रेजों की प्रेरणा से हिन्दी खड़ी बोली गद्य का प्रादुर्भाव हुआ, ठीक नहीं है।"

सर जार्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी खड़ी बोली गद्य के प्रादुर्भाव का श्रेय अंग्रेजों को दिया है:

"साथ ही यह यूरोपीय लोगों को हिन्दी नाम से ज्ञात और उन्हीं द्वारा आविष्कृत अद्भुत संकीर्ण भाषा के प्रादुर्भाव का भी युग था।"

—हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास, द्वि० संस्करण।

पृष्ठ 241 शुक्ल जी ने इन्हीं पंक्तियों का उत्तर दिया है।

(160-161) पृष्ठ 421, लल्लू जी लाल।

(क) 'राजनीति' का रचना काल सं० 1859 वि० है, न कि 1869 वि०।

(ख) 'माधव विलास' ब्रजभाषा चम्पू है, न कि पद्य संग्रह।

(162) पृष्ठ 442, प्रथम अनुच्छेद।

शुक्ल जी लिखते हैं कि फ्रेडरिक पिनकाट सम्वत् 1957 (नवम्बर 1895) में रीआ घास की खेती का प्रचार करने हिन्दुस्तान में आए। 1957 के स्थान पर 1951 एवं 1895 के स्थान पर 1894 चाहिए।

(163-164) पृष्ठ 453, अनुच्छेद 2, पृष्ठ 459, अनुच्छेद 2।

(क) "हरिश्चन्द्र ने सबसे पहले विद्या सुन्दर नाटक का बंगला से सुन्दर हिन्दी में अनुवाद करके सम्वत् 1925 में प्रकाशित किया।"

(ख) "सम्वत् 1925 में उन्होंने विद्यासुन्दर नाटक बँगला से अनुवाद करके प्रकाशित किया।"

विद्यासुन्दर किसी बँगला नाटक का अनुवाद नहीं है। संस्कृत के 'चौर पंचाशिका' नामक सुप्रसिद्ध काव्य ग्रंथ के आधार पर कोई बँगला काव्य लिखा गया था। इस बँगला काव्य के आधार पर भारतेन्दु ने अपना नाटक लिखा।

(165) पृष्ठ 460, अन्तिम अनुच्छेद।

भारतेन्दु ने महाराज विश्वनाथ सिंह देव कृत आनंद रघुनंदन नाटक को नाटक माना ही नहीं है। वे नहुष नाटक को पहला एवं राजा लक्ष्मण सिंह द्वारा अनूदित शकुन्तला नाटक को हिन्दी का दूसरा नाटक मानते हैं।

(166) पृष्ठ 461, सत्य हरिश्चन्द नाटक।

आचार्य शुक्ल भारतेन्दु कृत सत्य हरिश्चन्द को किसी बँगला नाटक का अनुवाद मानते हैं। इस सम्बन्ध में पूरी छानबीन होनी चाहिए। यह कथन प्रामाणिक नहीं प्रतीत होता।

(167) पृष्ठ 466, अनुच्छेद 3।

'हिन्दी प्रदीप' का प्रकाशन काल सं० 1934 है, न कि सम्वत् 1933।

(168) पृष्ठ 486।

शिवसिंह सरोज का प्रणयन प्रकाशन सं० 1934 में हुआ, न कि 1940 में। सं० 1940 में सरोज का तृतीय संस्करण हुआ था।

(169) पृष्ठ 488।

द्वितीय उत्थान का समय सम्वत् 1950-65 छप गया है।

इसे सम्वत् 1950-75 होना चाहिए।

(170) पृष्ठ 504।

प्रसाद की 'ग्राम' नामक कहानी इन्दु कला 2, किरण 2, भाद्रपद सम्वत् 1967 में निकली थी, न कि 1968 में।

(171) पृष्ठ 539, पंक्ति 3।

प्रेमचन्द के ही कुछ पत्रकारों में नहीं, 'कुछ पात्रों में'।

(172) पृष्ठ 553, पंक्ति 2।

'अभ्यास' नहीं, आभास।

(173) पृष्ठ 562।

(4) 'प्रसाद की नाट्यकला' के लेखक का नाम नहीं दिया गया है। इसके लेखक पं० रामकृष्ण शुक्ल शिलीमुख हैं।

(174) पृष्ठ 563, पंक्ति 4।

'राधा कृष्ण शुक्ल' ने नहीं, रामकृष्ण शुक्ल शिलीमुख ने 'सुकवि समीक्षा' की रचना की।

(175) पृष्ठ 615 मैथिलीशरण गुप्त, अन्तिम अनुच्छेद।

"गुप्त जी ने अनघ, तिलोत्तमा और चन्द्रहास नाटक तीन छोटे-छोटे पद्यबद्ध रूपक भी लिखे।"

शुक्ल जी का यह कथन ठीक नहीं। केवल अनघ पद्यबद्ध रूपक है। तिलोत्तमा और चन्द्रहास गद्य में लिखित नाटक हैं।

(176) पृष्ठ 619, रामचरित उपाध्याय।

"पिछले दिनों में वे आजमगढ़ के पास एक गाँव में रहने लगे थे।"

रामचरित जी किसी अज्ञात गाँव में नहीं रहने लगे थे। वह आजमगढ़ के पास

फैजाबाद वाली सड़क पर आजमगढ़ से तीन मील दूर अपने ही गाँव महाराजपुर में रहने लगे थे।

(177) पृष्ठ 635, सत्यनारायण कविरत्न।

कविरत्न जी का जन्म काल सम्वत् 1936 वि० है। सम्भवतः प्रेस की कृपा से यह 1916 छप गया है।

(178) पृष्ठ 670, पंक्ति 2।

'उपादान' (लक्षणा) के स्थान पर 'उत्पादन' छप गया है।

(179) पृष्ठ 679।

'खोलो द्वार' झरना के द्वितीय संस्करण में जुड़ी रचना अवश्य है, पर यह है बहुत पहले की। यह सर्वप्रथम इंदु कला 5, खंड 1, किरण 1, जनवरी 1974 में प्रकाशित हुई थी।

(180) पृष्ठ 680।

आँसू का प्रथम संस्करण 1982 में छपा था; छापे की भूल से यह 1988 हो गया है।

(181) पृष्ठ 722।

गुरुभक्त सिंह के सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल जी लिखते हैं—"उनकी कविताओं के कई संग्रह भी निकल चुके हैं। "उनमें 'सरस, सुमन' 'कुसुम कुन्ज', 'वंशी ध्वनि' और 'वनश्री' प्रसिद्ध हैं।"

भक्त जी के वस्तुत यही चार संग्रह हैं ही।

———

6

हिन्दी साहित्य के इतिहास-निर्माण में बाबू श्यामसुन्दर दास का योगदान

16 जुलाई 1893 के मंगलमय दिन को काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई और बाबू श्यामसुन्दर दास उसके प्रथम मंत्री चुने गए। उस समय यह बारहवें दर्जे के एक हिन्दी प्रेमी एवं परम उत्साही छात्र थे। इनके विशेष सहयोगी थे पं० रामनारायण मिश्र एवं ठाकुर शिवकुमार सिंह। सभा की स्थापना के साथ-ही-साथ इन नवयुवकों को बाबू राधाकृष्ण दास (भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई और उस युग के प्रसिद्ध साहित्यकार) का वरद हस्त मिला। उनके प्रारम्भिक सहयोग से सभी ने अपने शैशव में ही हिन्दी वाङ्मय की सम्पूर्ति के लिए अनेक योजनाएँ बनाई और उनके कार्यान्वयन का प्रयास भी किया। इन्हीं 'योजनाओं' में हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज का कार्य भी है, जो हिन्दी साहित्य के इतिहास के निर्माण के लिए रीढ़-सा है।

सन् 1868 ई० में लाहौर के पं० राधाकृष्ण के प्रस्ताव पर तत्कालीन भारत सरकार ने भारत के विभिन्न प्रान्तों में बिखरे संस्कृत के ग्रंथों की खोज का कार्य प्रारम्भ कराया। इस खोज के परिणामस्वरूप ही संस्कृत वाङ्मय की विपुल राशि का पता चला और डाक्टर आफेक्ट ने तीन बड़ी जिल्दों में इन संस्कृत ग्रंथों और उनके रचयिताओं की वृहत् सूची प्रस्तुत की, जो 'कैटलोगस कैटेगोरम' के नाम से परम प्रख्यात है। नागरी प्रचारिणी सभा का ध्यान अपने स्थापना-वर्ष में ही हिन्दी की बिखरी पुस्तकों की खोज की ओर आकृष्ट हुआ। सभा उस समय आर्थिक शक्ति से सर्वथा विपन्न एक शिशु थी। अतएव वह स्वयं इस कार्य को अपने हाथ में नहीं ले सकती थी, फलतः उसने भारत सरकार तथा बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी से प्रार्थना की कि संस्कृत ग्रंथों की खोज के साथ यदि हिन्दी ग्रंथ भी प्राप्त हो जायँ तो उनके भी विवरण तैयार करा के प्रकाशित करा दिए जायँ। एशियाटिक सोसाइटी ने सभा की प्रार्थना स्वीकार की और उसने 1895 ई० में खोज का कार्य काशी में प्रारम्भ किया। इस वर्ष काशी में हिन्दी की 600 पोथियों के विवरण लिए गए, पर

यह सूची ग्राज तक प्रकाशित नहीं हुई। सोसाइटी ने दूसरे वर्ष हिन्दी ग्रंथों के इस खोज-कार्य को बंद भी कर दिया।

मार्च 1899 में सभा ने तत्कालीन सँयुक्त प्रांत आगरा व अवध (वर्तमान उत्तर प्रदेश) की सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया और उक्त सरकार ने उस वर्ष इस निमित्त चार सौ रुपए की वार्षिक सहायता सभा को दी। यह सहायता उत्तरकालीन वर्षों में बराबर बढ़ती गई। प्रान्तीय सरकार ने सभा द्वारा प्रस्तुत खोज रिपोर्टों के मुद्रण-प्रकाशन की भी व्यवस्था गवर्नमेंट प्रेस, इलाहाबाद से कर दी। बाबू श्यामसुन्दर दास सभा द्वारा संचालित इस खोज-कार्य के प्रथम अधीक्षक नियुक्त हुए। इस कार्य में भी बाबू राधाकृष्ण दास का उन्हें पूर्ण सहयोग मिला।

बाबू श्यामसुन्दर दास जी ने सभा द्वारा संचालित हिन्दी ग्रंथों की खोज का यह कार्य 1900 ई० से 1908 ई० तक, कुल नौ वर्ष किया। तदनंतर 1909 ई० से पं० श्याम बिहारी मिश्र (मिश्र बन्धुओं में से एक) इसके अधीक्षक हुए, फिर दूसरे मिश्रबन्धु पं० शुकदेव बिहारी (मिश्रबन्धुओं) ने यह कार्य 1909 ई० से 1914 ई० तक किया। इनकी देखरेख में सभा की दो त्रैमासिक खोज रिपोर्टें निकलीं—1909-11 की एवं 1912-14 ई० की। कुछ दिनों के लिए खोज का यह महत्वपूर्ण कार्य स्थगित रहा। 1917 ई० में इसका प्रारम्भ पुन: हुआ और इस बार इसके समीक्षक हुए रायबहादुर हीरालाल, जो भारत सरकार के पुरातत्व विभाग से संबंधित थे। इनकी देखरेख में यह कार्य 1917 से 1928 तक चला और 1917-19, 1920-22, 1923-25, 1926-28 की चार त्रैमासिक खोज रिपोर्टें निकलीं। फिर यह कार्य श्यामसुन्दर दास जी के योग्य शिष्य डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल के द्वारा संचालित हुआ। इनके कार्यकाल में 1930-31, 1932-34, 1935-37 की तीन खोज-रिपोर्टें प्रकाशित हुईं। तदनंतर यह कार्य अन्य लोगों ने सम्भाला जो प्रभु की कृपा से हमारे बीच आज भी मौजूद हैं।

बाबू श्यामसुन्दर दास के अधीक्षण-काल में सभा की खोज-रिपोर्टें वार्षिक हुआ करती थीं। इसमें कुछ असुविधा हुआ करती थी अत: प्रांतीय सरकार की राय से तीन-तीन वर्षों की रिपोर्टें प्रस्तुत की जाने लगीं। बाबू साहब के कार्यकाल में 6 वार्षिक रिपोर्टें एवं त्रैमासिक रिपोर्ट प्रस्तुत हुई। इनका संक्षिप्त विवरण आगे एक सारणी में दिया जा रहा है।

रिपोर्ट वर्ष	**प्रकाशन वर्ष**	**ग्रन्थ संख्या**	**महत्वपूर्ण ग्रन्थ और टीका**
1900 ई०	1903 ई०	169	तुलसीकृत रामचरितमानस, कुतबनकृतमृगावती, जायसी-कृत पद्मावत, चंदकृत पृथ्वीराज रासो एवं नरपति नाल्ह का वीसलदेव· रासो।

1901 ई०	1904 ई०	129	रामचरितमानस की 1604 में लिखी एक प्रति, राजापुर में रक्षित मानस के अयोध्या कांड की प्रति, रासो के 10 हस्तलेख, महाराज नागरी दास के 20 ग्रन्थ, नागरी दास जी की बहन सुन्दर कुँअरि बाई के 10 ग्रन्थ।
1902 ई०	1906 ई०	125 ग्रंथ पूर्ण विवरण 217, संक्षिप्त विवरण	इस वर्ष गुरू गोरखनाथ के ग्रंथों का पता चला। जायसी की अखरावट की पहली बार जानकारी हुई। दादू, ध्रुव-दास, हरिराम, महाराज जसवन्तसिंह, महाराज मान-सिंह, संत सुन्दरदास के अनेक ग्रंथ। जोधपुर के राजकीय पुस्तकालय एवं मिरजापुर तथा गोरखपुर में कार्य हुआ।
1903 ई०	1905 ई०	127 ग्रंथ पूर्ण विवरण, 59 ग्रंथ संक्षिप्त विवरण।	काशिराज के पुस्तकालय में कार्य हुआ। इस पुस्तकालय में 298 पुस्तकों की 368 प्रतियाँ हैं।
1904 ई०	1907 ई०	114 पूर्ण, 44 संक्षिप्त।	
1905 ई०	1908 ई०	98 ग्रंथ	कार्य क्षेत्र बुन्देलखंड। इसमें बुन्देलखंड का संक्षिप्त इति-हास भी है।
1906-1908 ई०	1912 ई०	1083 ग्रंथ	कार्य क्षेत्र बुन्देलखंड। इसमें 15 आश्रयदाता राजाओं का भी परिचय है।

प्रारम्भ से ही बाबू श्यामसुन्दर दास का लक्ष्य सभा की इन खोज-रिपोर्टों को परमोपयोगी बनाने का रहा है। अतः उन्होंने 1900 से 1911 तक की समस्त खोज-रिपोर्टों की एक समन्वित संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार की, जो सभा द्वारा सं० 1980 (1923 ई०) में प्रकाशित हुई और आज अनुपलब्ध है। बाबू साहब ने यह कार्य संस्कृत

की प्रसिद्ध ग्रंथ-सूची 'केटेलोगस कैटेलोगोरम' के ढंग पर प्रस्तुत की थी। इधर 1900 से 1955 ई० तक की खोज-रिपोर्टों का सार सभा ने दो बड़ी जिल्दों में उसी ढंग पर प्रस्तुत किया है। इसमें बाबू साहब द्वारा प्रस्तुत 1900-1911 तक की संक्षिप्त रिपोर्ट भी समाविष्ट हो गई है।

सभा के द्वारा की गई हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज का यह कार्य हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सभा की इस खोज का पूरा-पूरा लाभ अभी तक नहीं उठाया जा सका है। मिश्रबन्धुओं ने मिश्रबन्धु-विनोद (1913 ई०) की रचना करने में उस समय तक की खोज का पूर्ण उपयोग किया था। विनोद के उत्तराकालीन संस्करणों में भी उन्होंने बाद की खोज-रिपोर्टों का उपयोग किया। मिश्रबन्धुओं के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के किसी भी अन्य इतिहास लेखक ने इन रिपोर्टों का उपयोग नहीं किया। हिन्दी साहित्य के इतिहास की दृष्टि से ये खोज-रिपोर्टें विशाल एवं अपार संपत्ति की आकर हैं। बिना इनका पूर्व उपयोग किए हिंदी साहित्य का वृहत् इतिहास प्रस्तुत करना एक विडम्बना मात्र है। मुरलीधर मिश्र जैसे कितने ही श्रेष्ठ कवि ऐसे ही पड़े हैं जिनका नामोल्लेख तक बड़े-बड़े इतिहासों में नहीं है। शृंगारी बेनी जैसे कितनों के ही सम्बन्ध में भ्रामक सूचनाएँ दी हुई हैं। शृंगारी बेनी का रचनाकाल सं० 1817 है। इन्हें अब भी भक्तिकाल में घसीटा जा रहा है। मुबारक के नाम पर अब भी तिल शतक चला आ रहा है, सरकारी खोज-रिपोर्ट से यह जुगत राय की रचना सिद्ध है।

ये खोज रिपोर्ट स्वयं में पूर्ण निभ्रान्त हों, ऐसी बात नहीं है। अन्वेषकों से भूलें हुई हैं। इनका उपयोग करने वाले विद्वानों को अपनी विवेक-बुद्धि का सदुपयोग करना चाहिए। उदाहरणार्थ छोटी-मोटी भूलों का निर्देश खोज-रिपोर्ट 1909-11 से यहाँ किया जा रहा है :

(क) No. 1. Abdul Rahman alias, the famous Khan-Khana of Akbar's coruts.

'अब्दुल रहमान' के स्थान पर 'अब्दुर्रहीम' चाहिए।

(ख) No 2. Agra Ali seems to be district from Swami Agra **Dasa,**

अग्रअली और स्वामी अग्रदास दोनों एक ही हैं, दो नहीं।

(ग) No. 7. Anath Dasa wrote his Bichar mala in Samvat 1726-1669 A.D. The poet appears to belong to the Dadu Panthi sect.

अनाथदास दादू पंथी नहीं थे, रामानुजी थे।

(घ) No 9. Arjun alies Lalita was written certain Kavittas on some heroes of the Mahabharat,

'अर्जुन उर्फ ललित' ठीक नहीं। ग्रन्थ का नाम है—अर्जुन के कवित्त। इसमें अर्जुन की वीरता का वर्णन है, न कि अर्जुन नामक कोई कवि इनका कर्ता है। ग्रंथ

से तीन छंद उद्धृत हैं। प्रथम में कवि छाप ललित है। शेष दो छंद छाप हीन हैं।

(ङ) No. 23. Bhagwata Mudita, His works are (I) His Charitra (2) Sewak charitra (3) Rasik Ananya Mala.

भगवत मुदित की एक ही कृति है 'रसिक अनन्य माल'। सेवक चरित्र कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है, रसिक अनन्यमाल का एक अंश है। हित चरित्र तो उत्तमदास की रचना है और रसिक अनन्यमाल के बाद की है।

(च) No. 52. Dalapati Ram is the same as Dalapati Rava whose work 'Alankar Ratnakar' was noticed as No. 13 of 1904. His other work Sravanakhyan has now been notifiead.

'अलंकार रत्नाकर' के कर्ता दलपतिराय शृंगार काल के रचयिता दलपतिराम से भिन्न हैं। हाँ, दोनों कवि गुजराती हैं और अहमदाबाद के रहने वाले हैं। अलंकार रत्नाकर जसंवत सिंह कृत प्रसिद्ध भाषा भूषण का भाष्य है और दलपतिराम के साथ वंशीधर ने भी उसकी रचना में कार्य किया। इसका रचनाकाल सं० 1798 वि० है, जब कि श्रवणाख्यान का रचनाकाल सं० 1924 वि० है। इस दूसरे दलपतराम का जीवनकाल सं० 1877-1944 वि० है।

सभा के द्वारा हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज का कार्य जब एक बार प्रारम्भ हो गया, तब अन्य अनेक संस्थाओं ने भी इस तरह के कुछ प्रयास किए, जैसे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना ने 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' पाँच जिल्दों में प्रकाशित किया है। अन्तिम जिल्द संस्कृत ग्रंथों की है। प्राचीन साहित्य शोध संस्थान उदयपुर विद्यापीठ, उदयपुर ने 'राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज' चार जिल्दों में प्रकाशित किया है। 'यूरोप और अमेरिका में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथ' का प्रणयन डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने किया है। इन सभी खोज-विवरणों के प्रकाशन की प्रेरणा सभा के द्वारा प्रकाशित हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज-रिपोर्टें रही हैं और सभा की खोज-रिपोर्टों के प्राण एवं प्रेरक बाबू श्याम-सुन्दर दास रहे हैं।

बाबू श्यामसुन्दर दास ने हस्तलिखित हिन्दी के ग्रंथों की खोज कार्यारम्भ तो कराया ही, खोज में प्राप्त महत्वपूर्ण ग्रंथों के संपादन एवं प्रकाशन की भी परंपरा प्रारम्भ की। बाबू साहब ने निम्नांकित ग्रंथों का संपादन किया। ये सभी ग्रंथ काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हुए हैं :

गद्य ग्रन्थ —1. नासिकेतोपाख्यान—1901 ई०। सदल मिश्र का यह ग्रंथ खड़ी बोली के प्रारंभिक गद्य ग्रंथों में है।

2. रानी केतकी की कहानी—1925 ई०। इंशा अल्ला खाँ की यह रचना भी खड़ी बोली के प्रारंभिक गद्य ग्रंथों में है।

पद्य ग्रन्थ—1. छत्र प्रकाश—1903 ई०। यह गोरेलाल 'लाल' का छत्रसाल बुन्देला के वास्तविक वीर जीवन को लेकर लिखा गया ग्रंथ है और इसकी जानकारी

साहित्यजगत् को पहले नहीं थी। सरोज में इसका उल्लेख नहीं है।

2. रामचरित मानस—1904 ई०।
3. पृथ्वीराज रासो—1904 ई०।
4. इंद्रावती प्रथम खण्ड—1906 ई०। नूर मुहम्मद की इस कृति का दूसरा खण्ड अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका।
5. हम्मीर रासो—जोधराज कृत 1908 ई०।
6. दीनदयाल गिरि ग्रंथावली—1921 ई०।
7. परमाल रासो—1921 ई०।
8. कबीर ग्रंथावली—1922 ई०।
9. सतसई सप्तक—1933 ई०। इसका प्रकाशन हिन्दुस्तानी एकेडेमी से हुआ है। इसमें निम्नांकित सात सतसइयाँ हैं :

(1) तुलसी सतसई।
(2) बिहारी सतसई।
(3) मतिराम सतसई।
(4) रसनिधि सतसई—यह मूलतः रसनिधि हजारा का अंश है, जिसे संक्षिप्त करके सतसई रूप दे दिया गया है।
(5) राम सतसई—रामसहाय दास बनारसी कृत।
(6) वृन्द सतसई।
(7) विक्रम सतसई—चरखारी नरेश विक्रमादित्य सिंह कृत।

बाद में लाला राधाकृष्ण दास, लाला भगवानदीन, आचार्य पंडित रामचन्द्र शुक्ल, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने हिन्दी के अनेक ग्रन्थों का संपादन किया। आधुनिक युग में आचार्य पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र एवं डा० माताप्रसाद गुप्त ने प्राचीन ग्रन्थों के उद्धार का महान प्रयास किया है। दोनों विद्वानों की पद्धतियाँ अलग-अलग हैं। आचार्य मिश्र की संपादन सरणि साहित्यिक है, जिसमें पद के साथ अर्थ पर विशेष बल दिया जाता है। स्वर्गीय डा० गुप्त की सम्पादन सरणि वैज्ञानिक रही है, जिसमें पाठ पर विशेष बल दिया जाता है; हस्तलेख से हटने की जिसमें प्रवृत्ति नहीं। प्राचीन ग्रंथों के सम्पादन के साथ-साथ भूमिकाओं से कवि और उसकी कृतियों के संबंध में जो भी विवेचन हुए हैं, हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की दृष्टि से इन भूमिकाओं का विशेष महत्व है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन के लिए एक और सहायक सामग्री की रचना बाबू श्यामसुन्दर दास द्वारा हुई है। यह सामग्री हिन्दी गद्य के विकास के लिए विशेष रूप से उपयोगी है और आधुनिक युग से ही संबंधित है। यह सामग्री चार जिल्दों में है :

1-2 हिन्दी कोविद रत्नमाला भाग 1, 2। सन् 1909 ई०। इसका प्रकाशन इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद से हुआ था। दोनों भागों में तब तक के हिन्दी गद्य

रचयिताओं की जीवनियाँ एवं उनके साहित्य का प्रामाणिक परिचय दिया गया है।

3-4. हिन्दी गद्य के निर्माता भाग 1, 2; 1940 ई०। प्रकाशक: इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद। प्रत्येक भाग में 50-50 गद्य लेखकों और उनकी रचनाओं का प्रामाणिक परिचय है। ये चारों हिन्दी गद्य के आकर ग्रंथ हैं और अलभ्य हैं। इनका पुनर्मुद्रण परमावश्यक है।

बाबू श्यामसुन्दर दास ने हिन्दी वाङ्मय को सर्वांग दृष्टि से पूर्ण बनाने के लिए हिन्दी के सबसे बड़े कोश 'हिन्दी शब्द सागर' का संपादन किया जिसका प्रकाशन सभा ने किया। यह महान कोश 1928 ई० में पूर्ण हुआ। अब तक हिन्दी के चार इतिहास ग्रंथ लिखे जा चुके थे, जिनमें से निम्नांकित दो अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं:

(1) द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान--1889 ई०। सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन।

(2) मिश्रबन्धु विनोद--1913 ई०।

शेष दो ग्रन्थ हैं:

1. ए स्केच आफ हिन्दी लिटरेचर--लेखक एडविन ग्रीव्ज, प्रकाशक—क्रिश्चियन लिटरेचर सोसाइटी फार इण्डिया—1921 ई०।

2. ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिटरेचर—एफ० ई० केई—हेरिटेज ऑफ इण्डिया सिरीज, 1923 ई०। दोनों ग्रंथ लघुकाय हैं और सामान्य महत्व के हैं।

केई और ग्रीव्ज की रचनाएँ भी ग्रियर्सन की कृति के समान अंग्रेजी में हैं तथा बहुत ही छोटी-छोटी सामान्य कृतियाँ हैं जिनका आधार ग्रियर्सन और मिश्रबन्धु ही हैं। इनको कभी भी किसी ने महत्व नहीं दिया। बाबू श्यामसुन्दर दास ने 'हिन्दी शब्द सागर' की भूमिका के रूप में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल से 'हिन्दी साहित्य का विकास' 1922 ई० में लिखवाया। एक वर्ष बाद किंचित परिष्कृत एवं परिवर्धित होकर यही विकास 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नाम से स्वतंत्र पुस्तक रूप में प्रकाशित हुआ। 1840 ई० में शुक्ल जी ने इसे पुनः संशोधित, परिवर्द्धित किया। हिन्दी साहित्य के तब से अनेक इतिहास लिखे गए, पर सर्वाधिक मान्यता शुक्ल जी के इसी इतिहास को प्राप्त है। अप्रत्यक्ष रूप से बाबू श्यामसुन्दरदास जी का इसके प्रणयन में अत्यधिक योग था, यह स्वीकार करना पड़ेगा।

बाबू साहब को इतने ही से संतोष नहीं हुआ। उन्होंने 'हिन्दी भाषा और साहित्य' नाम से एक ग्रंथ लिखा, जो बड़ी सजधज के साथ 1930 ई० में इंडियन प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ था। इसकी रेशमी जिल्द थी। इसमें आर्ट पेपर पर सैकड़ों साहित्यकारों के चित्र थे। बाद में यह ग्रंथ दो ग्रंथों के रूप में प्रकाशित होने लगा—'हिन्दी भाषा' और 'हिन्दी साहित्य'। 'हिन्दी साहित्य' श्यामसुन्दर दास जी द्वारा लिखित हिन्दी साहित्य का इतिहास है।

संक्षेप में हिन्दी साहित्य के इतिहास के निर्माण को हम बाबू श्यामसुन्दर दास का निम्नांकित योगदान स्वीकार करते हैं:

(1) काशी नागरी प्रचारणी सभा द्वारा प्रकाशित हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज-रिपोर्टें एवं इनका समन्वित सार संक्षेप ।
(2) हिन्दी के प्राचीन महत्वपूर्ण ग्रंथों का सम्पादन ।
(3) हिन्दी के गद्य लेखकों की जीवनियाँ एवं उनके साहित्य का प्रामाणिक परिचय ।
(4) आचार्य शुक्ल के 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के प्रेरणा स्रोत ।
(5) 'हिन्दी साहित्य'—हिन्दी साहित्य का श्यामसुन्दर दास जी द्वारा लिखित इतिहास ।

बाबू श्यामसुन्दर दास जी की जन्म शताब्दी के पुनीत अवसर पर इस लघु लेख द्वारा मैं अपनी श्रद्धांजलि उनकी स्मृति में अर्पित करता हूँ । उनके द्वारा श्री गणेश की हुई खोज-रिपोर्टों का जितना उपयोग मैंने 'सरोज सर्वेक्षण' में किया है और बाबू साहब की महिमा और गरिमा से जितना अभिभूत हुआ हूँ, उतना शायद ही कोई इन रिपोर्टों से लाभान्वित हुआ हो । ये खोज-रिपोर्टें जहाँ ललित साहित्य के लिए अक्षय विधान हैं, वहीं हिन्दी वाङ्मय के लिए इनकी उपयोगिता और भी अधिक होगी । भविष्य में जब कभी कोई सुधी या सुधी मंडल हिन्दी में लिखित सभी प्रकार की रचनाओं का लेखा-जोखा लेगा, तब उसका मस्तक निश्चय ही बाबू श्यामसुन्दर दास के इस महान कृतित्व से नत-मस्तक हो जायगा । इन खोज-रिपोर्टों में आयुर्वेद, शकुन विचार, रत्न परीक्षा, काककला, शालिहोत्र, वास्तुकला, उद्यान कला, ज्योतिष, स्वर-विज्ञान क्या-क्या नहीं विवृत हैं ? हिन्दी वाङ्मय की अदृश्य निधि के लिए ये लुप्तांजन हैं ।

7

हिन्दी साहित्य के विविध प्रकार के इतिहास

सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के इतिहास प्राय: एक ही जिल्द में हैं। मिश्रबन्धु विनोद 9 जिल्दों (प्रिस दो जिल्दों में) है। 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' 17 जिल्दों में है, जिसमें ने 14 जिल्दें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं। भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग से प्रकाशित 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' तीन जिल्दों में है। डा० रामकुमार वर्मा का 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' एक ही भाग छप कर रह गया, दूसरा भाग लिखा ही नहीं गया। एक ही जिल्द में लिखे जानेवाले प्रमुख इतिहास हैं :

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास—मिश्रबन्धु
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिन्दी साहित्य—बाबू श्यामसुन्दर दास
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल'
5. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास—डा० सूर्यकान्त शास्त्री
6. हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास—पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'।
7. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास—आचार्य चतुरसेन शास्त्री
8. हिन्दी साहित्य—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
9. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास—डा० गणपति चन्द्र गुप्त
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० राजनाथ शर्मा

सम्पूर्ण इतिहासों के अतिरिक्त हिन्दी में निम्नांकित ढंग के इतिहास भी प्रस्तुत किए गए हैं :

1. विभिन्न कालों के इतिहास।
2. विभिन्न भक्ति सम्प्रदायों के इतिहास।
3. विभिन्न साहित्यिक विधाओं के इतिहास।

4. विभिन्न विभाषाओं के इतिहास ।
5. विभिन्न भूखंडों के इतिहास ।
6. विभिन्न दरबारों से सम्बन्धित कवियों के इतिहास ।
7. धर्म की दृष्टि से प्रस्तुत इतिहास ।
8. जाति की दृष्टि से प्रस्तुत इतिहास ।
9. अंग्रेजी में लिखित हिन्दी साहित्य के इतिहास ।

आगे एक-एक वर्ग के इतिहासों की सूची प्रस्तुत की जा रही है ।

विभिन्न कालों के इतिहास

(क) आदि काल :

1. हिन्दी साहित्य का आदिकाल—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राष्ट्रभाषा परिषद बिहार, पटना ।
2. हिन्दी साहित्य का अतीत, प्रथम भाग—आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी विज्ञान ब्रह्मताल, वाराणसी ।
3. आदिकालीन साहित्य—शोध—डा० हरीश ।
4. आदिकालीन हिन्दी गद्य साहित्य—डा० हरीश ।
5. आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास काव्य—डा० हरीश ।
6. आदिकाल की भूमिका—पुरुषोत्तम प्रसाद आसोपा, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 1973 ई० ।
7. हिन्दी साहित्य का उद्भवकाल—डा० वासुदेव सिंह, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, 1973 ई० ।
8. सिद्ध साहित्य—डा० धर्मवीर भारती, किताब महल, इलाहाबाद ।

(ख) भक्तिकाल :

1. हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग 1, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ।
2. मध्यकालीन कृष्ण काव्य—डा० कृष्णदेव झा ।

(ग) रीतिकाल :

1. हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग 2, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ।
2. हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास—डा० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्वविद्यालय का शोध प्रबंध, वहीं से प्रकाशित ।
3. रीति युगीन काव्य—डा० कृष्णचन्द्र वर्मा ।
4. रीति स्वच्छंद काव्यधारा—डा० कृष्णचन्द्र वर्मा ।

(घ) आधुनिक काल :

1. आधुनिक हिन्दी का आदिकाल—पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी, हिन्दुस्तानी अकेदमी, इलाहाबाद ।

2. आधुनिक हिन्दी साहित्य (1850-1900 ई०)—1998 वि०, डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ।
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका (1757 ई०-1857 ई०) सं० 2009 वि०, डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ।
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास (1900-25 वि०)—डा० श्री कृष्ण लाल, डी० फिल० का शोध प्रबंध, 1999 वि० ।
5. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास— (1926-1950 ई०) डा० भोलानाथ श्रीवास्तव ।
6. आधुनिक हिन्दी साहित्य (सं० 1900 से 1990 वि०)—श्री कृष्ण शंकर शुक्ल । अपने विषय का पहला ग्रन्थ ।
7. आधुनिक काव्य धारा—डा० केशरी नारायण शुक्ल, शोध प्रबंध ।
8. आधुनिक ब्रजभाषा काव्य—डा० जगदीश वाजपेयी ।
9. हिन्दी का सामयिक साहित्य—पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ।
10. हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष—शिवदान सिंह चौहान ।

विभिन्न भक्ति संप्रदायों के इतिहास

(क) संत काव्य :

1. निर्गुण काव्य धारा—डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ।
2. उत्तरी भारत की संत परम्परा—श्री परशुराम चतुर्वेदी, भारती भंडार, इलाहाबाद ।
3. जंभो जी और विष्णोई सम्प्रदाय—डा० हीरालाल महेश्वरी ।
4. संत साहित्य—डा० भुवनेश्वर मिश्र 'माधव', सं० 1998 वि० ।

(ख) सूफी काव्य :

1. सूफीमत, साधना और साहित्य—रामपूजन तिवारी ।
2. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान—डा० श्याम मनोहर पांडेय ।
3. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य—डा० कमल कुलश्रेष्ठ ।
4. जायसी का परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य—डा० सरला शुक्ला ।
5. सूफी मत और हिन्दी साहित्य—डा० विमल कुमार जैन ।
6. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा—श्री परशुराम चतुर्वेदी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ।

(ग) राम काव्य :

1. राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय—डा० भगवती प्रसाद सिंह ।
2. राम भक्ति में मधुरोपासना—डा० भुवनेश्वर मिश्र माधव ।

(घ) कृष्ण काव्य :

(i) वल्लभ सम्प्रदाय :

1. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, दो भाग—डा० दीनदयालु गुप्त ।
2. अष्ट छाप परिचय—प्रभुदयाल मीतल ।

(ii) राधावल्लभ सम्प्रदाय :

1. राधावल्लभ सम्प्रदाय : सिद्धांत और साहित्य—डा० विजयेन्द्र स्नातक ।
2. श्री हित हरिवंश गोस्वामी : सम्प्रदाय और साहित्य—गो० ललिता चरण गोस्वामी ।
3. राधावल्लभीय साहित्य रत्नावली—किशोरी शरण 'अलि'

(iii) चैतन्य सम्प्रदाय :

1. चैतन्य मत और ब्रज साहित्य—श्री प्रभुदयाल मीतल ।
2. मध्य युगीन हिन्दी कृष्ण भक्तिधारा और चैतन्य सम्प्रदाय—डा० मीरा श्रीवास्तव, हिन्दुस्तानी अकेदमी इलाहाबाद ।

(iv) निम्बार्क सम्प्रदाय :

1. निम्बार्क सम्प्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हिन्दी कवि—द्वितीय भाग, अप्रकाशित—डा० नारायण दत्त शर्मा ।
2. निम्बार्क माधुरी—ब्रह्मचारी बिहारी शरण ।

(v) स्वामी हरिदास का रसिक सम्प्रदाय :

1. हरिदास वंशानुचरित्र—नवनीत चतुर्वेदी ।
2. स्वामी हरिदास जी की जीवनी और वाणी तथा अष्टाचार्यों एवं भक्त कवियों की जीवनी और रचनाएं—प्रभुदयाल मीतल ।

साहित्य की विविध विधाओं के इतिहास

(क) नाटक :

नाटकों के इतिहास सम्बन्धी निम्नांकित ग्रन्थ प्रकाशिक हो चुके हैं :

1. हिन्दी में नाटक साहित्य का विकास—श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, सं० 1987, प्रकाशक साहित्य सेवक कार्यालय, जालिपादेवी, बनारस । 44 पृष्ठों की छोटी पुस्तिका ।
2. हिन्दी नाट्य साहित्य—श्री ब्रज रत्नदास, सं० 1995 । ढाई सौ पृष्ठों का बड़ा ग्रन्थ, प्रचुर सामग्री का संकलन ।
3. हिन्दी नाट्य विमर्श—श्री गुलाबराय, सं० 1997 वि० ।

4. हमारी नाट्य परम्परा—श्री दिनेश नारायण उपाध्याय, 1997 वि० ।
5. हिन्दी नाट्य चिन्तन, प्रथम भाग—श्री शिखरचन्द जैन, 1998 वि० । इसमें केवल भारतेन्दु, लक्ष्मीनारायण मिश्र एवं सेठ गोविंद दास के नाटकों पर आलोचना है । प्रसाद पर 'प्रसाद नाट्य चिंतन' नाम से लेखक की एक अलग पुस्तक है, जो हिन्दी नाट्य चिंतन का द्वितीय भाग है ।
6. रूपक विकास—उपाध्याय वेदमित्र 'व्रती', सं० 2005 (1948 ई०) ।
7. हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास—डा० सोमनाथ गुप्त, 1948 ई० ।
8. पूर्व भारतेन्दु नाटक साहित्य— ,, ,, 1958 ।
9. हिन्दी नाटकों का विकास—शिवनाथ एम० ए० 1951 ई० ।
10. हिन्दी नाटककार—जयनाथ 'नलिन', 1952 ई० ।
11. हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास—डा० दशरथ ओझा, 1954 ई० ।
12. भारतेन्दु कालीन नाटक साहित्य—डा० गोपीनाथ तिवारी, 1959 ई० ।
13. हमारी नाट्य परम्परा—श्री कृष्ण दास ।
14. आधुनिक हिन्दी नाटक—डा० गिरीश रस्तोगी ।

(ख) एकांकी नाटक :

1. हिन्दी एकांकी—डा० सत्येन्द्र ।
2. हिन्दी एकांकी : उद्भव और विकास—डा० रामचरण महेन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय का शोध प्रबंध ।

(ग) उपन्यास :

1. हिन्दी के सामाजिक उपन्यास—श्री ताराशंकर पाठक, सं 1996 वि० ।
2. हिन्दी उपन्यास—डा० शिवनारायण लाल श्रीवास्तव, सं० 1997 वि० । अब इसका संशोधित परिवर्द्धित संस्करण निकल गया है । यह हिन्दी उपन्यासों का अन्यतम इतिहास है । इसी पर लेखक को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त हुई थी ।
3. आधुनिक कथा साहित्य—श्री गंगा प्रसाद पांडेय, सं० 2001 वि० ।
4. हिन्दी कथा साहित्य—श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, सितम्बर 1954 ।
5. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन—डा० गणेशन ।
6. हिन्दी उपन्यास : पृष्ठभूमि और परम्परा—डा० बदरीदास ।
7. हिन्दी उपन्यास : उद्भव और विकास—डा० सुरेश सिन्हा ।
8. हिन्दी उपन्यास : उद्भव और विकास—डा० प्रेमनारायण टंडन ।

(घ) कहानी :

1. हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास।
2. हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास—डा० सुरेश सिन्हा।

(ङ) निबंध :

1. हिन्दी साहित्य में निबंध—श्री ब्रह्मदत्त शर्मा, सं० 1998 वि०।
2. हिन्दी में निबंध साहित्य—श्री जनार्दन स्वरूप अग्रवाल, सं 2002 वि०
3. हिन्दी निबंधकार—जयनाथ 'नलिन'।

(च) काव्य

1. आधुनिक काव्यधारा—डा० केसरी नारायण शुक्ल, 2000 वि०। शोध प्रबन्ध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
2. नवयुग काव्य विमर्श—श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल', 1995 वि०।
3. हिन्दी के वर्तमान कवि और उनका काव्य—श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' 1999 वि०।
4. हिन्दी कविता में युगांतर—डा० सुधीन्द्र। शोध प्रबन्ध राजस्थान विश्वविद्यालय।

(छ) आलोचना :

1. हिन्दी आलोचना : उद्भव और विकास—डा० भगवतस्वरूप मिश्र, 1954 ई०। आगरा विश्वविद्यालय का शोध प्रबन्ध।
2. हिन्दी आलोचना का इतिहास—डा० रामशरण मिश्र, सं० 2017 (1960 ई०) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का शोध प्रबन्ध।
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य में समालोचना का विकास—डा० वेंकट शर्मा 1962 ई०। राजस्थान विश्वविद्यालय का शोध प्रबन्ध। डॉ० [illegible]

(ज) गद्य

1. हिन्दी गद्य शैली का विकास—डा० जगन्नाथ शर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
2. हिन्दी गद्य मीमांसा—रमाकांत त्रिपाठी।
3. हिन्दी गद्य गाथा—सद्गुरु शरण अवस्थी।
4. हिन्दी का गद्य साहित्य—डा० रामचन्द्र तिवारी।

(झ) रेखाचित्र :

1. हिन्दी रेखाचित्र : सिद्धांत और विकास—डा० मक्खनलाल शर्मा।

हिन्दी के विभिन्न विभाषाओं के साहित्य का इतिहास

(क) खड़ी बोली

1. खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास—ब्रजरत्न दास।

(ख) उर्दू

1. उर्दू साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० एहतिशाम हुसैन।
2. उर्दू साहित्य का इतिहास—रामबाबू सक्सेना, हिन्दुस्तानी एकेडमी।
3. उर्दू भाषा और साहित्य—रघुपति सहाय, 'फिराक'।

(ग) दक्खिनी

1. दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास—डा० श्रीराम शर्मा।

(घ) अवधी

1. अवधी और उसका साहित्य—डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित।
2. अवधी कृष्ण काव्य और उसके कवि—डा० मुरारीलाल शर्मा।

(ङ) भोजपुरी

1. भोजपुरी और उसका साहित्य—डा० कृष्णदेव उपाध्याय।
2. भोजपुरी साहित्य : एक अध्ययन—बैजनाथ सिंह।

(च) व्रजभाषा

1. व्रजभाषा साहित्य का इतिहास—डा० सत्येन्द्र, भारती भंडार इलाहाबाद।

(छ) व्रजबुलि

1. व्रजबुलि साहित्य—रामपूजन तिवारी, 1960 ई०।
2. व्रजभाषा और व्रजबुलि का तुलनात्मक अध्ययन—डा० कलिका तोमर।
3. 16वीं शती के हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि—स्व० डा० रत्नकुमारी।

विभिन्न भूखंडों के इतिहास

(क) बुन्देलखंड :

बुन्देलखंड के कवियों का विवरण गौरीशंकर द्विवेदी ने 'बुन्देल वैभव' नाम से तीन खंडों में प्रकाशित किया है :

1. बुन्देल वैभव—प्रथम भाग, सं० 1990 वि०। इसमें कवीन्द्र केशव काल (1618-1700 वि०) के 40 कवि हैं। पृष्ठ 115 से 253 तक।

2. बुन्देल वैभव—द्वितीय भाग, सं० 1992 वि० । पृष्ठ 267 से 514 । इसमें कवीन्द्र केशवकाल के शेष 34 कवि एवं लाल (गोरेलाल) काल के 75-191 कुल 117 कवियों का विवरण है।

इसका तीसरा भाग विज्ञापित है, सम्भवत: चौथा भाग भी हो। जिनमें 'पद्माकर काल' एवं 'मैथिलीशरण गुप्त काल' के कवि होने चाहिए। द्विवेदी जी ने केशव, लाल, पद्माकर एवं मैथिलीशरण गुप्त के नामों को आधार मानकर बुन्देलखंड के साहित्यिक इतिहास को चार कालों में विभाजित किया है।

(ख) राजस्थान

श्री डा० मोतीलाल मेनारिया ने राजस्थान को केन्द्र मानकर तीन ग्रन्थ लिखे हैं :

1. राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा—सं० 1996। इसमें डिंगल एवं पिंगल दोनों के कवि हैं।
2. राजस्थानी भाषा और साहित्य – सं० 2006। प्रकाशक, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग। इसमें भी डिंगल और पिंगल दोनों साहित्यों के कवि विवेचित हैं। डा० मोतीलाल मेनारिया।
3. राजस्थान का पिंगल साहित्य—सं० 2009। इसमें केवल पिंगल साहित्य का विवेचन है, जो अत्यन्त शोधपूर्ण है। ग्रन्थ महत्व का है। डा० मोतीलाल मेनारिया।
4. राजस्थानी भाषा और साहित्य—डा० हीरालाल माहेश्वरी।

(ग) पंजाब

'पंजाब प्रांतीय हिन्दी साहित्य का इतिहास' प्रथम खंड प्रकाशित हो चुका है। इसके रचयिता हैं पंडित चन्द्रकान्त बाली। प्रकाशन काल है। अक्टूबर 1962। और प्रकाशक हैं नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जवाहर नगर, दिल्ली-6। इसमें दो कालों—(1) आदि काल 1000-1500 वि०, (2) मिश्रित काल 1501-1900 वि०—के कवियों का विवेचन है। इसके दूसरे खंड की प्रतीक्षा है। इसमें 1901 से 2025 तक का विवेचन होना चाहिए। ग्रन्थ अत्यन्त खोजपूर्वक एवं परिश्रम से लिखा गया है अत: महत्वपूर्ण है। चंदबरदाई, सूर आदि पर इसमें बहुत अच्छा एवं नवीन विवेचन है।

(घ) मत्स्य प्रदेश

किसी शोधी-सुधी ने 'मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन' नामक शोध-प्रबन्ध लिखा है जो मेरे देखने में नहीं आया।

(ङ) कुर्मांचल

1. हिन्दी साहित्य को कूर्मांचल की देन—डा० भगत सिंह।

(च) बिहार

राष्ट्रभाषा परिषद बिहार ने 'हिन्दी साहित्य और बिहार' नाम से बिहार प्रांतीय हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत करने की योजना बनाई है। इस ग्रंथ के सम्पादक (स्वर्गीय) शिवपूजन सहाय जी थे। इसका प्रथम खंड 1960 ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें सातवीं से अठारहवीं शती ईस्वी तक के कवि सन्निविष्ट हैं।

'हिन्दी साहित्य और बिहार' का द्वितीय खंड 1963 ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें 1801 से 1850 ई० तक के कवि हैं।

इसके तृतीय खंड में 1851-1900 ई०, चतुर्थ में 1901-1950 ई० एवं पंचम में वर्तमान काल के साहित्यकारों का विवरण रहेगा।

(छ) भरतपुर राज्य

हिन्दी साहित्य समिति भरतपुर ने सं० 2018 में 'भरतपुर कवि कुसुमांजलि' नाम से भरतपुर रियासत के हिन्दी साहित्य का अत्यन्त शोधपूर्ण इतिहास प्रस्तुत किया है। इसके सम्पादक डा० कुँज बिहारीलाल गुप्त हैं। ग्रंथ की योजना चार कालों एवं पाँच प्रकरणों में है :

1. सोमनाथ काल—कुल 6 कवि
2. सूदन काल—कुल 51 कवि
3. राम काल पूर्वार्द्ध—कुल 20 कवि
4. राम काल उत्तरार्द्ध—कुल 57 कवि
5. वर्तमान काल—कुल 43 कवि

राम काल वाले कवि रामलाल को महाकवि कहा गया है, जिनसे हिन्दी संसार प्राय: अपरिचित है।

(ज) कानपुर

कानपुर जनपद के कवियों के दो इतिहास लिखे गये हैं।

(1) कानपुर के कवि—लेखक लक्ष्मीकांत त्रिपाठी एम. ए. एवं रमाकांत त्रिपाठी एम. ए.। इसका पाचवाँ संस्करण 1953 ई० में भीष्म एन्ड ब्रदर्स, ज्ञान मंदिर, पटकापुर कानपुर से हुआ है। ग्रन्थ में कुल 128 पृष्ठ हैं। इसमें 1900 ई० तक के ही कवियों का विवेचन है। वर्तमान कवियों को छोड़ दिया गया है। ग्रंथ शिवसिंह सरोज से प्रायश: संग्रह मात्र है।

(2) कानपुर जनपद के कवियों सम्बन्धी एक अपेक्षाकृत बड़ा ग्रंथ मेरे देखने में किसी समय आया था, जिसका नाम आदि स्मरण नहीं रहा।

(झ) असनी

असनी के हिन्दी कवि—(सन् 1500 ई० से वर्तमान काल तक), लेखक—स्वर्गीय डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी, प्राध्यापक हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय। मार्च सन् 1964 ई०। पृष्ठ संख्या 186। ग्रंथ में यद्यपि लिखकर चार खंडों की योजना नहीं है, पर प्रत्यक्ष रूप से इसके निम्नांकित चार खंड प्रतीत होते हैं :

1. नरहरि और उनके वंशज—पृष्ठ 1-102; 15 कवि।
2. देवकीनंदन (मिश्र) मझौली वाले के वंशज—पृष्ठ 103-128; 9 कवि।
3. अन्य भट्ट कवि—पृष्ठ 129-142; 5 कवि।
(4) असनी के ब्राह्मण कवि—पृष्ठ 143-172; 11 कवि।

प्रत्येक खंड के कवियों का परिचय अलग अलग कालक्रमानुसार है। ग्रंथ अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि का एवं शोधपूर्ण है। इससे अनेक प्रसिद्ध कवियों के सम्बन्ध में शोधपूर्ण एवं प्रामाणिक विवरण प्राप्त होते हैं।

(ञ) बलरामपुर, गोंडा

बलरामपुर जिला गोंडा के कवियों और साहित्यकारों का इतिहास 'दिया-बाती' नाम से प्रकाशित है। संपादक हैं—डा० भोलानाथ 'भ्रमर'।

(ट) बिलग्राम, हरदोई

1. बिलग्राम के मुसलमान हिन्दी कवि—डा० शैलेश जैदी।

विशिष्ट राजदरबारों से सम्बन्धित इतिहास

(1) इस ढंग का पहला ग्रन्थ डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल का 'अकबरी दरबार के हिन्दी कवि' है, जिस पर डा० अग्रवाल को लखनऊ विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० की उपाधि मिली है। ग्रन्थ लखनऊ विश्वविद्यालय से ही प्रकाशित भी है।

(2) फतहपुर जिले में आसोथर के राजा भगवंत राय खींची हुए हैं। यह स्वयं सुकवि थे और इनके दरबार में भी अच्छे कवि थे। 'भगवंतराय और उनके मंडल के कवि' डा० महेन्द्रप्रताप सिंह का एक अच्छा शोध प्रबन्ध है। यह भी प्रकाशित हो चुका है।

(3) भोंसला राजदरबार के हिन्दी कवि—डा० कृष्ण दिवाकर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

(4) राजस्थान के राजघरानों की हिन्दी सेवा—डा० राजकुमारी कौल।

धर्म की दृष्टि से प्रस्तुत इतिहास

मुसलमान

1926 ई० में श्री गंगाप्रसाद सिंह अखौरी ने 'हिन्दी के मुसलमान कवि' नाम से कवियों का कालक्रमानुसार परिचय देते हुए एक अच्छा काव्य संग्रह प्रस्तुत किया।

इसमें कुल 152 कवि संकलित हैं। पृष्ठ संख्या प्रायश: 340 है।

जैन—

इधर अपभ्रंश एवं पुरानी हिन्दी का अध्ययन करते हुए हिन्दी जैन साहित्य पर अच्छा काम हो रहा है। श्री हरीश को 'आदिकाल का हिन्दी जैन साहित्य (950 से 1450 वि०)' पर प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० फिल० की उपाधि प्राप्त हुई है। मुझे ग्रंथ की टंकित प्रति उक्त विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में देखने को मिली, जो अत्यंत विशालकाय है। इस दिशा में इनके अन्य कार्य हैं :

(1) आदि काल के अज्ञात हिन्दी रास काव्य।
(2) आदि काल का हिन्दी काव्य साहित्य।
(3) आदिकालीन हिन्दी साहित्य शोध।

इनमें विवेच्य अधिकांश सामग्री जैन साहित्य की है।

इस दिशा में डा० हरीश से भी पुराने कार्यकर्ता श्री अमरचंद नाहटा एवं नाथूराम प्रेमी हैं। 'जैन साहित्य और इतिहास' (द्वितीय संस्करण 1956) प्रेमीजी के फुटकर निबंधों का विशाल संग्रह है। इसमें कुल 600 पृष्ठ एवं 41 निबंध है।

हिन्दी जैन साहित्य का एक सुव्यवस्थित इतिहास भी मेरे देखने में आया है। यह है श्री कामताप्रसाद जैन कृत 'हिन्दी जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास' जो भारतीय ज्ञानपीठ काशी से फरवरी 1947 में प्रकाशित हुआ है। इसमें ढाई सौ पृष्ठ हैं। ग्रन्थ के प्रारंभिक भाग बड़े जोरदार हैं।

इस दिशा में ज्ञानपीठ का ही एक अन्य प्रकाशन 'जैन भक्तिकाव्य की पृष्ठभूमि' है। इसके लेखक हैं—डा० प्रेमसागर जैन। इन्हीं का एक अन्य ग्रंथ है—हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि।

जातिगत दृष्टि से प्रस्तुत इतिहास

1. **सुकवि सरोज**—गौरीशंकर द्विवेदी—सुकवि सरोज में सनाढ्य ब्राह्मण कवियों का कालक्रम से परिचय एवं उनकी कविता के नमूने संकलित हैं। इसका प्रथम भाग 1984 वि० में प्रकाशित हुआ था। इसमें बलभद्र मिश्र, केशवदास मिश्र, बिहारी लाल आदि 16 कवियों का परिचय है। इसका दूसरा भाग 1990 वि० में निकला। इसमें 58 कवियों के परिचय एवं उदाहरण हैं, जिनमें प्रमुख हैं—गो० तुलसीदास, नंददास (अष्टछापी), हरिराम व्यास, स्वामी हरिदास, गोविन्द स्वामी (अष्टछापी), विट्ठल विपुल, बोधा। इसी संग्रह में सर्वप्रथम गोस्वामी तुलसीदास का जन्मस्थान सोरों कहा गया है। द्वितीय खंड के अन्त में तृतीय एवं चतुर्थ खंड के कुछ कवियों की नामावली विज्ञापनस्वरूप दी गई है।

2. **ब्रह्मभट्ट कवि सरोज**—दुर्गाप्रसाद शर्मा, मंत्री जातिरत्न, मथुरा—ब्रह्मभट्ट सभा के मंत्री, मथुरा निवासी दुर्गाप्रसाद शर्मा ने इस ग्रंथ की रचना की है। यह

मथुरा से ही सं० 2018 में प्रकाशित हुआ। इसमें कालक्रमानुसार ब्रह्मभटट कवियों का विवेचन है। लेखक के अनुसार महाकवि सूरदार, तानसेन, निम्बार्क संप्रदाय के श्रीभट्ट, महाकवि बिहारी, भूषण, मतिराम, चिन्तामणि, तोष, शृंगारी सुन्दर, आनंद घन, पद्माकर आदि सभी ब्रह्मभट्ट थे। ग्रंथ पर्याप्त भ्रष्ट है।

3. मध्यकालीन हिन्दी कवियित्रियाँ—डा० सावित्री सिन्हा। दिल्ली विश्व-विद्यालय का शोध प्रबंध।

अंग्रेजी में लिखित हिन्दी साहित्य का इतिहास

1. द माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान—सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, 1889 ई०।
2. ए स्केच ऑफ हिन्दी लिटरेचर—एडविन ग्रीव्ज़, 1918 ई०।
3. ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दी लिटरेचर—एफ० ई० केई, 1920 ई०।
4. हिन्दी लिटरेचर—डा० राम अवध द्विवेदी, अंग्रेजी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

8

□□□

हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की समस्यायें और उनका समाधान

हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखन की समस्याओं पर विचार करने के पहले यह आवश्यक है कि 'हिन्दी' और 'साहित्य' इन दोनों शब्दों की अर्थ-व्यापकता पर हम एक स्पष्ट और स्वच्छ दृष्टि बना लें।

भाषा की दृष्टि से आज हिन्दी के दो अर्थ स्पष्ट हैं। एक सामान्य और व्यापक अर्थ है, जिसके अनुसार हरियाना, हिमांचल प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार इन सात राज्यों में दैनिक उपयोग की भाषा को हम हिन्दी कहते हैं, यद्यपि स्थान-भेद से उसमें परस्पर बहुत भेद है। इस विस्तृत क्षेत्र को हम हिन्दी भाषा-भाषी-प्रदेश कहते हैं। आज इस समस्त क्षेत्र में जन-साधारण की शिक्षा अखबार, कचहरी, लेन-देन की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है। इस समस्त क्षेत्र में पिछले एक हजार वर्षों में जो विपुल साहित्य रचा गया है, वह हिन्दी का ही साहित्य समझा जाता है। इसी व्यापक अर्थ में हम चन्द बरदाई, विद्यापति, कबीर, जायसी, तुलसी, सूर एवं मैथिलीशरण गुप्त को हिन्दी का कवि समझते हैं और इनकी रचनाओं का आस्वाद लेते हैं। इस अर्थ में हिन्दी कोई एक भाषा न होकर अनेक विभाषाओं का समुच्चय है, जिसमें ब्रजबुलि, मैथिली, भोजपुरी, अवधी, ब्रजी, राजस्थानी, खड़ी बोली, दक्खिनी, उर्दू एवं हिन्दुस्तानी आदि ऐसी विभाषाएँ हैं जिनका अपना विपुल साहित्य है। इन साहित्य-सम्पन्न विभाषाओं के अतिरिक्त इनके भीतर बहुत सारी बोलियाँ भी हैं, जिनका कोई विशिष्ट साहित्य तो नहीं है, थोड़ा-बहुत लोक-साहित्य तो सभी का है। इन बोलियों में मगही, बुंदेली, कन्नौजी, पहाड़ी, बाँगड़ू आदि हैं।

दूसरा—हिन्दी का एक विशिष्ट और सीमित अर्थ भी है। यह भाषा-वैज्ञानिक अर्थ है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी-समूह की ऊपर वर्णित सभी विभाषाओं में से एक विभाषा-विशेष को ही हम हिन्दी कहते हैं। यह विभाषा खड़ी बोली है। यों खड़ी बोली की भी जड़ उतनी ही पुरानी है जितनी पुरानी हिन्दी समूह की अन्य विभाषाओं मैथिली, अवधी, ब्रजी एवं राजस्थानी की है। इन सबका विकास एवं निकास अपभ्रंश

से हुआ है। पर खड़ी बोली बहुत दिनों तक बोल-चाल की ही भाषा बनी रही, इसका कोई साहित्य नहीं बन सका। अंग्रेजी हुकूमत के साथ-साथ जब वैज्ञानिक युग का पुनर्जागरण प्रारम्भ हुआ, गमनागमन के साधन बढ़े, मुद्रण-ग्रन्थों का प्रचार-प्रसार हुआ, लिखने-पढ़ने में गद्य का प्रसार हुआ, तभी से खड़ी बोली की समृद्धि प्रारम्भ हुई। इसे भारतेंदु हरिश्चंद्र ने गद्य के क्षेत्र में पूर्ण प्रतिष्ठित कर दिया और महावीर प्रसाद द्विवेदी ने पद्य के भी क्षेत्र में, जहाँ अब तक व्रजी का ही अबाध व्यवहार होता चला आया था, इसे सिंहासनासीन कर दिया। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से खड़ी बोली ही हिन्दी है। राजस्थानी, अवधी, व्रजी, भोजपुरी, मैथिली आदि हिन्दी नहीं हैं। यह खड़ी बोली हिन्दी ही हिन्द की राष्ट्रभाषा है। इसी के गद्य रूप का समस्त भारत के अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों एवं विदेशों में प्रचार वांछनीय है। भाषा-विज्ञान वाले इस अर्थ में यदि हिन्दी को रंक कहें और इसे केवल पिछले सौ वर्षों की सृष्टि कहें, तो वे कह सकते हैं, सही और गलत बोलने का सभी को अधिकार है, पर किसी बात को पूर्णतया बिना जाने हुए कोई फतवा नहीं दिया जा सकता। खड़ी बोली का हिन्दी गद्य मे लिखा वाङ्मय किसी भी अन्य भारतीय भाषा के वाङ्मय से हेय नहीं है। इसकी समृद्धि ज्ञान-विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ती जा रही है और हर दिशा मे यह समुन्नत हो रही है।

जब हम हिन्दी साहित्य का पठन-पाठन करते हैं, तब हिन्दी को व्यापक अर्थ में ही ग्रहण करते हैं, भाषा-विज्ञान वाले सीमित अर्थ में। हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों में इस व्यापक अर्थ मे हिन्दी साहित्य के पठन-पाठन की व्यवस्था पूर्ववत बनी रहनी चाहिए। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में केवल खड़ी बोली का साहित्य, विशेषकर गद्य में लिखित साहित्य, पढ़ाकर काम चलाया जाना चाहिए। अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के वे विद्यार्थी, जिन्हें हिन्दी साहित्य में विशेष अभिरुचि है, हिन्दी-भाषा-भाषी विश्वविद्यालयों में आकर हिन्दी साहित्य का विशेष अध्ययन कर सकते हैं।

हिन्दी साहित्य के जो भी इतिहास अभी तक लिखे गए हैं, वे हिन्दी के व्यापक अर्थ को ही लेकर। हिन्दी वालों ने कभी भी अपने को खड़ी बोली तक सीमित नहीं रखा।

अब रहा 'साहित्य' पर विचार। 'साहित्य' और 'वाङ्मय' दो शब्द हैं। किसी भी विषय पर, किसी भी भाषा में, जो कुछ लिखा जाता है, वह उस भाषा के वाङ्मय के अन्तर्गत आता है। ज्ञान-विज्ञान का कोई भी कोना इससे अछूता नहीं रहता। इसमें इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र, राजनीति, दर्शन आदि मानविकी के सभी विषय एवं भौतिकी, रसायन, गणित, सांख्यिकी, वानस्पतिकी, जैविकी, अभियंत्रण, भेषज आदि सभी ज्ञान-विज्ञान के विषय समाविष्ट हो जाते हैं। अंग्रेजी में इसी व्यापक अर्थ में 'लिटरेचर' शब्द का प्रयोग होता है। हिन्दी में भी कभी-कभी इस व्यापक अर्थ में 'साहित्य' शब्द का प्रयोग कर दिया जाता है, पर ऐसे प्रयोग यथासम्भव न किए जायँ तो अच्छा। अंगरेजी के 'लिटरेचर' के लिए 'वाङ्मय' और 'प्योर लिटरेचर' के लिए 'साहित्य' शब्द का प्रयोग बराबर होता आ रहा है और यह प्रयोग-परंपरा बनी रहनी

चाहिए। 'प्योर लिटरेचर' के लिए 'साहित्य' ठीक है, इसमें 'शुद्ध' अथवा 'ललित' संयुक्त होने की आवश्यकता नहीं।

'साहित्य' के अंतर्गत वे सभी रचनाएँ आ जाती हैं, जिन्हें सभी वर्गों के मनुष्य आनन्द के लिए, रस के लिए, पढ़ते हैं। वकील, डाक्टर, अभियंता, अध्यापक, विद्यार्थी, किसान, शिल्पकार, मजदूर, वणिक सभी इन्हें पढ़कर समान रूप से आनंदित होते हैं। इस साहित्य के अंतर्गत पद्यबद्ध काव्य, गद्य में रचित उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबंध, गद्य काव्य आदि का समावेश होता है। इसी के भीतर आलोचना के सिद्धांत, समीक्षा, जीवन चरित्र, साहित्य के इतिहास, व्याकरण, कोश, भाषा का वैज्ञानिक विवेचन भी लिया जा सकता है। लोक-साहित्य का भी समावेश इसके भीतर हो सकता है। हिन्दी साहित्य के जो भी इतिहास आज तक प्रस्तुत हुए हैं, उनमें साहित्य की परख इसी ललित दृष्टि से की गई।

'हिन्दी' एवं 'साहित्य' के इन अर्थों पर विचार कर लेने के उपरांत अब हम हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की समस्याओं पर विचार करने के लिए अपने को उपयुक्त स्थिति में पाते हैं।

हिन्दी साहित्य के जो भी इतिहास लिखे गए हैं, उनमें मुख्यतया तीन विभाषाओं का ही इतिहास प्रस्तुत हुआ है। पुरानी विभाषाओं में अवधी और ब्रजी का साहित्य विशेष रूप से निरूपित हुआ है। आज का युग तो खड़ी बोली का है ही। इसी में समस्त गद्य पद्य साहित्य प्रस्तुत किया जा रहा है और इसकी अवहेलना करके कोई जायगा कहाँ ? हिन्दी की अन्य विभाषाओं के साहित्य की उपेक्षा ही हुई है। इसका सबसे बड़ा कारण इनकी अनुपलब्धिता रहा है। किसी भी इतिहास लेखक को न तो इन विभाषाओं का विपुल साहित्य सुलभ हुआ और न किसी ने इस दृष्टि से इस पर सम्यक् विचार ही किया।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के आदिकाल में हमारे लेखकों ने विद्यापति को बड़े गौरव का स्थान दिया है। विद्यापति का समय 1380-1460 ई० (सं० 1437-1517 वि०) है।[1] आदिकाल को सं० 1050-1375 तक माना गया है। आदिकाल की समाप्ति के 62 वर्ष बाद कवि उत्पन्न हुआ, फिर भी उसे आदिकाल के अन्दर अभी तक घसीटा जा रहा है। इसका औचित्य क्या है, इसे इतिहासकार ही जानें। विद्यापति की ख्याति कीर्तिलता और पदावली पर निर्भर है। कीर्तिलता अवहट्ट में विरचित है। अवहट्ट अपभ्रंश का पिछला रूप है, उसी का प्ररोह है। आचार्य शुक्ल ने आदिकाल के अन्तर्गत अपभ्रंशकाल प्रकरण में कीर्तिलता का विवेचन करते हुए विद्यापति को जो आदिकाल में ढकेल दिया, सो आज तक उनका उस आदि-कूप से उद्धार नहीं हो सका। शुक्ल जी इस तथ्य से अवगत थे कि विद्यापति ने आदिकाल

1. हिन्दी साहित्य कोश, भाग 2, पृष्ठ 532।

के पचास-साठ वर्ष पीछे (सम्वत् 1460 में वर्तमान) अपनी अवहट्ट कृतियों की रचना की[1] पर वे अपभ्रंश-धारा के बहाव में बह गए और उन्होंने विद्यापति-पदावली को 'फुटकर रचनाएँ' के अन्तर्गत प्रकरण 4 में स्थान दिया।

यहाँ विद्यापति पर कुछ विस्तार से कहा गया है। यह इसलिए नहीं कहा गया है कि इन्हें आदिकाल में 'क्यों' रखा गया। यह कथन तो प्रसंगतः आ गया। मुख्य विषय है मैथिली का। हिन्दी के इतिहासों में मैथिल कवियों में एकमात्र विद्यापति का विवेचन हुआ है। क्या विद्यापति से लेकर आज तक मैथिली में उच्च कोटि के कवि और साहित्यकार हुए ही नहीं। ग्रियर्सन हिन्दी के प्रथम साहित्यकार हैं। वे मिथिला में बहुत दिनों तक सरकारी सेवा में रहे। उन्होंने अपने 'द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिन्दुस्तान' में विद्यापति के अतिरिक्त अन्य अनेक मैथिल कवियों को समाविष्ट किया है। मिश्रबंधुओं ने भी ग्रियर्सन की पद्धति पर चलकर इन मैथिली कवियों को अपने विनोद में स्थान दिया; पर जब आचार्य शुक्ल ने एक बार इनकी छँटनी कर दी तब इनका समावेश पुनः नहीं हो सका। अब यदि मैथिल लोग कहें कि जब हिन्दी वाले अत्यन्त रंक और विपन्न थे तब उन्होंने अपने को सम्पन्न बनाने के लिए मैथिली के कवि विद्यापति को अपने यहाँ परम आदर के साथ ऊँचा आसन दिया, जब वे साहित्य की दृष्टि से सुसम्पन्न हो गए, तब उन्होंने मैथिली साहित्य की अवहेलना कर दी, तो उनका यह कहना अनुचित कैसे कहा जा सकता है। विद्यापति को हिन्दी में लाने का श्रेय न तो मिश्रबंधुओं को है, न आचार्य शुक्ल को। न वे हिन्दी की विपन्नता के कारण ही हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्वीकृत हुए। इन्हें हिन्दी का कवि समझकर हिन्दी में लिया गया और इन्हें हिन्दी में लाने का श्रेय एक विदेशी—सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन को है, एक ऐसे व्यक्ति को है, जिसने सभी भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण किया था, जो भाषा-वैज्ञानिक भी था। शुक्ल जी एवं बाद के इतिहासकारों से भूल यह हुई कि उन्होंने विद्यापति को तो स्वीकार किया, उनकी परंपरा में आने वाले अन्य कवियों—गोविन्ददास, चंदा झा आदि को अस्वीकार कर दिया। इस भूल का परिमार्जन होना चाहिए।

जो बात मैथिली के साथ हुई, वही राजस्थानी के साथ भी हुई। हिन्दी साहित्य का आदिकाल विपन्न था, अतः हमने चंदवरदाई के साथ-साथ अन्य अनेक कवियों को वीरगाथा का रचयिता मानकर आदिकाल के इतिहास को पुष्ट करने का प्रयास किया और यह भी ध्यान नहीं दिया कि इनकी प्राप्त कृतियाँ कितनी प्रमाणिक हैं और इस युग की हैं भी या नहीं। जब हम सम्पन्न हो गए, तब जैसे राजस्थान के पिंगल और डिंगल के कवियों के काव्य-वैभव की हमें अपेक्षा ही नहीं रह गई। हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास में राजस्थान में निर्मित डिंगल पिंगल के साहित्य को समाविष्ट होना

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 26।

ही है। हमारी इसी अनभिज्ञ उपेक्षा के कारण साहित्य-अकादमी में मैथिली अलग मान्यता प्राप्त भाषा हो गई है और राजस्थानी भी हिन्दी से अपने को अलग करने के प्रयास में संलग्न है।

मैथिली के साथ-साथ व्रजबुली पर भी किंचित विचार अपेक्षित है। चैतन्य महाप्रभु के समय में नदिया (नवद्वीप) में काशी के ही समान संस्कृत का बहुत बड़ा विद्यापीठ था। मैथिल ब्राह्मण भी वहाँ संस्कृत के अध्ययन के लिए जाते थे। वे अपने साथ विद्यापति के ललित गीत भी ले गए। इन गीतों को सुनकर महाप्रभु चैतन्यदेव रस-विगलित हो गए। वे इनका उपयोग कीर्तन रूप में करने लगे और विद्यापति के शृंगारी गीत भक्ति के पद बन गए। विद्यापति के अनुकरण पर कुछ बंगाली कृष्ण-भक्त कवियों ने विद्यापति की भाषा (मैथिली) में पद-रचना की। ऐसे कवि मूलतः बँगला के ही कवि हैं, पर उन्होंने शौकिया रूप से कुछ पद मैथिली में भी रच दिए हैं। इन बँगाली कवियों की मैथिली रचना में यत्र-तत्र बँगला भाषा का भी प्रभाव पड़ गया, फिर भी ये रचनाएँ बँगला से भिन्न किसी अन्य भाषा की हैं, जिसे बहुत बाद में अज्ञानवश 'व्रज बुलि' की संज्ञा दी गई। व्रज बुलि न तो व्रज की बोली है, न साहित्य की व्रज-भाषा ही। विद्यापति की मैथिली के अनुकरण में बंगाली भक्त कवियों द्वारा शौकिया विरचित इन पदों में राधाकृष्ण का विलास वर्णित था। बंगाली आलोचकों ने समझा कि यह राधाकृष्ण की भाषा में, व्रज की भाषा में विरचित है, अतः उन्होंने इसे 'व्रज बुलि' नाम दे दिया। व्रज बुलि का साहित्य केवल बंगाल तक सीमित नहीं रहा है। इसके कर्ता कवि नेपाल, असम एवं उड़ीसा में भी हुए हैं। चैतन्य के बाद तो हुए ही, आधुनिक युग में भी इस भाषा के आकर्षण ने बड़े बड़ों को मोहित किया और रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे विश्व कवि ने छद्म नाम से 'भानु सिंहेर पदावली' की रचना की। भानुसिंह—रवीन्द्रनाथ—की यह पदावली व्रज बुलि काव्य का गौरव है। रवीन्द्रनाथ को हिन्दी कवियों में बैठाकर क्या हम गौरवान्वित नहीं हो सकते? व्रज बुलि काव्य की उपेक्षा हमारे अज्ञान के कारण हुई है। हिन्दी में समस्त व्रज बुलि काव्य के एक सुसम्पादित एवं पूर्ण संकलन की नितांत आवश्यकता है। इस ओर आगरा विश्वविद्यालय की कन्हैयालाल माणिकलाल हिन्दी विद्यापीठ दत्तावधान है। असम के महाकवि शंकरदेव की रचनाओं को हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने प्रकाशित भी कर दिया है। इस दिशा में हिन्दी में तीन ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं, जिनमें से दो शोध-प्रबंध हैं। अब हम लोग व्रज बुलि साहित्य से परिचित हो चुके हैं और इसका समावेश हिन्दी साहित्य के इतिहास में होना चाहिए। इस सन्निवेशन से हिन्दी साहित्य का इतिहास श्री-सम्पन्न होगा।

अब आएँ 'दक्खिनी' पर। दिल्ली से जो मुसलमान दक्खिनी हिन्दुस्तान में गए, प्रारम्भ में उनकी पाँच रियासतें कायम हुई—गोलकुंडा, बीजापुर, अहमद नगर, बीदर और बरार। यहाँ के नीचे से ऊपर तक समस्त शासक दिल्ली वाले थे। ये अपने साथ दिल्ली की संस्कृति और दिल्ली की भाषा भी ले गए। दक्खिन में जाकर

इन्होंने फारसी छोड़ दी और दिल्ली की बोलचाल की भाषा में अपना सारा कारोबार करने लगे। इसी भाषा में उन्होंने साहित्य की रचना भी प्रारम्भ कर दी। इस बोली का मूल खड़ी बोली है। इस पर फारसी की पदावली का बहुत हल्का प्रभाव है। इसमें हिन्दी और संस्कृत के ऐसे शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है, जो उर्दू को गढ़ते समय मतलूक (त्यक्त) करार दिए गए और छाँट-छाँटकर निकाल दिए गए, जिससे हिन्दी और उर्दू के बीच खाई बनने लगी। दक्खिनी पर दक्खिन की मराठी आदि भाषाओं का भी किंचित प्रभाव है। वली दक्खिनी के ही कवि हैं। सं० 1780 वि० के आसपास वे दिल्ली आए और यहीं के हो रहे। मियाँ गुलशन की राय से फारसी पदावली का प्रयोग बढ़ाया और हिन्दी संस्कृत शब्दों का परित्याग प्रारंभ किया। इस प्रकार दक्खिनी के प्रसिद्ध कवि वली उर्दू के बाबा आदम हुए।

दक्खिनी हिन्दी का ही एक रूप है। इस ओर हिन्दीवालों का ध्यान गया है। इस दिशा में सबसे पहले डा० बाबूराम सक्सेना ने ध्यान दिया और दक्खिनी को हिन्दी घोषित किया तथा 'दक्खिनी हिन्दी' नाम से एक ग्रन्थ भी लिखा, जो हिंदुस्तानी अकेडमी प्रयाग से प्रकाशित है। दूसरा प्रयास श्रीराम शर्मा का है, जिन्होंने पहले 'दक्खिनी का पद्य और गद्य' (1954 ई०) प्रस्तुत किया, फिर 'दक्खिनी का उद्भव और विकास' पर शोध-प्रबन्ध लिखा। तीसरा प्रयास महापंडित राहुल सांकृत्यायन का है। राहुल जी ने 'दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा' नाम से दक्खिनी के कवियों का परिचय एवं उनके काव्य के चुने नमूने प्रस्तुत किए हैं, जो सं० 2015 वि० में राष्ट्रभाषा परिषद पटना से प्रकाशित है। राहुल जी का यह संग्रह अत्यन्त उपादेय है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में दक्खिनी के साहित्य एवं कवियों का भी सन्निवेश होना चाहिए।

उर्दू हिन्दी का ही फारसी लिपि में लिखित अरबी फारसी शब्दों से समन्वित रूप है। यह कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है। भाषा की पहचान क्रिया, कारक चिह्न, सर्वनाम एवं अव्यय से होती है। संज्ञाएँ उसमें देशी विदेशी सभी हो सकती हैं। उर्दू में मुख्यतया संज्ञाएँ ही विदेशी हैं। अपादान एवं अधिकरण कारकों के फारसी रूप 'अज़' और 'दर' भी यदा-कदा मिल जाते हैं। कुछ विशेषण भी फारसी के मिल जाते हैं। अन्यथा सारी पदावली हिन्दी की है। 'मैं गया' हिन्दी है। इसका उर्दू रूप भी यही होगा। बिना हिन्दी की सहायता के उर्दू का एक भी वाक्य नहीं बन सकता। उर्दू की सृष्टि फारसी के ह्रास-काल में अपना विशेष बिलगाव बनाए रखने के लिए दिल्ली के लालकिले—उर्दू-ए-मुअल्ला—में रईसों, अमीरों द्वारा मुहम्मदशाह रंगीले के ज़माने में की गई। बिलगाव का सबसे बड़ा सहारा फारसी लिपि हुई। कालांतर में राजनीति ने भी इस बिलगाव की आग को विरोध की हवा दी। यदि उर्दू भी भारत की देवनागरी लिपि में ही लिखी जाती और उस पर राजनीति का कुप्रभाव न पड़ता, तो हिन्दी और उर्दू में आज यह अन्तर न रहता। हिन्दुस्तानी हिन्दी और उर्दू दोनों के समन्वय के लिए ही निकाली गई, पर चूँकि हमारे दिल साफ़ नहीं थे, अतः यह सफल

नहीं हो सकी । भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर अब हिन्दी वाले उर्दू को हिन्दी की एक विभाषा कहने लगे हैं। पर केवल कहने से काम नहीं चलेगा । उर्दू को हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्थान देना होगा और पाठ्य क्रम में भी इसका समावेश करना होगा। उर्दू काव्य का नागरी लिपि में प्रकाशन धड़ल्ले से हो रहा है और हिन्दी वालों ने इसका हार्दिक स्वागत किया है। इस दिशा में प्रथम विराट कार्य पं० राम नरेश त्रिपाठी ने 'कविता कौमुदी' भाग 4 के द्वारा किया था। इसमें 34 प्रमुख उर्दू कवियों का परिचय एवं उनकी कविता के विशद उदाहरण संकलित हैं। अलग-अलग कवियों के तो बहुत से ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। हिन्दी में उर्दू के कई इतिहास भी लिखे जा चुके हैं।

इस प्रकार मैथिली, ब्रजबुली, राजस्थानी, दक्खिनी और उर्दू का हिन्दी के वृहत् इतिहास में उचित समावेश होना चाहिए। अवधी, ब्रजभाषा और खड़ीबोली के साहित्य का तो पूर्ण विवेचन उसमें मिलता ही है।

भाषा की दृष्टि से हिन्दी साहित्य के इतिहास का आदिकाल कुछ उलझा हुआ है। यहाँ अपभ्रंश और पुरानी हिन्दी पर कुछ विचार अपेक्षित है। 'पुरानी हिन्दी' शब्द चंद्रधर शर्मा गुलेरी का दिया हुआ है। हिन्दी, अपभ्रंश से निकली है, स्वयं अपभ्रंश हिन्दी नहीं है। प्रारम्भिक विकासमान हिन्दी पर अपभ्रंश का पूरा प्रभाव है। हिन्दी इस प्रभाव से धीरे-धीरे मुक्त होती गई है। इस विकासमान भाषा को अपभ्रंश का उत्तरकालीन एवं हिन्दी का पूर्वकालीन रूप कहा जा सकता है। 'कीर्ति-लता' की अवहट्ट यही बीच की भाषा है।

महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने 'गंगा' के 'पुरातत्त्वांक' में सिद्धों की कविता को हिन्दी का प्राचीनतम काव्य कहा था और उनके अनुसार मिश्रबंधुओं ने 'मिश्र-बंधु विनोद' में पूर्ण रूप से एवं आचार्य शुक्ल ने अपने सुप्रसिद्ध इतिहास में किंचित हिचक—कास नास—के साथ इन सिद्धों को स्थान दिया है। राहुल जी ने बाद में 'हिन्दी काव्य धारा' प्रथम भाग का संकलन संपादन किया, इसमें अपभ्रंश के कवियों का परिचय और उनके काव्य के उद्धरण दिए गए है। अत्यन्त उत्साह में आकर राहुल जी ने इन्हें हिन्दी की प्राचीनतम निधि कहा है। पर जब उनका उत्साह कुछ ढीला पड़ा, तब उन्होंने इस पोथी का नया नाम 'अपभ्रंश काव्य-धारा' रखना पसन्द किया। मूल प्रस्तावक ही अपने प्रस्ताव को वापस लेने के लिए तैयार हो गया। पर प्रस्ताव साहित्य-सदन में आ गया है और प्रस्ताव प्रस्तावक की मरजी पर नहीं छोड़ा जा सकता। इस पर पर्याप्त विचार-मंथन भी हो चुका है। हम संपूर्ण अपभ्रंश साहित्य को हिन्दी साहित्य के इतिहास में समाविष्ट नहीं कर सकते। साथ ही उस युग में लिखित समस्त साहित्य को छोड़ भी नहीं सकते। आचार्य शुक्ल ने अपने सुप्रसिद्ध इतिहास में अपभ्रंश और देशी भाषा के साहित्य की विवेचना एक साथ की है। एक ही समय में कुछ कवि उस समय की साहित्यिक—परिनिष्ठित—अपभ्रंश में रचना कर रहे थे, कुछ कवि उस समय की बोलचाल की भाषा में, जिस पर अपभ्रंश

का हलका-सा प्रभाव बना हुआ था। इस विभेद को ध्यान में रखते हुए हमें आदि काल में पुरानी हिन्दी का समावेश करना होगा। हमें जहाँ सारे अपभ्रंश साहित्य को हिन्दी में समाविष्ट करने के लोभ की अति से बचना होगा, वहीं उस युग की देशी भाषा में विरचित साहित्य को भी साहित्यिक अपभ्रंश समझकर उसे पूर्णतया परित्यक्त कर देने की अति से भी। हम न तो सरहपा आदि सिद्धों को परित्याग सकते हैं, न पुष्पदन्त और स्वयंभू आदि को परिग्रहण ही कर सकते हैं। यहाँ हमें थोड़ा संयमशील एवं विवेक-सम्पन्न होने की आवश्यकता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के आदिकाल को आचार्य शुक्ल ने 'वीरगाथा काल' कहा था। इस काल के 'वीरगाथा काल' नाम की अनुपयुक्तता पर पूर्ण विचार किया किया जा चुका है और अभी तक इसे प्रवृत्तिमूलक कोई नया नाम नहीं दिया जा सका है। ऐसी दशा में इसका 'आदिकाल' नाम बुरा नहीं है। शुक्ल जी के इतिहास में भी यह नाम मिलता ही है।

'भक्ति काल' प्रवृत्ति-सूचक नाम है। इसका विरोध नहीं हुआ है। यह नाम बना रहना चाहिए। कृष्ण-भक्ति काव्य में अनेक सम्प्रदाय हैं—1. वल्लभ सम्प्रदाय, 2. निम्बार्क सम्प्रदाय, 3. गो० हित हरिवंश का राधा वल्लभ सम्प्रदाय, 4. स्वामी हरिदास का रसिक सम्प्रदाय, 5. चैतन्य महाप्रभु का गौड़ीय या राधारमणी सम्प्रदाय। इन सभी सम्प्रदायों का विपुल साहित्य उपलब्ध है। इनका अलग-अलग उप-अध्यायों में विवेचन होना चाहिए। एक सम्प्रदाय दूसरे से किस अर्थ में भिन्न है, इस पर भी थोड़ा विचार होना चाहिए। हमें दर्शन की गहराइयों में बहुत दूर तक जाने की आवश्यकता नहीं है, पर उसका हल्का आभास तो मिलना ही चाहिए।

हिन्दी में भक्ति काव्य का मूल कारण क्या है? इस सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल की निराशावादी-थियरी का पूर्ण खंडन हो चुका है और उस दक्षिण से भक्ति आंदोलन के आने की बात भी बहु-ज्ञात है जहाँ मुसलमानों का प्रवेश उस समय तक हो ही नहीं सका था। इस पक्ष का स्पष्ट विवेचन आवश्यक है।

रीतिकाल या शृंगार काल के झमेले में पड़ने की बहुत आवश्यकता नहीं। रीतिकाल बहुत प्रचलित नाम है, पर शृंगार काल उससे अधिक व्यापक नाम है। रीतिकाल का विवेचन जिस ढंग से आचार्य शुक्ल ने किया है, उसी ढर्रे पर चलना ठीक है। रसवादी आचार्य, अलंकारवादी आचार्य, छंदवादी आचार्य, सर्वांग निरूपक आचार्य आदि भेदोपभेद कृत्रिम हैं और एक-एक कवि को खंड-खंड करके देखने के लिए प्रेरित करते हैं। कवि या साहित्यकार समग्र होता है, खंड-खंड नहीं। एक कवि का पूर्ण विवेचन एक ही स्थान पर समीचीन है। खंड-खंड करके उसे कई स्थानों पर खींच ले जाना ठीक नहीं। हाँ, परिशिष्ट रूप में सर्वांग-निरूपक, रस-निरूपक, अलंकार-निरूपक, छंद-निरूपक ग्रन्थों की कालक्रमानुसारी पूर्ण-सूचियाँ दी जा सकती हैं। जिन्हें हम रीति कवि समझते हैं, उनके रीतितर ग्रंथ भी बहुत हैं। ऐसे ग्रंथों का विवेचन न तो रीति काव्य का विवेचन करने वाले करते हैं और न रीतितर साहित्यकारों का

विचार करने वाले ही। इस प्रकार हिन्दी का विपुल साहित्य आलोचित एवं विवेचित होने से वंचित हो जाता है।

आजकल किसी काल की पृष्ठभूमि पर विचार करने की प्रवृत्ति बहुत बढ़ गई है। यह पृष्ठभूमि और मूल ग्रंथ में समुचित समानुपात बना रहना चाहिए। पृष्ठभूमि ही प्रधान हो जाय, यह ठीक नहीं। पृष्ठभूमि को विस्तार देने के लिए जब समस्त राजनैतिक या सामाजिक इतिहास ही प्रस्तुत कर दिया जाता है, तब अति हो जाती है। जिन राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक धार्मिक घटनाओं या विचारधाराओं का प्रभाव साहित्य के निर्माण पर पड़ा है, उन्हीं का विवेचन आवश्यक है। समस्त राजवंशों की वंशावलियों एवं समस्त राजनीतिक घटनाओं की उद्धरणी ठीक नहीं।

आज का इतिहास-लेखन भी हवाई होता जा रहा है। प्रवृत्तियों और पृष्ठभूमि पर विशेष बल दिया जा रहा है, कवियों और उनकी कृतियों पर कम। हिन्दी के पुराने कवियों के जीवन-चरित की सामग्री बहुत कम प्राप्त है, जन्म-संवत् और मृत्यु-संवत् तो जाना ही नहीं जा सकता। उनके रचनाकाल का केवल अनुमान किया जा सकता है। पुराने कवियों के सम्बन्ध में इस प्रकार की प्राप्त सामग्री इतिहास-ग्रंथों में मिल जाती है। जिस कवि के ऐतिह्य के सम्बन्ध में जो भी जानकारी सुलभ हो सकी है, मिश्रबंधु विनोद में दे दी गई है; शुक्ल जी ने भी यथासंभव यह सामग्री दी है। जो सिद्धांत इन लोगों ने पुराने कवियों के लिए अपनाया, नए कवियों एवं साहित्यकारों के सम्बन्ध में उसका परित्याग-सा कर दिया है। आधुनिक काल के कवियों एवं साहित्यकारों के बारे में समझ लिया गया है कि इनके बारे में तो सभी लोग परिचित ही हैं, अतः कुछ विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं। जो 1913 ई० में नए थे, वे आज 1978 में पुराने हो गए हैं। उनके ऐतिह्य के सम्बन्ध में, उनकी सम्पूर्ण रचनाओं के सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त करनी हो तो हम कहाँ जायं? यह कहा जा सकता है कि जीवन-चरित इतिहास से अलग एक स्वतन्त्र विधा है—यह तथ्य भी है। इतिहास ग्रन्थ को जीवन-चरित का ग्रंथ नहीं बनाया जा सकता; पर इतिहास भी क्या, जो जीवन की ठोस-भूमि पर न खड़ा हो। बिना सन्-सम्वत् के इतिहास की कल्पना भी नहीं की जा सकती, पर हरिऔध जी ने अपने विशाल ग्रंथ 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास' में एक भी सन्-सम्वत का प्रयोग नहीं किया है। हम श्रम नहीं करना चाहते, अतः न तो आधुनिक साहित्यकारों का जन्मकाल एवं निधनकाल देते हैं, न उनकी रचनाओं की प्रकाशनक्रम से समग्र सूची ही। उसकी हवाई निन्दा-स्तुति करके काम चलाते हैं, क्योंकि इसमें कोई श्रम नहीं करना पड़ता।

मिश्रबंधुओं ने अपने 'मिश्रबंधु-विनोद' में अधिक से अधिक कवियों को समाविष्ट करने का प्रयास किया है; शुक्ल जी ने केवल प्रमुख कवियों को स्थान दिया है। शुक्ल जी के इतिहास की विशेषता उनकी कवियों विषयक आलोचना है। मिश्रबंधुओं के विनोद की विशेषता है अधिकाधिक कवियों का इतिवृत्त संग्रह। हिन्दी के संक्षिप्त इतिहास के लिए शुक्ल जी की पद्धति उपादेय है, पर विशाल एवं वृहत

इतिहास के लिए आवश्यक है कि उसमें समस्त प्राप्त सामग्री का आकलन हो, कोई कवि छोटा हो या बड़ा, इसमें आने से न छूटे। कवि का परिचय, उसके साहित्य का परिचय एवं मूल्यांकन तथा यदि वह प्रकाशित है तो इसकी भी सूचना संकलित होनी चाहिए। इस दृष्टि से हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज रिपोर्टें अक्षय भंडार हैं। मिश्रबंधुओं ने विनोद के प्रणयन में तब तक की प्रकाशित खोज रिपोर्टों का उपयोग किया था। आज विद्वान लोग इन रिपोर्टों के मंथन का कष्ट नहीं उठाना चाहते। इसका परिणाम यह हो रहा है कि गौण कवि तो दूर रहे, अच्छे-अच्छे अनेक कवि इतिहास-ग्रन्थों में समाविष्ट होने से वंचित रह गए हैं और ज्ञात कवियों के सम्बन्ध में जो नवीन सामग्री प्रकाश में आई है, उसका उपयोग नहीं हो पा रहा है। खोज रिपोर्टों का सम्यक् सदुपयोग किया ही जाना चाहिए। हिन्दी के वृहत् इतिहास में मिश्रबंधुओं की तथ्य-संकलनी प्रतिभा एवं आचार्य शुक्ल की आलोचनात्मक प्रतिभा का सम्यक् योग होना चाहिए।

हिन्दी साहित्य के बड़े-बड़े वे इतिहास-ग्रंथ—चाहे एक जिल्द में हों, चाहे अनेक जिल्द में हों—जो अनेकानेक लेखकों के सहयोग से प्रस्तुत किए जा रहे हैं, कभी-कभी परस्पर-विरोधी बातें करते हैं और एक ही ग्रन्थ में ऐसे कथन अशोभनीय प्रतीत होते हैं। प्रधान सम्पादक या तो अपने उत्तरदायित्व से भागता है अथवा वह नाम का ही प्रधान सम्पादक होता है। उसका नाम प्रधान सम्पादक के स्थान पर चला जाता है, और उसे इन ग्रंथों के देखने तक का अवसर नहीं मिलता या नहीं दिया जाता। एक प्रधान सम्पादक होना ही चाहिए, जो अपने उत्तरदायित्व का श्रम-पूर्वक निर्वाह कर सके और जो संपूर्ण साहित्य से यथासंभव अभिज्ञ हो।

इस सम्बन्ध में मेरा खयाल है कि नागरी प्रचारिणी सभा ने जिस प्रकार 'हिन्दी शब्द सागर' के लिए एक विभाग खोल रखा था, उसी प्रकार का एक विभाग वह 'हिन्दी साहित्य के वृहत् इतिहास' के लिए भी खोले, जिसमें तीन चार आदमी स्थायी रूप से सभा में ही रहकर कार्य-रत हों और जो परस्पर विचार-विमर्श भी कर सकें, तथा विशेष प्रकरणों पर अधिकारी विद्वानों का भी सहयोग ले सकें।

वृहत् इतिहास को परिपूर्ण बनाने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि पहले निम्नांकित ढंग के इतिहास प्रस्तुत कर लिए जाएँ—

(क) हिन्दी की विभिन्न विभाषाओं के साहित्यों के इतिहास।

(ख) हिन्दी भाषी विभिन्न राज्यों के हिन्दी साहित्य के इतिहास।

(ग) हिन्दी भाषी प्रदेश के प्रत्येक जनपद में लिखित साहित्य का इतिहास।

(घ) विभिन्न साहित्यिक विधाओं के साहित्य का इतिहास।

इस वृहद इतिहास को निम्नांकित ढंग से आठ जिल्दों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

(क) हिन्दी कविता का इतिहास

1. आदिकाल—800 से 1400 वि०।

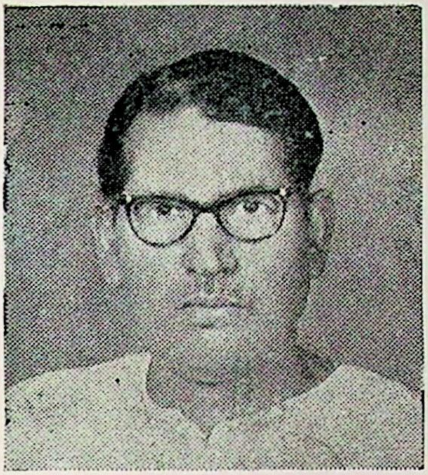
2. भक्ति काल—1400 से 1700।
3. रीतिकाल—1700 से 1930 वि०।
4. आधुनिक काल—1930 से 2030 वि०।

(ख) हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास
1. हिन्दी गद्य का प्रारम्भ से लेकर भारतेन्दु युग तक विकास।
2. हिन्दी कथा-साहित्य का इतिहास।
3. हिन्दी नाट्य-साहित्य का इतिहास।
4. हिन्दी निबंध, शोध, समीक्षा, भाषा विज्ञान, व्याकरण, पाठालोचन, कोश, पत्र-पत्रिका, हिन्दी साहित्य के इतिहास, जीवन चरित, गद्य काव्य, संस्मरण आदि विधाओं के इतिहास।

(ग) हिन्दी का साहित्येतर वाङ्मय।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिहास की संरचना की जाए तो निश्चय ही एक श्रेष्ठ इतिहास की संज्ञा से वह विभूषित हो सकेगा। साथ ही छात्रों को दृष्टि में रखकर उनके स्तरानुकूल भी इतिहास ग्रंथों की रचना होनी चाहिए। हाई स्कूल, इण्टरमीडियट, बी० ए० आदि कक्षाओं के लिए भी अभी श्रेष्ठ इतिहास ग्रंथों की कमी है, उनकी ओर भी लेखकों का ध्यान जाना चाहिए।

———



डा० किशोरीलाल गुप्त

जन्म—ज्येष्ठ सुदी 10 (गंगादशहरा), रविवार, सं० 1973 को सुधँव, वाराणसी में साहूवैश्य परिवार में। हिन्दी और अंग्रेजी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से एम० ए० एवं हिन्दी में आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच० डी० तथा डी० लिट्० उपाधि। 1948 से 1962 तक शिबली नेशनल कालेज आजमगढ़ में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष, तदनंतर जुलाई 1962 से नवम्बर 1975 तक हिन्दू डिग्री कालेज जनखिया, गाजीपुर में प्राचार्य। 28 नवम्बर से 1975 से कार्यमुक्त होकर अब अपने गाँव सुधवँ में ही साहित्य-साधना में रत। अब तक 25 पुस्तकें प्रकाशित और 60 के लगभग प्रकाशन की प्रतीक्षा में। शोध, समीक्षा, प्राचीन काव्य-सम्पादन हिन्दी साहित्य का इतिहास एवं व्रजभाषा-काव्य-रचना में अभिरुचि।

आपकी अनेक कृतियाँ हिन्दी साहित्य में श्रेष्ठ स्थान रखती हैं। आपने अनेक काव्य ग्रंथ तथा समीक्षा ग्रंथ का सम्पादन किया है तथा शैया, श्यामा, राधा (व्रजभाषा में खंड काव्य) काव्य-संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।